******* सद्गुरु

साधना

संग्रह*******

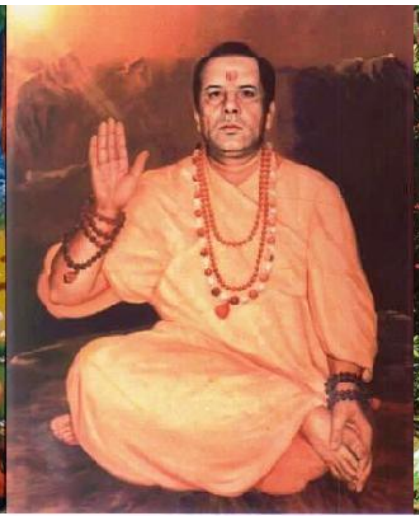
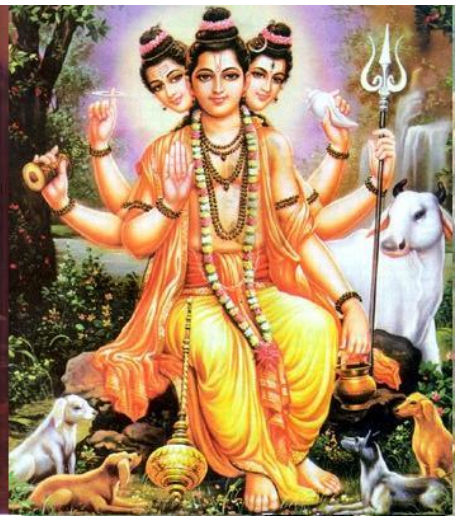

गुरु साधना सिद्धि ही तो
आधार है
समस्त सिद्धियों का

भावना के वश में भगवान होते हैं और एक प्रसिद्ध श्लोक में लिखा है कि -मन्त्र, तीर्थ, वैद्य और गुरु में पूर्ण आस्था ही सिद्धिप्रद कही गई है। सम्पूर्ण हृदय को चैतन्य और जाग्रत कर शंका और तर्क से रहित होकर सच्चे मन से की गई सेवा और आराधना द्वारा गुरु को पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सकता है। यह तो एक सम्मोहन क्रिया है, जिसके द्वारा गुरु शिष्य के वश में हो जाता है और इस साधना में संवाद की आवश्यकता कहां है, गुरु की पैनी दृष्टि तो हर साधक पर, हर क्षण टिकी रहती है और गुरु शिष्य को परखते रहते हैं, उसे नीचे से आधार देकर कुम्हार की तरह ठोकबे-पीटते रहते हैं और उसके पापों का क्षय करते रहते हैं और यही इच्छा रहती है कि शिष्य पूर्ण रूप से सिद्ध हो जाय, ब्रह्मानन्द को प्राप्त हो, उसके चक्रों का भेदन होकर वह सहस्रार सिद्धि प्राप्त करे।

शिष्य द्वारा अपने भटकने की स्थिति में हर एक को गुरु बना लेना उचित नहीं है, आजकल तो बातचीत में मित्र भी आपस में गुरु कहकर सम्बोधन करते हैं। क्या यह उचित है ?

शास्त्रोक्त कथन है कि शिष्य को गुरु बनाने से पहले उसमें छः गुणों को अवश्य ही देखना चाहिए—

१— जो कुलीन, उच्च वर्ण का सौम्य भाव एवं सरल जीवन से युक्त हो।

२— जो शिष्य की समस्याओं को उसकी व्यावहारिक कठिनाइयों को समझता हो, और उन कठिनाइयों को दूर करने का उपाय बताता हो।

३— जिसमें ज्ञान की गरिमा और गम्भीरता हो और अपने प्रवचनों के माध्यम से उस ज्ञान को शिष्यों को प्रदान करता रहे।

४— जो स्वस्थ, उन्नत शरीर का स्वामी हो और गरिमायुक्त हो।

५— जिसमें समस्त प्रकार की सधनाओं का सार हो और किसी एक विषय में नहीं अपितु सभी विषयों में पारंगत हो।

६— और सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह कि जिसके पास बैठने से मन में अपूर्व शान्ति प्राप्त हो।

गुरु महिमा

रुद्रयामल तन्त्र के प्रथम खण्ड में लिखा है कि शिष्य के लिए संसार का आधार गुरु ही है, केवल मात्र गुरु की प्रसन्नता से ही साधक सिद्धाश्रम प्राप्त कर लेता है।

गुरु मूलं जगत् सर्वं गुरु मूलं परं तपः।
गुरोः प्रयास मात्रेण मोक्षपाप्नोति सद्-वशी ।।

मुण्डमाल तन्त्र के पहले पटल पर कहा गया है कि एक मात्र गुरु ही शिष्य को भौतिक एवं आध्यात्मिक सभी कामनाओं को पूर्ण करने वाले परम तत्व हैं और गुरु की प्रसन्नता के बिना करोड़ों साधनाओं तथा पुरश्चरण का कोई फल प्राप्त नहीं होता।

जो साधक गुरु साधना के बिना, केवल पुस्तक के आधार पर साधनाएं और मन्त्र जप करता है, और उसे यदि गुरु कृपा का आधार प्राप्त नहीं है तो उसकी साधना व्यर्थ है। गुरु द्वारा दिये गये शब्द ही साधना का आधार है इसलिए साधक को पूर्ण प्रयत्न कर गुरु की सान्निध्यता अवश्य ही प्राप्त करनी चाहिए।

गुरुदेव तो त्रिगुणात्मक स्वरूप हैं

ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आद्या शक्ति रूप को स्वयं में समाहित किये हुए साधारण आम आदमी सा दिखने वाला व्यक्तित्व अत्यन्त विलक्षण लीलाधारी है, सेवा में रत सेवक, साधक एवं विशिष्ट शिष्यों को भी समय-समय पर भरमाया करते हैं, माया का पर्दा उनकी खुली आंखों पर भी डालते रहते हैं, और यह सब करते हुए बिलकुल अनजान; कभी-कभी पूर्ण अज्ञानी की भूमिका निभाते हुए शिष्य से भी निचले स्तर पर स्वयं को प्रतिष्ठित कर मुस्कराते रहते हैं, अन्दर ही अन्दर कैसी अद्भुत माया है गुरु की, जो सहज ही जानी नहीं जा सकती, चर्म चक्षुओं से गुरु जैसा दिखता है, वैसा है नहीं, अन्तर्चक्षु खुलने पर ही कभी-कभी उसका दिव्य रूप परिलक्षित होता है, साक्षात्कार होता है उसके ब्रह्म रूप से, मगर हर पल गुरु का प्रयास रहता है कि शिष्य उसे समझे नहीं, दिव्य झांकी पाने का उसे पहिचानने का। इस दौर में जिस दिन गुरु अपनी हार स्वीकार कर लेता है, शिष्य का

सौभाग्य उदय होता है, उसके जीवन के पुण्यों का फल उसके समक्ष होता है, गुरु शिष्य को सीने से लगा लेता है, वह सिद्धि जिसे ब्रह्म सिद्धि कहा जाता है, पूर्णता मिलते ही शिष्य शिष्य नहीं रह जाता, गुरुत्व बन कर गुरु की ही आत्मा का पूर्ण चेतन अंश बन जाता है, शिव शिवा रूप में गुरु का वरद हस्त शिष्य के भाल पर आशीर्वाद की वर्षा करता है और यह वरदानमयी बेला ही शिष्य का शृंगार है और जीवन की पूर्णता है।

सांसारिक जीवन में तो नित्य नई बाधाएं आती ही हैं, क्योंकि साधक जब अपने गुरु की खोज में तल्लीन होता है तो उसके पाप कर्म कभी गृहस्थ रूप में, कभी सामाजिक आलोचना के रूप में उसके सामने आकर खड़े होते हैं और उसे रोकते हैं, लेकिन जो व्यक्ति यह ठान लेता है कि मुझे अपने इस जीवन में अपने पूर्व जन्म के गुरु की खोज करनी ही और उनके चरणों में बैठकर पूर्णता से समर्पण कर देना है, तभी वह पूर्ण शिष्य बन सकता है, अपने गुरु को प्राप्त कर सकता है।

जीवन का वास्तविक सौन्दर्य

जीवन में और केवल इस छोटे से ६० साल के जीवन में बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है। जीवन का लक्ष्य और प्रयोजन प्राप्त किया जा सकता है, और यह स्थिति गुरु शिष्य को अपने समीप बैठा कर स्पष्ट करते हैं, इसलिए वह मार्ग दिखाते हैं जिस पर चल कर स्वस्थ और आनन्द युक्त जीवन व्यतीत किया जा सके, उसके बाह्य और अन्तः दोनों शरीर को पवित्र कर आत्मा और ब्रह्म से साक्षात्कार कर सकता है। जिस उद्देश्य के लिए उसका जन्म हुआ है उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए क्या आवश्यक है और किस प्रकार वह अपने उत्तरदायित्वों को पूर्ण रूप से निभा सकता है? यह मार्ग केवल सद्गुरु ही बता सकते हैं।

गुरु से मन्त्र का जन्म होता है, और मन्त्र से देवता उत्पन्न होते हैं, जो शिष्य गुरुमुख से महामन्त्र प्राप्त करता है और जो बीज देवता से उत्पन्न होता है उसको पूर्ण सिद्धि प्राप्त होती है, देवता का शरीर बीज से उत्पन्न होता है, और गुरु की आज्ञानुसार उसकी मुक्ति होती है, इस प्रकार गुरु भावना से तो पूर्णभाव सिद्धि होती है।

मन्त्रे वा गुरुदेवे वा न भेदं यस्तु कल्पते। तस्य तुष्टा जगद्धात्री किन्न वद्यद् दिने दिने ।।

गुरु के प्रसन्न होने पर ही परम प्रभु परमात्मा और देवी भगवती प्रसन्न होती हैं, और गुरु के प्रसन्न न होने पर उनकी कृपा न मिलने पर वे भी रुष्ट हो जाते हैं। इसलिए संसार सागर को पार करने में गुरु ही कर्ता, धर्ता, हर्ता और मोक्ष प्रदान करने वाले हैं।

गुरुः कर्ता गुरुर्हर्ता गुरु माता मही तले। गुरु सन्तोष मात्रेण तुष्टाः स्युः सर्व देवताः ।।
गुरु तुष्टे शिवस्तुष्टौ रुष्टे रुष्टस्त्रिलोचनः। गुरौ तुष्टे शिवे तुष्टा तुष्टे रुष्टा च सुन्दरि ।।

गुरु ही इष्ट

शास्त्रों में गुरु की महिमा को सर्वाधिक क्यों स्वीकार किया गया है? इसलिए कि हमने ईश्वर को देखा नहीं, हमने जगदम्बा भवानी, शिव या विष्णु के दर्शन भी नहीं किये, हम उन्हें पूर्ण रूप से पहिचानते भी नहीं और हमें इस बात का ज्ञान भी नहीं कि उनको प्राप्त करने के लिए क्या करना चाहिए। पर शिष्य और परम पिता

परमात्मा अर्थात् सम्पूर्ण इष्ट के बीच एक कड़ी है जिसे गुरु कहा जाता है। यह गुरु आपको भी पहिचानता है और गुरु का परिचय इष्ठ से भी है। इसलिए गुरु के माध्यम से ही इष्ट तक पहुंचा जा सकता है, उसके सम्पूर्ण स्वरूप के साक्षात् दर्शन किये जा सकते हैं। गुरु के बताये मार्ग पर चल कर ही हम अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त कर सकते हैं, केवल गुरु ही शिष्य को सही दिशा निर्देश दे सकते हैं, उसकी उंगली पकड़ कर सही रास्ते पर चला सकते हैं, इसीलिए शास्त्रों में गुरु के महत्व को एक स्वर से स्वीकार किया गया है।

"गुरु" शब्द कहने का अर्थ

रुद्रयामल तन्त्र में कहा गया है कि गकार सिद्धिदायक है और रेफ पाप का दाह करने वाला है, उकार को शुभ कहा गया है, इस प्रकार इन तीनों के समन्वित स्वरूप को "गुरु" शब्द से सम्बोधित किया गया है।

कंकाल मालिनी तन्त्र के पहले पटल में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि 'गुरु' शब्द के दोनों अक्षर क्रमशः निर्गुण और परब्रह्म हैं, एक प्रकार से कहा जाय तो यह गोपनीय महामन्त्र है, और संसार के सभी मन्त्रों से श्रेष्ठ है।

गुरु तन्त्र में स्पष्ट रूप से बताया गया है कि जिसकी जीभ के अग्रभाग में गुरु शब्द रहता हैं, उसे जीवन में व्यर्थ का कोई मोह नहीं रहता, उसे वेद और शास्त्र पढ़ने की कोई आवश्यकता नहीं रहती, केवल मात्र गुरु' के उच्चारण से ही ब्रह्म हत्या दूर हो जाती है परशुराम अपनी माता के वध से और इन्द्र ब्रह्म हिंसा के पाप से केवल 'गुरु' शब्द के उच्चारण करने से ही मुक्त हुए थे।

गुकार सिद्धिदः प्रोक्तो रेफः पापस्य दाहकः। उकार शम्भुरित्युक्तस्त्रितयात्मा गुरुः स्मृताः॥
निर्गुणं च परं ब्रह्म गुरुरित्यक्षर द्वयम्। महामन्त्र महादेवी गोपनीयं परात्परम्॥
गुरुरित्यक्षरं यस्य जिह्वाग्रे देवि वर्तते। तस्य किं विद्यते मोहः पाठेवदस्व किं वृथा॥
गुकारोच्चारण मात्रेण ब्रह्महत्या व्यपोहति। उकारोच्चारण मात्रेण मुच्यते जन्म पातकः॥

वस्तुतः गुरु की महत्ता और गुरु मन्त्र जप को तन्त्र ग्रन्थों में सर्वाधिक महत्व दिया है।

गुरु कृपा तो निरन्तर प्रवाहित है

जिस दिन शिष्य अपने आप को गुरु चरणों में समर्पित कर देता है गुरु पूजन को आधार बना लेता है तथा गुरु साधना और गुरु मन्त्र उसके रोम-रोम से बोलने लगते हैं, तब शिष्य एक नये सिद्धि के मार्ग पर चल पड़ता है और तब वह "निगुरा" नहीं रहता। गुरु से युक्त हो जाता है, उसके जीवन में वास्तविक सौन्दर्य आ जाता है। मन के भ्रम एक के बाद एक दूर होने लगते हैं, भीतर ही भीतर एक नया प्रकाश उदय होने लगता है।

चिन्तन से, प्राणों से एक स्थिति बन जाती है तो गुरु सिद्धि की स्थिति शिष्य को प्राप्त हो जाती है, प्रेम और भावातिरेक में शिष्य को हृदय से लगा सब कुछ न्यौछावर कर देता है, अपना चिन्तन, अपना ज्ञान, अपनी तपस्या, साधना सिद्धि सब कुछ प्रवाहित कर देता है शिष्य के सिर पर हाथ फेर ब्रह्मरंध्र खोल देता है, दे देता है वह ब्रह्म सिद्धि जिसे योगी, ऋषि-मुनि, देवी-देवता भी पाने को आतुर रहते हैं, ब्रह्म से साक्षात्कार की यही निष्काम सिद्धि, गुरु का आशीर्वाद और वरदान बन जाती है। शिष्य में, सेवक में, साधक में भोग और मोक्ष देकर पूर्णता देने वाली गुरु सिद्धि ही ब्रह्म सिद्धि कही गई है, शत् शत् नमन है, गुरु की अहैतुकी कृपा हो—

ध्यान मूलं गुरु मूर्ति पूजामूलं गुरुर्पदं। वेद मूलं गुरोर्वाक्यं मोक्ष मूलं गुरु कृपा॥

येनोदात्त तपः चयेन सततं सन्यस्तमाभूषितम्,
ब्रह्मानन्द रसेनषिक्त मनसा शिष्याश्च संभाविताः।
ब्रह्माण्डं नवरागरंजित वपुः हस्तामलवद् धृतम्,
सोऽयं भूतिविभूषितः गुरुवरः निखिलेश्वरः पातु माम्॥

जिसने अपने उदात्त तपः पुञ्ज से सन्यास धर्म को विभूषित किया, ब्रह्मानन्द में निरन्तर अभिषिक्त जिसने अपने अनन्त शिष्यों को अमृत सेचन किया, नई नई विभिन्न कलाओं से जिसने ब्रह्माण्ड को 'हस्तामलकवत्' धारण किया है, ऐसे अनन्त विभूतियों से भूषित परम पूज्य गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द मेरी रक्षा करें।

श्री निखिलेश्वरानन्द कवचम्

साधक के लिए अमृत घट स्वरूप

सिद्धाश्रम के सर्वश्रेष्ठ योगी श्रीधरानन्द जी ने इस कवच को ब्रह्माण्ड से प्राप्त किया है। सिद्धाश्रम के प्रत्येक योगी बाहरी बाधाओं और तंत्र प्रयोगों से रक्षा हेतु तथा साधना में सिद्धि प्राप्त करने के लिए अपने सामने परमहंस स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी का चित्र स्थापित करके तथा अपनी भुजा पर श्री निखिलेश्वरानन्द कवच धारण कर इस पाठ का प्रयोग करते हैं, जिससे वे निरन्तर सभी दृष्टियों से उन्नति की ओर अग्रसर होते हैं।

ठीक इसी प्रकार साधक और शिष्य भी निरन्तर अपने पूजा क्रम में इस कवच का पाठ करें तो वह साधक और उसका परिवार शरीर बाधा, राज्य बाधा एवं सभी बाधाओं से मुक्त रहता है।

ॐ अस्य श्री निखिलेश्वरानन्द कवचस्य, श्री मुद्गल ऋषिः। अनुष्टुप् छन्दः। श्री गुरुदेवो निखिलेश्वरानन्द परमात्मा देवता। "महोस्त्वं रूपं च" इति बीजम्। "प्रबुद्धं निर्नित्यमिति" कीलकम्। "अथौ नैत्रं पूर्ण" इति कवचम्। श्री भगवतो निखिलेश्वरानन्द प्रीत्यर्थे पाठे विनियोगः।

करन्यास :-

श्री सर्वात्मने निखिलेश्वराय -अंगुष्ठाभ्यां नमः

श्री मंत्रात्मने पूर्णेश्वराय- तर्जनीभ्यां नमः

श्री तंत्रात्मने वागीश्वराय- मध्यमाभ्यां नमः

श्री यंत्रात्मने योगीश्वराय - अनामिकाभ्यां नमः

श्री शिष्यप्राणात्मने सच्चिदानन्द प्रियाय करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्

अंग न्यासः-

श्रीशेश्वरः हृदयाय नमः,

ह्रीं शेश्वरः शिरसे स्वाहा।

क्लींशेश्वरः शिखायै वषट्,

तंपरेश्वरः कवचाय हुम्

तापेश्वरः नेत्रत्रयाय वौषट्

एकेश्वरः करतल कर पृष्ठाभ्यां अस्त्राय फट्।

रक्षात्मक देह कवचम्

शिरः सिद्धेश्वरः पातु, ललाटं च परात्परः
नेत्रे निखिलेश्वरानन्दः, नासिका नरकान्तकः ।।१।।

कर्णौ कालात्मकः पातु, मुखं मंत्रेश्वरस्तथा।।
कण्ठं रक्षतु वागीशः, भुजौ च भुवनेश्वरः ।।२।।

स्कन्धौ कामेश्वरः पातु, हृदयं ब्रह्मवर्चसः।
नाभिं नारायणो रक्षेत् ऊरू ऊर्जस्वलोऽपि वै। ।३।।

जानुनी सच्चिदानन्दः पातु पादौ शिवात्मकः
गुह्यं लयात्मकः पायात् चित्तं चिन्तापहारकः ।।४।।

गदनेशः मनःपातु, पृष्ठं पूर्णप्रदायकः
पूर्वं रक्षतु तंत्रेशः यंत्रेशः वारुणीं तथा ।।५।।

उत्तरं श्रीधरः रक्षेत् दक्षिणं दक्षिणेश्वरः
पातालं पातु सर्वज्ञः ऊर्ध्वं मे प्राणसंज्ञकः ।।६।।
कवचेनावृतो यस्तु यत्र कुत्रापि गच्छति
तत्र सर्वत्र लाभः स्यात् किंचिदत्र न संशयः ।।७।।

यं यं चिन्तयते त्वार्तं तं तं प्राप्नोति निश्चितं
धनवान् बलवान् लोके जायते सपुपासकः ।।८।।

ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः
नश्यन्ति सर्वविघ्नानि दर्शनात् कवचावृतम् ।।९।।

य इदं कवचं पुण्यं, प्रातः पठति नित्यशः
सिद्धाश्रम पदारूढः ब्रह्मभावेन भूयते ।।१०।।

कवच पाठ पूर्ण करने के बाद साधक नित्य पूजा-क्रम पूर्ण करके गुरु आरती सम्पन्न करें।

गुरु मंत्र साधना

विनियोग - ॐ अस्य गुरु मंत्रस्य ब्रह्म-विष्णु-महेश्वरा ऋषयः गायत्री उष्णिक्-अनुष्टुप छन्दांसि, महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती देवताः, ब्रह्म शाकम्भरी भीमा शक्तयः ब्रह्माण्ड बीजानि, ॐ कीलकं अग्नि वायु सूर्याः तत्वानि ''अमुक'' कार्य सिद्धयर्थे मंत्र जपे विनियोगः।

ऋष्यादि न्यास - इस न्यास को करने से सारा शरीर दिव्य और चैतन्य हो जाता है ।

ॐ ब्रह्म विष्णु महेश्वर ऋषिभ्यो नमः - शिरसि । ॐ गायत्री-उष्णिक्-अनु-ष्टप छन्देभ्यो नमः - मुखे । ॐ महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वती देवताभ्यो नमः - हृदि । ॐ ब्रह्म शाकम्भरी-भीमा-शक्तिभ्यो नमः दक्ष-स्तने । ॐ ब्रह्माण्ड बीजानि नमः-वाम स्तने । ॐ ह्रीं कीलकाय नमः - नाभौ । ॐ अग्नि-वायु सूर्य - तत्वेभ्यो नमः - नेत्रयोः । ॐ ''अमुक'' कार्य सिद्धयर्थे मंत्र जपे विनियोगः नमः - सर्वांगे।

वर्ण मातृका न्यास - इससे गुरु, ब्रह्म स्वरूप बन कर साधक के शरीर में समाहित हो जाते है ।

ॐ ॐ अं आं कं खं गं घं ङं इं ईं - हृदयाय नमः ॐ परम उं ऊं चं छं जं झं ञं ऋं - सिरसे स्वाहा ॐ तत्वाय लृं टं ठं डं ढं णं लृं लृं - शिखायै वौषट् ॐ नारायणाय एं तं थं दं धं नं ऐं - कवचाय हुम् ॐ गुरुभ्यो ओं पं फं बं भं मं औं - नेत्र त्रयाय वौषट् ॐ नमः अं यं रं लं वं शं षं सं हं लं क्षं अंः - अस्त्राय फट् ।

सारस्वत न्यास - इसके करने से शरीर के जड़ता, आलस्य और पाप नष्ट हो जाते है ।

इसमें गुरु मंत्र का जप निम्न स्थानों पर दाहिने हाथ की उंगलियां रखते हुए करें ।

कनिष्ठिका - ६ बार, अनामिका - ६ बार, मध्यमा - ३ बार, तर्जनी - ४ बार, अंगुष्ठ - ६ बार, करतलकरपृष्ठ ६ बार, पृष्ठभाग - ११ बार, मणिबन्ध - ८ बार, हस्त - ९ बार, हृदय - १०. बार, सिर - ११ बार, शिखा - १२ बार, दोनों कवच - ६ बार, दोनों नेत्र - ६ बार, सर्वांग - १५ बार

मातृका न्यास - यह न्यास करने से साधक त्रिकालज्ञ, एवं त्रैलोक्य विजयी हो जाता है ।

ॐ गुरुभ्यो ब्राह्मी पूर्वतो मां पातु । ॐ गुरुभ्यो माहेश्वरी आग्नेय मां पातु । ॐ गुरुभ्यो कौमारी दक्षिणे मां पातु । ॐ गुरुभ्यो वैष्णवी नैऋते मां पातु । ॐ गुरुभ्यो वाराही पश्चिामे मां पातु । ॐ गुरुभ्यो इन्द्राणी वायव्ये मां पातु । ॐ गुरुभ्यो चामुण्डे उत्तरे मां पातु। ॐ गुरुभ्यो महालक्ष्मी ऐशान्ये मां पातु । ॐ गुरुभ्यो व्योमेश्वरी ऊर्ध्वे मां पातु । ॐ गुरुभ्यो सप्त-द्वीपेश्वरी भूमौ मां पातु । ॐ गुरुभ्यो कामेश्वरी पाताले मां पातु ।

ब्रह्म न्यास - इस न्यास से साधक चिरयौवन मय बना रह कर सभी दृष्टियों से पूर्णता प्राप्त करता है ।

ॐ ब्रह्म शून्य आसनायै नमः - पूर्वांगे मां पातु । ॐ विमुक्तायै ज्ञान खड्गे हस्तायै नमः - दक्षिणे मां पातु । ॐ चैतन्य पल्लवायै नमः - पृष्ठे मां पातु । ॐ गुरुवै सर्व सिद्धि हस्तायै नमः - वामांगे मां पातु।

ॐ सर्व सिद्धि प्रदायै नमः-मस्तकादि चरणान्तं मां पातु । ॐ शिष्य प्रियायै नमः - पादादि मस्तकान्तं मां पातु ।

शून्य न्यास - इस न्यास को करने से साधक की मन की सभी कामनाओं की पूर्ति होती है ।

ॐ ब्रह्मणे नमः - पादादि नाभि पर्यन्तं सदा मां पातु । ॐ नारायणाय नमः नाभौ विशुद्धि पर्यन्त मां पातु । ॐ रुद्राय नमः ब्रह्म रन्ध्रान्ते नेत्रयोः मां पातु । ॐ त्रिलोचनाय नमः पादयोः मां पातु । ॐ दिव्याय नमः करयोः मां पातु । ॐ ज्ञानाय नमः नेत्रयोः मां पातु । ॐ दिव्य चेतनायै नमः सर्वांगे मां पातु । ॐ आनन्द-मय परमात्मने नमः परात्पर-देहभागे मां पातु ।

देवी न्यास - इस न्यास को करने से साधक को सिद्धाश्रम प्राप्ति होती है ।

ॐ गुरुवै अष्टादश भुजायै नमः मध्ये मां पातु । ॐ चैतन्य षोडश भुजायै नमः ऊर्ध्व मां पातु । ॐ कालक्षयायै दश भुजायै नमः अधः मां पातु । ॐ शत्रुमर्दनायै नमः हस्तयोः मां पातु । ॐ ज्ञानाय नमः नेत्रयोः मां पातु । ॐ दिव्यायै नमः पादयो मां पातु । ॐ महेशाय नमः सर्वांगे मां पातु ।

वर्ण न्यास - इस न्यास से जीवन के सभी रोग समाप्त हो जाते है ।

ॐ परम नमः - ब्रह्मरन्ध्रे ॐ तत्वाय नमः - दक्ष नेत्रे ॐ नारायणाय नमः वाम नेत्रे ॐ गुरुभ्यो नमः - दक्ष-वाम कर्णे ॐ नमः मुखे ॐ ॐ नमः - सर्वांगे ।

विन्ध्य न्यास - इस न्यास से जीवन के सभी दुख दूर हो जाते है ।

ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।

पैरों से लगाकर सिर तक और सिर से लगाकर पैरों तक ९-९ बार यह मंत्र उच्चारण करते हुए स्पर्श करें ।

व्यापक न्यास - इस न्यास से समस्त देवताओं का सान्निध्य प्राप्त होता है ।

१ - गुरु मंत्र को मस्तक से पैरों तक उच्चारण करते हुए आठ बार जपे ।

२ - ॐ परम-पैरों से मस्तक तक आठ बार जपे ।

३ - ॐ तत्वाय-सामने के भाग पर स्पर्श करते हुए आठ बार मंत्र जपे ।

४ - ॐ नारायणाय - उच्चारण करते हुए सिर पर स्पर्श करते हुए आठ बार मंत्र जपे ।

५ - ॐ गुरुभ्यो-उच्चारण करते हुए पीछे के भाग पर आठ बार मंत्र जपे ।

६ - ॐ नमः - मंत्र उच्चारण करते हुए पूरे शरीर पर आठ बार मंत्र उच्चारण करें ।

षडंग न्यास - इस न्यास को करने से त्रैलोक्य, साधक के वश में हो जाता है ।

ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः हृदयायै नमः
ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः सिरसे स्वाहा
ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः शिखायै वषट्
ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः कवचाय हुम्
ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः नेत्र-त्रयाय वौषट्

इसके बाद ''नारायण'' बीज को गौरवर्ण का ध्यान करते हुए गुरु स्तोत्र का पाठ करें ।

इसके बाद ''गुरुभ्यो'' बीज का शुक्ल वर्ण का ध्यान करते हुए निम्न श्लोक का उच्चारण करें ।

द्विदल कमलमध्ये बद्धसंवित्समुद्रं धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थम् । श्रुतिशिरसिविभान्तं बोधमार्तण्डमूर्ति शमिततिमिरशोक श्रीगुरु भावयामि ।। हृदंबुजे-कर्णिकमध्यसंस्थं सिंहासने संस्थितदिव्यमूर्तिम्। ध्यायेद्गुरु चन्द्रशिलाप्रकाशं चित्पुस्तकाभीष्टवरंदधानम् ।।

इसके बाद ''नमः'' बीज मंत्र का उच्चारण करते हुए निम्न पाठ करें ।

ब्रह्मानन्दं परम-सुखदं केवलं ज्ञानमूर्ति द्वन्द्वातीतं गगन-सदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यम् । एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतं भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरु तं नमामि ।।

इसके बाद मूल षडंग न्यास करें ।

बीज	कर-न्यास	अंग न्यास
ॐ परम	अंगुष्ठाभ्यां नमः	हृदयाय नमः
ॐ तत्वाय	तर्जनीभ्यां नमः	शिरसे स्वाहा
ॐ नारायणाय	मध्यमाध्यां नमः	शिखायै वषट्
ॐ गुरुभ्यो	अनामिकाभ्यां नमः	कवचाय हुम्
ॐ नमः	कनिष्ठिकाभ्यां नमः	नेत्र त्रयाय वौषट्
ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः	करतल - करपृष्ठाभ्यां नमः	अस्त्राय फट् ।

व्यापक न्यास

ॐ ॐ नमः शिरसि ॐ प नमः नेत्रयोः ॐ र नमः ललाटे ॐ म नमः ग्रीवा ॐ त नमः भ्रुवौ ॐ त्वा नमः कर्णयोः ॐ य नमः गण्डयोः ॐ ना नमः मुखे । ॐ रा नमः दन्त-पंक्तयोः ॐ य नमः जिह्वायां ॐ णा नमः स्कन्धयोः ॐ य नमः कण्ठे ॐ गु नमः भुजयोः ॐ रू नमः हृदि ॐ भ्यो नमः पार्श्वयोः ॐ न नमः पृष्ठे ॐ मः नमः नाभौ ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः सर्वांगे

दिक् न्यास

ॐ ॐ प्राच्यै नमः ॐ परम आग्नेय्यै नमः ॐ तत्वाय दक्षिणायै नमः ॐ नारायणाय नैॠत्यै नमः ॐ गुरुभ्यो प्रतीच्यै नमः ॐ नमः वायव्यै नमः ॐ परमतत्वाय नारायणाय ऊर्ध्वायै नमः ॐ गुरुभ्यो नम भूम्यै नमः

इसके बाद मानस पूजन करें ।

मूल मंत्र - ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।

जप समर्पण मंत्र द्वारा जप समर्पण करें ।

****

सद्गुरु दर्शन प्रयोग

सामग्री :- सद्गुरु की मूर्ति या चित्र, शुद्ध घृत का दीपक ।

माला :- स्फटिक माला ।

समय :- दिन या रात का कोई भी समय ।

आसन :- सफेद सूती आसन ।

दिशा :- उत्तर दिशा ।।

जप संख्या : एक लाख ।

अवधि :- जो भी सम्भव हो ।

मंत्र :- ।। ॐ ह्रीं गुरौ प्रसीद ह्रीं ॐ ।।

प्रयोग :- किसी भी गुरुवार को यह प्रयोग प्रारम्भ करना चाहिए प्रातः काल स्नान कर स्वच्छ धोती पहन कर सामने गुरुदेव का चित्र रख और विधि - विधान से पूजा कर मंत्र जप करे, तो मंत्र जप पूरा होने पर गुरु प्रसन्न होते है और वह जिस प्रकार से चाहता है, उस प्रकार से उसकी इच्छा पूरी हो जाती है ।

यदि किसी को अपना गुरु नहीं मिला हो, तो इस प्रयोग से गुरु मिल जाते है, यदि गुरु अप्रसन्न हो तो प्रसन्न हो जाते है और शिष्य अपने गुरु से जो विद्या सीखना चाहता है, वह विद्या गुरु स्वतः ही देने को तैयार हो जाते हैं ।

गुरु - पादुका - पूजन - प्रयोग

शास्त्रों के अनुसार मार्गशीर्ष शुक्ल २ को ''गुरुत्व दिवस'' या ''गुरु पादुका दिवस'' मनाया जाता है ।

एक साधक या शिष्य के जीवन में 'गुरु पादुका दिवस' का सर्वाधिक महत्व है, और वह पूर्ण श्रद्धा, भावना, एवं चिन्तन के साथ ''गुरु पादुका दिवस'' को सपरिवार सम्पन्न करता है ।

गुरु पादुका

गुरु की पादुका साक्षात् गुरुमय होती है, क्योंकि -

पृथिव्या यानि तीर्थानि तानि तीर्थानि सागरे ।
सागरे सर्व तीर्थानां गुरुस्य दक्षिणे पदे ।।

गुरु चरण जल से स्नान कर समस्त तीर्थों के स्नान का फल प्राप्त होता है, इसलिए गुरु के चरणों में धारण की हुई खड़ाऊ या पादुका स्वयं गुरु का साक्षात स्वरुप बन जाती है । गुरु पादुका की उपस्थिति साक्षात् गुरु की उपस्थिति ही मानी गई है । गुरु पादुका स्तवन मूल रूप में गुरु स्तवन ही है, इसीलिए पूरे भारत वर्ष में जितना महत्व गुरु पूर्णिमा का है, उससे भी ज्यादा महत्व ''गुरु पादुका दिवस'' का है ।

भगवान शिव ने पार्वती को समझाते हुए कहा है, कि मात्र गुरु पादुका पूजन करने से साधक की सोलह कलाएं स्वतः विकसित होने लग जाती है, ये सोलह कलाएं निम्न प्रकार से कही गयी है - १ मूलाधार, २ - स्वाधिष्ठान, ३ - मणिपुर, ४ - अनाहत, ५ - विशुद्ध, ६ - आज्ञा, ७ - बिन्दु, ८ - कला पद, ९ - निर्वाधिका, १० - अर्धचन्द्र, ११ - नाद, १२ - नादान्त, १३ - शक्ति, १४ - व्यापिका, १५ - समना, ११६ - उन्मना ।

इन सोलह कलाओं का विकास और कुण्ड़लिनी जागरण होकर जब कुण्ड़लिनी उर्ध्वगामी होती है, तब स्वतः साधक की 'खेचरी मुद्रा' प्रारम्भ हो जाती है और ऐसा होने पर वह शिवात्मक गुरु शिष्य से संबोधित हो जाती है ।

शिष्य को 'गुरु पादुका' प्राप्त कर अपने पूजा स्थान में सम्मान पूर्वक स्थापित कर देना चाहिए, और यह अहसास करना चाहिए कि यह खड़ाऊ या ये पादुकाएं साक्षात ब्रह्ममय गुरु ही सशरीर उपस्थित है ।

साधक ''गुरु पादुका दिवस'' के दिन पूर्ण श्रद्धा के साथ स्नान कर शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण करे, और उत्तर दिशा की ओर आसन बिछा कर अपनी पत्नी के साथ या स्वयं बैठें, सामने श्रेष्ठ लकड़ी की तख्ते पर पीला वस्त्र बिछा कर उस पर गुरु पादुका स्थापित करें, और फिर अपने सामने पूजन सामग्री रख कर गुरु पादुका पूजन कार्य सम्पन्न करें ।

पादुका चिन्तन

साधक या शिष्य अपने दोनों हाथ खड़ाउओं पर रखता हुआ निम्न प्रकार से चिन्तन-उच्चारणा करे -

ॐ गुरुभ्यो नमः ॐ परम गुरुभ्यो नमः ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः ॐ परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ॐ गणपतये नमः ॐ मूल प्रकृत्यै नमः ॐ मण्डूकाय नमः ॐ मूलाधारयै नमः ॐ कालाग्नि रुद्राय नमः ॐ कूर्माय नमः ॐ आधार शक्तये नमः ॐ आनन्दाय नमः ॐ अनन्ताय नमः ॐ पृथ्विव्यै नमः ॐ सुधार्णवाय नमः ॐ मणिद्विपाय नमः ॐ कल्पवृक्षाय नमः ॐ चिन्तामणि गृहाय नमः ॐ हेमपीठाय नमः

इसके बाद बाई तरफ चावल की ढ़ेरी बना कर उस पर एक गोल सुपारी रख कर उसे भैरव मान कर उसकी संक्षिप्त पूजा करें, जिससे कि किसी प्रकार का कोई विघ्न उपस्थित न हो, पूजन के बाद भैरव के सामने हाथ जोड़कर उच्चारण करें -

तीक्ष्णदंष्ट्र महाकाय कल्पान्ते दहनोपम् ।
भैरवाय नमस्तुभ्यं अनुज्ञा दातुमर्हसि ।।

इसके बाद दिशा बंधन करें, फिर आसन पूजन करें -

आसन पूजन

इसके बाद अपने आसन को हटा कर उसके नीचे कुंकुम से त्रिकोण बनावे, और उस पर पुनः आसन बिछा दें, फिर आसन पर जल छिड़कते हुए निम्न उच्चारण करें -

ॐ क्षेत्रपालाय नमः । ॐ पृथ्वीत्यासन-मंत्रस्य मेरुपृष्ठ ऋषिः। सुतलं छन्दः । कूर्मो देवता । आसने विनियोगः ।

ॐ पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना घृता ।
त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरु चासनम् ।।

इसके बाद जो आसन बिछा हुआ है, उस पर निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए आसन पर केसर की पांच बिन्दिया लगावे जिससे कि आसन सिद्धि हो सके ।

ॐ पृथ्विव्यै नमः ॐ अनन्ताय नमः ॐ कूर्माय नमः ॐ विमलाय नमः ॐ योगपीठाय नमः

इसके बाद खड़ाऊ के सामने पांच चावल की ढ़ेरियां बनावें, और उस पर एक एक गोल सुपारी रख कर केसर की बिन्दी लगावे तथा उच्चारण करें -

ॐ गुं गुरुभ्यो नमः ॐ पं परम गुरुभ्यो नमः ॐ पं परात्पर गुरुभ्यो नमः ॐ पं परमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ॐ पं परापर गुरुभ्यो नमः

शरीर गुरु स्थापन प्रयोग

इसके बाद दहिने हाथ से संबंधित अंगों को स्पर्श करते हुए गुरु को अपने पूर्ण शरीर में समाहित करें -

ॐ कूर्माय नमः ॐ वैराग्याय नमः ॐ आधार शक्तये नमः ॐ अनैश्वर्याय नमः ॐ पृथिव्यै नमः ॐ अनन्ताय नमः ॐ धर्माय नमः ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः ॐ ज्ञानाय नमः ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नमः ॐ सवित्रालाय नमः ॐ ऐश्वर्याय नमः ॐ विकारमयकेशरेभ्यो नमः ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः ॐ पंचाशर्णबीजाढ्यकर्णिकायै नमः

इस प्रकार अपने शरीर में गुरु को स्थपित कर अपनें शरीर की संक्षिप्त पूजा करें, सिर पर जल छिड़के सिर के मध्य में केसर की बिन्दी लगावे, हृदय पर केसर का लेप करें, और प्रसन्नता अनुभव करें कि मेरे शरीर के रोम रोम में पूज्य गुरुदेव स्थापित हुए है, जिससे कि मेरी कुण्ड़लिनी स्वतः जागृत होने लगी है ।

इसके बाद खड़ाउ के दाहिनी ओर एक दूसरे लकड़ी के बाजोट पर कलश स्थापित करें, ओर कलश के चारो ओर चारो दिशाओं की ओर केसर की बिन्दी लगाते हुए निम्न मंत्र का उच्चारण करे ।

ॐ पूर्वे ऋग्वेदाय नमः ॐ उत्तरे यजुर्वेदाय नमः ॐ पश्चिमे अथर्व वेदाय नमः ॐ दक्षिणे साम वेदाय नमः

इस प्रकार कलश में चारो वेदों की स्थापना करे और संक्षिप्त पूजर करे

कलश के पास में शंख स्थापित करे, और उसका पूजन करे, शंख के पास ही घण्टा स्थापित करे, और उसका भी पूजन करते हुए निम्न उच्चारण करे -

आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम् ।
घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टा प्रपूजयेत ।।

फिर कलश के आगे बारह चावल ढेरियां बनावे और उस पर एक एक सुपारी रख कर निम्न देवताओं की स्थापना करें ।

१-ॐ कालाग्नि रुद्राय नमः २-ॐ कूर्मायै नमः ३-ॐ पृथिव्यै नमः ४-ॐ धर्माय नमः ५-ॐ ज्ञानाय नमः ६-ॐ वैराग्याय नमः ७-ॐ ऐश्वर्याय नमः ८-ॐ राग्याय नमः ९-ॐ अनन्ताय नमः १०-ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः ११-ॐ आनन्दमयकन्दाय नमः १२-ॐ प्रकृतिमय पत्रेभ्यो नमः

खड़ाउ - विनियोग

ॐ अस्य श्री पादुका मन्त्रस्य दक्षिणामूर्ति ऋषिः गायत्रीछन्दः श्री गुरु देवता प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

इसके बाद खड़ाउ में गुरु प्राण प्रतिष्ठा करते हुए निम्न मंत्र का उच्चारण करें ।

पादुका गुरु मंत्र

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः हंसः शिवः सोहं हंसः स्वरूप निरुपणहेतवे श्री गुरुवे नमः

इसके बाद साधक न्यास करे -

करन्यास

ॐ ह्रां अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः ॐ ह्रूं मध्यमाभ्यां नमः ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॐ ह्रः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः

हृदयादि न्यास

ॐ ह्रां हृदयाय नमः ॐ ह्रीं सिरसे स्वाहः ॐ ह्रूं कवचाय हुं ॐ ह्रै नेत्रत्रयाय वौषट ॐ ह्रौं शिखायै वषट ॐ ह्रः अस्त्राय फट्

फिर गुरु ध्यान करे ।

महा-रोगे महोत्पाते महा-देवी महा-मये ।
महा-पदि महा-पापे स्मृता रक्षति पादुका ।।

तेनाधीनं स्मृतं ज्ञानं पुष्पं पत्तं च पूजितं ।
जिह्वायां वसंते यस्य श्री परा-पादुका-स्मृतिः ।।

भोग भोगार्थिना ब्रह्म-विष्णवी-पद कांक्षिणाम ।
भक्ति रेव गुरौ देवि ''नान्यः पंथा'' इति श्रुतिः

इसके बाद २ अन्य पात्रों में परम गुरु और परमेनिष्ठ गुरु की स्थापना करें, स्थापना में पात्र में चावलों की ढ़ेरी बनाकर उस पर सुपारी रख कर उन्हे परम गुरु और परमनिष्ठ गुरु मानकर उपरोक्त प्रकार से ही न्यास करे फिर उनका ध्यान करें ।

परम गुरु ध्यान

गुरु भक्ति-विहीनस्य तपो विद्या कुल व्रतम् ।
सर्व नश्यन्ति तत्रैव भूषण लोक रंजनम् ।।

गुरु भवत्यग्निना सम्यग् दृग्ध्या सर्व-गतिदंसः
श्वपचो पि परैः पूज्यो न विद्वानपि नास्तिकः ।।

परमेष्ठि गुरु ध्यान

गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गति ।
शिवे रुष्टो गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ।।

पादुका लय पूजन

इसके बाद साधक पादुका लय पूजन करें, जो सामने दोनों पादुकाएं स्थापित की है, दोनों पादुकाओं पर कुंकम से त्रिकोण बनावे, और सूर्य-द्वादस कलाओं में से छः कलाओंकी स्थापना वाम पादुका में तथा छः कलाओं की स्थापना दाहिनी पादुका में स्थापित करें -

वाम पादुका कला स्थापन

१-ॐ तपिन्यै नमः २-ॐ तापिन्यै नमः ३-ॐ ज्वालिन्यै नमः ४-ॐ रुच्यै तमः ५-ॐ सूक्ष्मायै नमः ६-ॐ भोगिन्यै नमः

दाहिनी पादुका कला स्थापन

१-ॐ विश्वायै नमः २-ॐ धूम्रायै नमः ३-ॐ मरीच्यै नमः ४-ॐ बोधिन्यै नमः ५-ॐ धारिण्यै नमः ६-ॐ क्षमायै नमः

इन कलाओं की स्थापना से दोनों पादुकाओं में पूर्ण सूर्य मण्डल स्थापित हो जाता है, इसके बाद दोनों पादुकाओं पर कलश में से जल (अमृत) छिड़कते हुए निम्न सोलह चन्द्र कलाओं की स्थापना करें, जिससे कि इन पादुकाओं में चन्द्र कलाओं के साथ साथ अमृत तत्व का प्रादुर्भाव हो सके ।

१-ॐ अमृतायै नमः २-ॐ मानदायै नमः ३-ॐ पूषायै नमः ४-ॐ तुष्टयै नमः ५-ॐ पुष्टयै नमः ६-ॐ रत्यै नमः ७-ॐ धृत्यै नमः ८-ॐ शशिन्यै नमः ९-ॐ चण्डिकायै नमः १०-ॐ कान्त्यै नमः ११-ॐ ज्योत्स्नायै नमः १२-ॐ श्रियै नमः १३-ॐ प्रीत्यै नमः १४-ॐ अंगदायै नमः १५-ॐ पूर्णायै नमः १६-ॐ पूर्णामृतायै नमः

इस प्रकार करने के बाद बांये हाथ में केसर से चावल रंग कर दाहिने हाथ से थोडे थोडे चावल दोनों पादुकाओं पर डालते हुए निम्न उच्चारण करें -

१-मध्ये श्री कृष्म आवाहयामि स्थापयामि २-दक्षिणे वासुदेवं आवाहयामि स्थापयामि ३-पश्चिमे अनिरुद्धाय नमः आवाहयामि स्थापयामि ४-पूर्वे वैशंपायनाय नमः आवाहयामि स्थापयामि ५-उत्तरे जैमिन्यै नमः आवाहयामि स्थापयामि

इसके बाद जिस पात्र में खड़ाउ हो वह पात्र अपने सिर पर रख कर दोनों हाथों में लेकर साधक निम्न प्रकार से उच्चारण करें -

१-ॐ श्री शंकराचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि २-ॐ विश्वरूपाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि ३-ॐ पद्यापादाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि ४-ॐ हस्तामलकाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि ५-ॐ त्रोटकाचार्याय नमः आवाहयामि स्थापयामि ६-ॐ दत्तात्रेयाय नमः आवाहयामि स्थापयामि ७-ॐ जीवन मुक्ताय नमः आवाहयामि स्थापयामि ८-ॐ नारदं वामदेवं कपिलं आवाहयामि स्थापयामि ।

इसके बाद खड़ाउ पर पुष्प समर्पित करते हुए निम्न उच्चारण करे -

१-ॐ गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि २-ॐ परम गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि ३-ॐ परात्पर गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि ४-ॐ परमेष्ठि गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि ५-ॐ परम गुरवे नमः आवाहायामि स्थापयामि

इसके बाद दोनों हाथों मे पुष्प, अक्षंत, कुंकुम, पुष्प माला लेकर पादुका के ऊपर समर्पित करते हुए उच्चारण करें -

१-ॐ सर्वशास्त्रार्थतत्वज्ञं निखिलेश्वरानन्दाय आवाहयामि स्थापयामि २-ॐ परमानन्दरुपेण स्वामी सच्चिदानंद आवाहयामि स्थापयामि ३-ॐ ब्रह्मण्य रूपेण वेदव्यासाय आवाहयामि स्थापयामि ४-ॐ पूर्णत्व प्रदाय चतुर्मखु ब्रह्मा आवाहयामि स्थापयामि ।

सूक्ष्म गुरुतत्व मंत्र

सर्वथा गुप्त और दुर्लभ द्वादशार्ण सरसी रुह के रूप में जो गुरु मंत्र के बारह वर्ण है, वे निम्न है जो कि ब्रह्माण्ड के गुरुओं का प्रतिनिधित्व करते है साधक को स्फटिक माला से चार माला निम्न ब्रह्माण्ड गुरु मंत्र की जपनी जाहिए ।

॥ स ह फ्रें ह स क्ष म ल व र यू म् ॥

इसमें प्रथम द्वादश वर्ण है अंतिम म् ''वाग्भव'' बीज है, इस प्रकार यह द्वादश वर्ण युक्त मंत्र तुरन्त कुण्ड़लिनी जागरण में पूर्ण रूप से सहायक है । यदि साधक पादुका पूजन कर उपरोक्त गुरु मंत्र (ब्रह्माण्ड गुरु मंत्र) का जप करता है, तो निश्चिय हीं उसकी कुण्डलिनी और सहस्त्रार जागृत होता है, यह प्रमाणिक वचन है ।

इसके बाद 'गुरु पादुका पंचक' का मधुरता के साथ पाठ करें।

****

पूर्व जन्म कृत दोष निवारणार्थ

शमन - प्रयोग

साधको को कई बार प्रयत्न करने पर भी साधनाओं में सफलता नहीं मिल पाती, इसके लिए पांच चिन्तन स्पष्ट है - १ - दीक्षा यदि नहीं हुई २ - दीक्षा के उपरान्त भी यदि गुरु के प्रति आलोचना, भ्रम और संशय है, ३ - जो साधना काल में अपने इष्ट और गुरु में अन्तर समझता है, या पूर्ण हृदय से गुरु-चिन्तन, गुरु पूजा अथवा गुरु मंत्र जाप नहीं कर पाता है, तब भी साधना में सफलता नहीं मिल पाती । ४ - गुरु के बताये हुए कार्यों में शिथिलता बरतना या आज्ञा पालन में न्यूनता रखना ५ - और पिछले जीवन के अथवा इस जीवन के पाप, दोष अधिक हो ।

उपरोक्त कारणों में से प्रथम चार बाधाओं का गुरु की सेवा करने से उनके सान्निध्य में रहने से अथवा उनकी आज्ञा का पालन करने से और निरन्तर गुरु मंत्र जप करने से शमन हो जाता है पांचवे प्रकार के दोष को दूर करने के लिए यह प्रयोग अपने आप में अत्यन्त सशक्त, महत्वपूर्ण और दुर्लभ है ।

यह प्रयोग गुरुवार को किया जाता है, और आठ गुरुवार तक यह प्रयोग सम्पन्न होता है । गुरुवार के दिन साधक-स्नान कर पीली धोती धारण कर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने पूज्य गुरुदेव का अत्यन्त आकर्षक और सुन्दर चित्र स्थापित करे, तथा उनकी भक्तिभाव से पूजा करे । उन्हें नैवैद्य समर्पित करे, सुगन्धित अगरबत्ती प्रजवलित करे, घी का दीपक लगावें, और स्वयं "गुरु रुद्राक्ष" माला धारण कर पूर्ण शुद्ध सात्विक भाव से निम्न प्रयोग सम्पन्न करे -

प्रयोग विधि

साधक तीन बार दाहिने हाथ में जल लेकर पी ले और उसके बाद हाथ धो कर प्राणायाम करे और फिर दाहिने हाथ में जल कुंकुम, पुष्प लेकर संकल्प करे ।

ॐ विष्णु र्विष्णु देशकालौ संकीर्त्य अमुक गोत्रस्य अमुक शर्माऽहम् ममोपरि इह जन्म गत जन्म स्वकृत परकृत-कारित क्रियमाण कारयिष्यमाण-भूत-प्रेत पिशाचादि मंत्र-तंत्र-यंत्र त्रोटकादिजन्यसकलदोष बाधा निवृत्ति पूर्वक पूर्ण सिद्धि दीर्घायुरारोग्यैश्वर्यादि-प्राप्तर्थ शमन साधना प्रयोगमहंच करिष्ये ।

ऐसा कह कर हाथ में लिया हुआ जल सामने रखे हुए पात्र में छोड़ दें और गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से गुरु मंत्र जप करे-

ॐ परमतत्वाय नरायणाय गुरुभ्यो नमः

एक माला मंत्र जप करने के बाद उस रुद्राक्ष माला को गले में धारण कर ले और पूर्व दिशा की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने गुरु चित्र लकड़ी के बाजोट पर स्थापित करे, उस पर शुद्ध घृत का दीपक लगावे, और हाथ में जल लेकर संकल्प करे ।

१. ॐ यो में पूर्ववत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्द मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद पूर्व की ओर मुंह किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे -

पूर्वदिशाकृत गुरु मंत्र

॥ ॐ श्रीं निखिलेश्वरनन्दाय श्रीं ॐ ॥

२ - इसके बाद साधक अग्निकोण की ओर मुंह कर बैठ जाय सामने गुरु का चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे, इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अग्निसाक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शांतिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद अग्निकोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे-

अग्नि दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ऐं ऐं निखिलेश्वरानन्दाय ऐं ऐं नमः ॥

३ - इसके बाद साधक दक्षिण दिशा की ओर मुंह कर बैठ जाय, सामने लकड़ी के बाजोट पर श्वेत वस्त्र बिछा कर गुरु चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा दक्षिण नाशयतु साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद दक्षिण दिशा की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे -

दक्षिण दिशा कृत गुरु मंत्र

ॐ ह्रीं परमतत्वाय निखिलेश्वराय ह्रीं नमः ।।

४ - इसके बाद नैऋत्य दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा नैऋत्य रक्षराज साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद नैऋत्य कोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे -

नैऋत्य दिशा कृत गुरुमंत्र

ॐ क्लीं क्लीं निखिलेश्वरनन्दाय क्लीं क्लीं नमः ।।

५ - इसके बाद साधक उत्तर दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा उत्तर दिशा वरुण साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृत मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद उत्तर दिशा की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे ।

उत्तर दिशाकृत गुरु मंत्र

॥ ॐ श्रीं श्रीं श्रीं निखिलेश्वर्यै श्रीं श्रीं श्रीं नमः ॥

६- इसके बाद वायव्य दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा वायव्य यक्षराज साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद वायव्य कोण की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र जप करे ।

वायव्य दिशा कृत गुरु मंत्र

।।ॐ ऐं ह्रीं श्रीं निखिलेश्वर्यायै श्रीं ह्रीं ऐं ॐ ।।

७ - इसके बाद साधक पश्चिम दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु चित्र स्थापित करे, उसकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीप लगावे, इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा पश्चिम सोम विप्रराज साक्षी भूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शांतिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद पश्चिम दिशा की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला से मंत्र जप करे ।

पश्चिम दिशा कृत गुरु मंत्र

।। ॐ क्रीं निखिलेश्वरानन्दाय क्रीं ॐ ।।

८ - इसके बाद साधक ईशान दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा ईशान पृथुरल साक्षीभूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद ईशान कोणकी ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप करे -

ईशान दिशा कृत गुरु मंत्र

।। ॐ ह्रीं निखिलेश्वर्यै ह्रीं नमः ।।

९ - इसके बाद ऊपर आकाश (अनन्त) दिशा की ओर मुंह कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक लगावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्वगत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अनन्त ब्रह्मा सृष्टिराज साक्षीभूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शांतिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद साधक ऊपर आकाश की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी हुई रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र की एक माला से मंत्र जप करे -

अनन्त (आकाश) दिशा कृत गुरु मंत्र

।। ॐ "निं" निखिलेश्वर्यै "निं" नमः ।।

१० - इसके बाद भूमि की ओर नीचे मुहं कर सामने लकड़ी के बाजोट पर सफेद वस्त्र बिछा कर गुरु का चित्र स्थापित करे, उनकी संक्षिप्त पूजा करे और घी का दीपक जलावे इसके बाद हाथ में जल लेकर संकल्प करे -

ॐ योमे पूर्व गत इह गत पाप्मा पापकेनेह कर्मणा अधः नागराजो साक्षीभूतं निखिलेश्वरानन्दम् मम समस्त दोष पाप भंजयतु भंजयतु मोहयतु नाशयतु मारयतु कलिं तस्मै प्रयच्छतु कृतं मम (अपना नाम उच्चारण करे) गुरु शान्तिः स्वस्त्ययनंचास्तु ।

इसके बाद साधक भूमि की ओर मुंह किये किये ही अपने गले में पहनी रुद्राक्ष माला से निम्न गुरु मंत्र जप करे -

अधः (भूमि) दिशाकृत गुरु मंत्र

।। ॐ निखिलं निखिलेश्वर्यै निखिलं नमः ।।

इसके बाद साधक इस प्रकार दसों दिशाओं से संबंधित प्रयोग सम्पन्न कर पुनः मूल गुरु मंत्र की एक माला मंत्र जप पूर्व दिशा की ओर मुंह कर करे ।

।। ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।।

इस प्रकार एक गुरुवार का प्रयोग सम्पन्न होता है । इस प्रकार साधक आठ गुरुवार इसी प्रकार से प्रयोग सम्पन्न कर लें तो यह दुर्लभ और अद्वितीय प्रयोग सम्पन्न हो जाता है और इसके बाद साधक पूर्णतः पवित्र, दिव्य, तेजस्वी, प्राणश्चेतना युक्त एवं सिद्धाश्रम का अधिकारी होता हुआ, गुरु का अत्यन्त प्रिय शिष्य हो जाता है, और साथ ही साथ उसके पिछले जीवन और इस जीवन के सभी प्रकार के पाप दोष समाप्त हो जाते है ।

यह दुर्लभ प्रयोग प्रत्येक साधक के लिए अपने आप में अद्वितीय है औह साधकों को इसका अवश्य ही लाभ उठाना चाहिए ।

गुरु साधना से अखण्ड लक्ष्मी प्राप्ति

लक्ष्मी प्राप्ति का श्रेष्ठतम प्रयोग तो गुरु साधना के द्वारा ही संभव है । क्योंकि गुरु का तात्पर्य केवल ज्ञान देने वाला नहीं है अपितु जीवन में पूर्णता प्रदान करने वाला है ।

विश्वामित्र ने एक स्थान पर गोपनीय ढंग से स्वीकार किया है, कि गुरु अपने आप में समस्त ऐश्वर्य का अधिपति होता है, अतः गुरु साधना के द्वारा उस ऐश्वर्य को प्राप्त किया जा सकता है ।

विश्वामित्र ने साधनाक्रम को समझाते हुए बताया है कि तीन प्रकार की साधनाएं होती है - १) अधम, (२) मध्यम तथा (३) उत्तम।

उत्तम साधना

उत्तम साधना या उत्तम उपासना वह कही जाती है, जिसमें अपने आपको गुरु के मन और प्राणों में विसर्जित कर देने की क्रिया होती है, साधना के प्रारम्भ में ही उसकी भावना यह होती है, कि मेरी स्थिती नगण्य है, वह अपने दिन भर के कार्य कलाप यह मान कर इस चिन्तन के साथ सम्पन्न करता है, कि यह कार्य गुरुदेव के लिए करना ही है, यह सब कुछ गुरुदेव का ही है, मैं तो इस पूरे कार्य या सम्पति का मात्र ट्रष्टी हूँ, और जो जिम्मेवारी या पारिवारिक कार्य मुझे सौप रखे है, मुझे इसलिए करने है, क्योंकि यह सब कुछ उनका है, और उनके लिए पूर्ण जिम्मेवारी के साथ यह कार्य करते रहना है, ऐसा ही विचार साधना और उपासना के लिए होना चाहिए और ऐसी साधना को 'उत्तम साधना' कहा जाता है ।

साधनाक्रम

विश्वामित्र ने एक अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ लक्ष्मी साधना क्रम स्पष्ट किया जिसके माध्यम से पूर्ण लक्ष्मी सिद्धहोती ही है,

यह साधना केवल मात्र तीन घण्टे की है, जो कि दिपावली की रात्रि को किसी भी समय यह साधना सम्पन्न की जा सकती है, इसमें साधक शुद्धता के साथ स्नान करे श्वेत वस्त्र धारण कर, श्वेत आसन पर उत्तर की और मुंह कर बैठ जाय और अपने सामने गुरु चित्र को स्थापित कर दे, तत्पश्चात अपने शरीर को ही गुरू का शरीर मानात हुआ अपने आपको गुरु में लीन करता हुआ, अपने आज्ञाचक्र में अर्थात दोनों भौहों के बीच 'परम तत्व गुरु' स्थापना करें ।

परम तत्व गुरु स्थापन

ऐं ह्रीं श्रीं अमृताम्भोनिधये नमः । रत्न-द्विपाय नमः । सन्तान-वाटिकायै नमः । हरिचन्दन-वाटिकायै नमः । पारिजात वाटिकायै नमः। पुष्पराग-प्रकाराय नमः गोमेद रत्न-प्राकाराय नमः वज्र रत्न प्राकाराय नमः । मुक्ता-रत्न - प्राकाराय नमः । माणिक्य-रत्न प्राकाराय नमः । सहस्त्र स्तम्भ प्राकारय नमः । आनन्द-वापिकायै नमः । बालातपोद्धाराय नमः। महाश्रृंगार-पारिखायै नमः । चिन्तामणि-गृहराजाय नमः । उत्तरद्वाराय नमः । पूर्व-द्वाराय नमः । दक्षिणद्वाराय नमः । पश्चिम द्वाराय नमः । नाना-वृक्ष-महोद्यानाय नमः । कल्प वृक्ष-वाटिकायै नमः। मन्दार वाटिकायै नमः । कदम्ब-वन वाटिकायै नमः। पद्मराग-रत्न प्राकाराय नमः । माणिक्य-मण्डपाय नमः । अमृत-वापिकायै नमः । विमर्श-वापिकायै नमः । चन्द्रिकोद्वाराय नमः । महा-पद्माटव्यै नमः । पूर्वाम्नाय नमः । दक्षिणा-म्नाय नमः । पश्चिमाम्नाय नमः । उत्तराम्नाय

नमः । उत्तर-द्वाराय नमः । महा-सिंहासनाय नमः। विष्णुमयैक-पंच-पादाय नमः । ईश्वर-मयैक पंच पादाय नमः । हंस-तूल-महोपधानाय नमः । महाविभानिकायै नमः । श्री परम तत्वाय गुरुभ्यो नमः।

इस प्रकार परम तत्व गुरु को अपने आज्ञाचक्र में स्थापित करने के बाद गुरु की द्वादश कलाओं को पात्र में जल अक्षत, कुंकुम लेकर अर्घ्य दें "ऐं ह्रीं श्रीं क्लीं अं सूर्य मण्डलाय द्वादश-कलात्मने अर्घ्य-पात्राय नमः"।

इसके बाद गुरु को पुनः उनकी प्रत्येक कला का पूजन इसी प्रकार अर्घ्य अक्षत, पुष्प आदि लेकर बारह बार जल समर्पित करें।

द्वादश कला पूजन

ऐं ह्रीं श्रीं कं भं तपिन्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं खं बं तापिन्यै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं गं फं धूम्रायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं घं पं विश्वायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ङं नं बोधिन्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं चं धं ज्वालिन्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं छं दं शोषिण्यै नमः । ऐं ह्री श्रीं जं थं वरण्योये नमः । ऐं ह्रीं श्रीं झं तं आकर्षिण्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ञं णं मायायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं टं ढं विवस्वत्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ठं डं हेम-प्रभायै नमः ।

उपरोक्त कला पूजन में "ऐं ह्रीं श्रीं" लक्ष्मी के बीज मंत्र है और इस प्रकार लक्ष्मी के सभी स्वरूप अपने शरीर में समाहित हो जाते है ।

लक्ष्मी प्राप्ति के साथ सुख, सम्मान, संतोष, तुष्टि पुष्टि आदि भी प्राप्त होनी चाहिए तभी तो उस धन का महत्व हैं, तभी उस प्राप्त धन का सही उपयोग है तभी तो जीवन में पूर्ण आनन्द और ऐश्वर्य है, इसीलिए इन द्वादश कला पूजन के बाद पूर्ण ऐश्वार्य के लिये गुरु

को अर्घ्य पात्र में जल, अक्षत, कुंकुम और पुष्प लेकर समर्पित करें। पहले मूल समर्पण करें फिर सोलह कलाओं में भी इसी प्रकार से अर्घ्य पात्र समार्पित करें ।

ऐं ह्रीं श्रीं सौं उं सोम-मण्डलाय षोडशी कलात्मने
अर्घ्य पात्रामृतायनमः ।

इस अर्घ्य को समर्पित करते समय उसका जल थोड़ा थोड़ा करके सोलह बार ग्रहण करें, इसके बाद गुरु की सोलह कलाओं का अर्घ्य पूजन करें ।

सोलह कला पूजन

ऐं ह्रीं श्रीं अं अमृतायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं आं मानदायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं इं तुष्टयै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ईं पुष्टयै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं उं प्रीत्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ऊं रत्यै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ऋं श्रियै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ॠं क्रियायै नमः । ऐं ह्री श्रीं लृं सुधायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं लृं रात्रयै नमः। ऐं ह्रीं श्रीं एं ज्योत्स्नायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं ऐं हैमवत्यै नमः ऐं ह्रीं श्रीं ओं छायायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं औं पूर्णिमायै नमः । ऐं ह्रीं श्रीं अः विद्यायै नमः । ऐ ह्रीं श्रीं वः अमावस्यायै नमः ।

वास्तव में ही यह एक अद्‌भुत और आश्चर्यजनक गुरु लक्ष्मी पूजन हैं जिससे कि पूर्ण समृद्धता और ऐश्वर्यता प्राप्त होती है ।

इसके बाद गुरु के मूल मंत्र का ''ॐ परमतत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः'' मंत्र की एक माला फेरे और फिर अपने शरीर में ही गुरु को समाहित मान कर सामने किसी पात्र में दीपक लगा कर बैठे, बैठे ही समर्पण आमंत्रण समाहित आरती करें ।

पूर्ण सिद्ध आरती

अत्र सर्वानन्द - मये वेन्दव - चक्रे परब्रह्म - स्वरुपिणि परापर - शक्ती - श्रीमहा - गुरु देव - समस्त - चक्र - नायके - सम्वित्ति - रूप - चक्र नायकाधिष्ठिते त्रैलोक्यमोहन - सर्वाशपरि - पूरक - सर्वसंक्षोभकारक - सर्वसौ - भाग्यदायक - सर्वार्थसाधक - सर्वरक्षाकर - सर्वरोगहर - सर्वासिद्धीप्रद - सर्वानन्दरय - चक्र - समुन्मीलित - समस्त - प्रकट - गुप्त - गुप्ततर - सम्प्रदाय - कुल - कौलिनी - निगम - रहस्यातिरहस्य - परापर रहस्य - समस्त - योगिनी - परिवृत - श्रीपुरेशी - त्रिपुरसुन्दरी - त्रिपुर - वासिनी - त्रिपुरा - श्रीत्रिपुरमालिनी - त्रिपुरसिद्धा - त्रिपुराम्बा - तत्तद्यक्रनायिका - वन्दित - चरण - कमल - श्रीमहा - गुरु - नित्यदेव - सर्वचक्रेश्वर - सर्वमन्त्रेश्वर - सर्वविद्येश्वर - सर्वपीठेश्वर - त्रैलोक्यमोहिनी - जगदुप्तत्ति - गुरु - सर्वचक्रमय तन्चक्र - नायका - सहिताः स - मुद्रा, स - सिद्धयः, सायुधाः, स - वाहनाः, स - परिवाराः, सर्वो-पचारेः श्री परमतत्वाय गुरु परापरया सपर्यया पूजितास्तर्पिताः सन्तु ।

इसके बाद हाथ जोड़ कर क्षमा प्रार्थना सम्पन्न करें ।

श्रीनाथादि गुरु - त्रयं गण - पति पीठ त्रयं भैरवं सिद्धौध बटुक - त्रयं पद युगं दूती क्रमं मण्डलम् वीरानष्ट - चतुष्क - षष्टि - नवकं वीरावली - पंचकं, श्रीमन्मालिनी - मंत्रराज - सहितं वन्दे गुरोर्मण्डलम् ।

इस प्रकार पूर्ण लक्ष्मी साधना केवल एक बार किसी भी रात्रि को या दीपावली की रात्रि को सम्पन्न करने से पूर्ण महालक्ष्मी सिद्धी प्राप्त होती हैं ।

****

"निखिलेश्वरानन्द स्तवन साधना"

१. "असंम्भव कार्य को संम्भव करने हेतू प्रयोग"

साधन :- १०८ बार निखिलेश्वरानंद स्तवन का पाठ ११ दिन करें।

२. "मनोवान्छित कामना पूर्ती एवं लक्ष्मी सिद्धि एवं सारा दिन प्रसन्नता पूर्वक बिताने हेतु प्रयोग"

साधना :- नित्य सुबह स्तवन का पाठ करें ।

इस स्तोत्र से बड़ी कोई साधना नहीं है और इस स्तोत्र से बड़ा न तो कोई तत्व है और न ब्रह्म-ज्ञान, न तो कोई भक्ति है और न कोई चिन्तन, केवल मात्र इस स्तोत्र के पाठ करने से ही व्यक्ति अपनी मनोवांछित कामना पूर्ण कर लेता है ॥१०८॥

जो नित्य प्रातःकाल उठ कर एक बार इस स्तोत्र का पाठ कर लेता है, उसका पूरा दिन और पूरी रात प्रफुल्लता, प्रसन्नता और सफलता से युक्त होती है ॥ ११० ॥

इस स्तोत्र में लक्ष्मी तत्व का समावेश है, अतः मात्र इसका पाठ करने से ही जन्म-जन्म की दरिद्रता समाप्त हो जाती है ॥ १११ ॥

****

श्री गुरुगीता

गुरु गीता अत्यन्त गोपनीय रही है, पर उच्चकोटि के साधकों के लिए यह महत्वपूर्ण एवं दुर्लभ कही गई है। जो साधक या शिष्य नित्य एक बार इसका पाठ करते है, उसे प्रत्येक साधना में सिद्धि प्राप्त होती है, और साथ ही साथ इसकी वजह से गुरु की आत्मा से शिष्य की आत्मा का पूर्ण तादात्म्य स्थापित हो जाता है, फलस्वरूप गुरु की साधना का अंश गुरु की तपस्या का अंश और गुरु के ज्ञान का अंश स्वतः साधक को प्राप्त होने लगता है और वह शीघ्र ही साधनाओं में सिद्धि प्राप्त करता हुआ, उच्चकोटि का साधक बन जाता है।

सिद्धाश्रम के समस्त साधकों के लिए प्रातः काल उठ कर गुरु गीता का पाठ करना अनिवार्य हैं।

जो साधक भक्ति-भाव से गुरु-गीता को पढ़ता है अथवा सुनता है या लिखता है, वह समस्त भौतिक और आध्यात्मिक सुखों को प्राप्त करता है। जब सात्विक और शुद्ध गुण शिष्य के अन्दर उतर आते हैं, तब इस गुरु-गीता का ज्ञान स्वाभाविक रूप से उसे चैतन्यता प्रदान करता ही है, अतः नित्य प्रति गुरु-गीता का पठन, मनन तथा चिन्तन शिष्य के लिए एक आवश्यक क्रिया है

॥ गुरुगीता - २१८ ॥

जो साधक गुरु-गीता को लिखकर गुरु-पूजन करता है, उसे मोक्ष की प्राप्ति होती है, इसके प्रभाव से साधक के हृदय में गुरु-भक्ति स्वतः ही उत्पन्न होने लगती है ॥ गुरुगीता - २१९ ॥

संसार में निवास करने वाले सभी प्राणी गुरु-गीता के पाठ से अपनी सभी मनोकामनाओं को प्राप्त करते हैं, यह निश्चित है, अतः शिष्य को चाहिए, कि वह प्रतिदिन इस पावन गुरु-गीता का पाठ करे ॥ गुरुगीता - २२०॥

****

सिद्धाश्रम-गुरु पूजन

संसार का सुविख्यात अद्वितीय साधना-तीर्थ तांत्रिकों, मांत्रिकों, योगियों, यतियों और संन्यासियों का दिव्यतम साकार स्वप्न "सिद्धाश्रम", जिसमें प्रवेश पाने के लिए मनुष्य तो क्या देवता भी लालायित रहते हैं; हजारों वर्ष के आयु प्राप्त योगी जहां साधनारत हैं। सिद्धाश्रम एक दिव्य-भूखण्ड है, जो आध्यात्मिक पुनीत मनोरम स्थली है। मानसरोवर और हिमालय से उत्तर दिशा की ओर प्रकृति के गोद में स्थित वह दिव्य आश्रम— जिसकी ब्रह्मा जी के आदेश से विश्वकर्मा ने अपने हाथों से रचना की, विष्णु ने इसकी भूमि, प्रकृति और वायुमण्डल को सजीव-सप्राण-सचेतना युक्त बनाया तथा भगवान् शंकर की कृपा से यह अजर-अमर है। आज भी वहां महाभारत कालीन भगवान् श्री कृष्ण, भीष्म, द्रोण आदि व्यक्तित्व विचरण करते हुए दिखाई दे जाते हैं।

सिद्धाश्रम अध्यात्म जीवन का वह अन्तिम आश्रय स्थल है, जिसकी उपमा संसार में हो ही नहीं सकती। देवलोक और इन्द्रलोक भी इसके सामने तुच्छ हैं। यहां भौतिकता का बिलकुल ही अस्तित्व नहीं है। सिद्धाश्रम पूर्णतः आध्यात्मिक एवं पारलौकिक भावनाओं और चिन्तनों से सम्बन्धित है। यह जीवन का सौभाग्य होता है, यदि सशरीर ही व्यक्ति वहां पहुंच पाये।

सिद्धाश्रम शब्द ही अपने-आप में जीवन की श्रेष्ठता और दिव्यता है, वहां पहुंचना ही मानव देह की सार्थकता है। जब व्यक्ति सामान्य मानव जीवन से उठकर साधक बनता है, साधक से योगी और योगी से परमहंस बनता है, उसके बाद ही सिद्धाश्रम प्रवेश की सम्भावना बनती है; जिसके कण-कण में अद्भुत दिव्यता का वास है, जिसके वातावरण में एक ओजस्वी प्रवाह है, जिसकी वायु में कस्तूरी से भी बढ़कर मदहोशी है, जिसके जल में अमृत जैसी शीतलता है तथा जिसके हिमखण्डों में चांदी-सी आभा निखरती प्रतीत होती है।

आज भी जहां ब्रह्मा उपस्थित होकर चारों वेदों का उच्चारण करते हैं। जहां विष्णु सशरीर उपस्थित हैं। जहां भगवान् शंकर भी विचरण करते दिखाई देते हैं। जहां उच्चकोटि के देवता भी आने के लिए तरसते हैं। जहां गन्धर्व अपनी उच्च कलाओं के साथ दिखाई देते हैं। जहां मुनि, साधु, संन्यासी एवं योगी अपने अत्यन्त तेजस्वी रूप में विचरण करते हुए दिखाई देते हैं। जहां पशु-पक्षी भी हर क्षण अपनी विविध क्रीड़ाओं से उमंग एवं मस्ती का बोध कराते हैं।

सिद्धाश्रम में गन्धर्वों के मधुरिम संगीत पर अप्सराओं के थिरकते कदम, सिद्धयोगा झील में उठती-टूटती तरंगों की कलकल करती ध्वनि, पक्षियों का कलरव तथा भंवरों के गुंजन . . . सभी में गुरु-वन्दना का ही बोध होता रहता है।

"पूज्यपाद स्वामी सच्चिदानन्द जी" सिद्धाश्रम के संस्थापक एवं संचालक हैं, जिनके दर्शन मात्र से ही देवता धन्य हो जाते हैं, जिनके चरणों में ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र स्वयं उपस्थित होकर आराधना करते हैं, रम्भा, उर्वशी और मेनका नृत्य करके अपने सौभाग्य की श्रेयता को प्राप्त करती हैं। जिनका रोम-रोम तपस्यामय है। जिनके दर्शन मात्र से ही पूर्णता प्राप्त होती है।

सिद्धाश्रम में मृत्यु का भय नहीं है, क्योंकि यमराज उस सिद्धाश्रम में प्रवेश नहीं कर पाते। जहां वृद्धता व्याप्त नहीं हो सकती, जहां का कण-कण यौवनवान् और स्फूर्तिवान् बना रहता है। जहां के जीवन में हलचल है, आवेग है, मस्ती है, तरंग है। जहां उच्चकोटि के ऋषि अपने शिष्यों को ज्ञान के सूक्ष्म

सूत्र समझा रहे होते हैं। कहीं पर साधना सम्पन्न हो रही है, कहीं पर मंत्रों के मनन-चिन्तन हो रहे हैं, कहीं पर यज्ञ का सुगन्धित धूम्र चारों ओर बिखरा हुआ है। जहां श्रेष्ठतम पर्णकुटीर बनी हुई हैं, उनमें ऋषि, मुनि और तापस-गण निवास करते हैं।

सिद्धाश्रम जो दया का सागर है। जहां करुणा की गंगा बहती है। जहां पुण्य सतत प्रवहमान है। जहां कल्पवृक्ष समस्त मनोकामनाओं को पूर्णता देने में समर्थ है। जहां कामधेनु स्वयं सशरीर उपस्थित होकर अभीप्सित कामनाएं देती है। जहां गंगा आदि देव नदियां साकार होकर प्रवहमान हैं।

सिद्धाश्रम समस्त संसार की धड़कन है, आध्यात्मिक चेतना का आधार है, देवलोक का हृदय है. . . देवताओं की पुण्य भूमि है, ऋषियों की तपःस्थली है।

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद गुरुदेव "स्वामी निखिलेश्वरान्द जी" जहां विद्यमान हैं, उस सिद्धाश्रम की तुलना किसी भी लोक से नहीं की जा सकती। सिद्धाश्रम के अनन्य योगी निखिलेश्वरानन्द जी का नाम ही जीवन की पूर्णता और दिव्यता है, जो साक्षात् आराधना और साधना का जीवन्त स्वरूप हैं, जिनका नाम ओठों पर आते ही, उनकी सूक्ष्म रूप में उपस्थिति भासित होने लग जाती है, जिनका स्वरूप देवमय है।

जिन्होंने ब्रह्मज्ञान को पूर्णता के साथ स्पष्ट किया है, जिन्होंने मंत्रों के माध्यम से देवताओं को सशरीर उपस्थित होने के लिए बाध्य किया है, जिन्होंने आध्यात्मिक क्षेत्र में नित्य नवीन प्रयोग करके सिद्ध कर दिया है, कि आज भी मंत्र सार्थक हैं, आज भी वे प्रामाणिक और प्राणश्चेतना युक्त हैं।

जिन्होंने परमहंस स्वामी सच्चिदानन्द जी का प्रधान शिष्य बनने का सौभाग्य प्राप्त किया है, एक चेतनाहीन सिद्धाश्रम को सप्राण और ऊर्जस्विता युक्त बनाया है। वे मृत्यु लोक और विभिन्न लोकों में समान रूप से गतिशील हैं। जिनके आने से सिद्धाश्रम में प्राणश्चेतना जाग्रत हो जाती है। जिस पर उनकी एक बार कृपा दृष्टि हो जाती है, वह अपने-आप को धन्य अनुभव करने लग जाता है। जहां प्रत्येक संन्यासी अनुभव करते हैं, कि ऐसा पुण्यदायक

व्यक्तित्व हजारों वर्षों बाद ही उत्पन्न हो पाता है।

इस सिद्धाश्रम की अलौकिकता और दिव्यता का मूल कारण सतत गुरुत्वमय चिन्तन है। गुरु से भिन्न कोई विचार, कोई तर्क, कोई विवाद वहां सम्भव ही नहीं है, समस्त वातावरण ही गुरुमय है, हर कार्य गुरुता से सम्बद्ध है; प्रातः से सायं तक, अथ से इति तक समस्त क्रियाकलाप ही गुरुत्व की अभिव्यक्ति का साकार रूप हैं।

सिद्धाश्रम गुरुत्व का पर्याय है, केवल गुरु ही लक्ष्य है, गुरु ही देव है, गुरु ही वहां की आराधना, साधना और अर्चना है। उसी की स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए वहां नित्यप्रति होने वाले गुरु पूजन की प्रक्रिया को साधकों के हितार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है—

साधकों को चाहिए ब्रह्ममुहूर्त में ही उठें, स्नान के बाद स्वच्छ तथा पवित्र वस्त्र धारण करके पूर्वाभिमुख हो बैठ जायें। उपयुक्त पूजन सामग्री सामने रख लें, धूप-दीप जलाकर 'गुरु चित्र' तथा 'गुरु यंत्र' अपने सामने चौकी पर स्थापित कर लें।

मानसोपचार पूजन

पहले मानसोपचार से पूजन सम्पन्न करें—

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि।

(कनिष्ठिका अंगुष्ठाभ्याम् नमः)

हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि।

(अंगुष्ठ तर्जनीभ्यां नमः)

यं वाय्वात्मकं धूपम् आघ्रापयामि।

(तर्जनी अंगुष्ठाभ्याम् नमः)

रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि।

(अंगुष्ठ मध्यमाभ्याम् नमः)

वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि।

(अंगुष्ठ अनामिकाभ्याम् नमः)

सं सर्वात्मकं ताम्बूलं समर्पयामि।

(अंगुष्ठ सर्वाभिः नमः)

पूजा के लिए सामने छोटी-सी चौकी रखें, उस पर पीला कपड़ा बिछा लें, बीच में किसी पात्र में गुरु यंत्र स्थापित कर लें, दायें भाग में घी का दीपक तथा धूप-पात्र रखें, अपने सामने आचमन-पात्र और पुष्प तथा बाईं ओर नैवेद्य आदि पूजन सामग्री रखें।

आचमन

निम्न संदर्भों को बोल कर दायें हाथ में आचमनी से जल समर्पित करें—

ॐ आत्मतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
ॐ विद्यातत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
ॐ शिवतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
ॐ सर्वतत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

गणपति स्मरण

ॐ लं नमस्ते गणपतये।
त्वं वाङ्मयस्त्वं चिन्मयः।
त्वमानन्दमयस्त्वं ब्रह्ममयः।
त्वं सच्चिदानन्दाद्वितीयोऽसि।
त्वं प्रत्यक्षं ब्रह्मासि।
त्वं ज्ञानमयो विज्ञानमयोऽसि।
सर्वं जगदिदं त्वत्तो जायते।
सर्वं जगदिदं त्वत्तास्तिष्ठति।
सर्वं जगदिदं त्वयि लयमेष्यति।
सर्वं जगदिदं त्वयि प्रत्येति।
त्वं भूमि रापोऽनलोऽनिलो नभः।
त्वं चत्वारि वाक् परिमिता पदानि।
त्वं ब्रह्मा त्वं विष्णुस्त्वं रुद्रस्त्वमिन्द्रस्त्वमग्निस्त्वं

वायुस्त्वं सूर्यस्त्वं चन्द्रमास्त्वं ब्रह्म भूर्भुवः सुवरोम्।

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः।।

धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि।।

विद्यारंभे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा।
संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते।।

श्री मन्महागणाधिपतये नमः।

आसन पूजन

दाहिने हाथ में जल लेकर 'गुं' इस बीज मंत्र से हाथ के जल को अभिमंत्रित करें तथा विनियोग पढ़ें—

ॐ अस्य श्री महा मंत्रस्य पृथिव्याः मेरुपृष्ठ ऋषिः,
सुतलं छन्दः, कूर्मो देवता, आसने विनियोगः।

आसन पर जल छिड़क दें तथा दोनों हाथ जोड़ कर भूमि को नमस्कार करें—

पृथ्वि! त्वया धृता लोका
देवि! त्वं विष्णुना धृता,
त्वं च धारय मां देवि!
पवित्रं कुरु चासनम्।
ॐ योगासनाय नमः,
वीरासनाय नमः, शरासनाय नमः।

आत्म प्राण-प्रतिष्ठा

अपने बायें हाथ पर दाहिना हाथ रखकर अपने भीतर प्राण-प्रतिष्ठ की भावना करें—

ॐ आं हीं, क्रौं मम सर्वेन्द्रियाणि आं हीं
क्रौं मम वाङ्मनस्त्वक् चक्षुः श्रोत्रजिह्वा घ्राण-प्राणा
इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा।

कर न्यास

इसके बाद कर न्यास करें–

ॐ अं कं खं गं घं ङं आं अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ ओं पं फं बं भं मं औं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः
करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

अंग न्यास

विभिन्न अंगों का दाहिने हाथ की उंगलियों से स्पर्श करें–

ॐ अं कं खं गं घं ङं आं हृदयाय नमः।
ॐ इं चं छं जं झं ञं ईं शिरसे स्वाहा।
ॐ उं टं ठं डं ढं णं ऊं शिखायै वषट्।
ॐ एं तं थं दं धं नं ऐं कवचाय हुम्।
ॐ ओं पं फं बं भं मं औं नेत्रत्रयाय वौषट्।
ॐ अं यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अः अस्त्राय फट्।

ध्यान

दोनों हाथ जोड़ कर श्रद्धापूर्वक गुरुदेव का ध्यान करें–

परमं पदेवं गुरुभ्यो पर गुरुभ्यो पारमेष्ठि
गुरुभ्यो मनस त्वक् प्राण गुरुभ्यो नमः।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः ध्यानं समर्पयामि।

"हे गुरुदेव! आप महान् हैं, मैं आपको, परम गुरु को तथा पारमेष्ठि गुरु को इस मनोभाव से नमन करता हूं।"

आवाहन

आवाहन मुद्रा से निम्न मंत्र पढ़ें–

आवाहयामि आवाहयामि,
शरण्यं शरण्यं सदाहं भजामि।
तव नाथमेवं प्रपद्ये प्रसन्नं;
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आवाहयामि समर्पयामि।

आसन

आसन के लिए पुष्प समर्पित करें–

ॐ दिवोवता च श्रियै सः
गुरुर्वै सह हितेनः

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदं पुष्पासनं समर्पयामि।

पूजा विधि

इसके बाद विविध पूजा सामग्री से गुरु चरणों का या चित्र तथा यंत्र का पूजन प्रारम्भ करें–

ॐ श्री गुरवे नमः पादयोः पाद्यं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः हस्तयोः अर्घ्यं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः मुखे आचमनीयं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः सुवर्णकलशच्युत

सकलतीर्थाभिषेकं कल्पयामि नमः।

ॐ श्री गुरवे नमः धौतवस्त्रं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः कुसुममालां कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः तिलकं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः कृष्णाजिनं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः गन्धं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः पुष्पं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः धूपं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः दीपं कल्पयामि नमः।

नैवेद्य

सामने थाली में सुस्वाद भोजन एवं फल आदि सजाकर रखें, उसे मूल मंत्र से प्रोक्षित करें।

गन्ध, पुष्प से अर्चन करके, धेनुमुद्रा द्वारा अमृतीकरण करके समर्पित करें—

ॐ श्री गुरवे नमः नैवेद्यं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः पानीयं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः उत्तरापोशनं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः हस्तप्रक्षालनं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः मुखशुद्धिजलं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः आचमनीयं जलं कल्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः ताम्बूलं कल्पयामि नमः।

गुरु मण्डल पूजन

इन पंक्तियों का उच्चारण करके यंत्र या पादुका पर जल चढ़ायें—

ॐ दिव्यौघगुरुपंक्तये नमः दिव्यौघ गुरुपंक्ति
श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ सिद्धौघ गुरुपंक्तये नमः सिद्धौघ गुरुपंक्ति
श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।
ॐ मानवौघ गुरुपंक्तये नमः मानवौघ गुरुपंक्ति
श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।
ॐ पारमेष्ठि गुरवे नमः, पारमेष्ठि गुरु
श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।
ॐ श्री गुरवे नमः परात्पर गुरु
श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

मूल मंत्र

।।ॐ श्रीं श्रीं गुरुवरप्रदाय श्रीं नमः।।

इस मूल मंत्र का **"स्फटिक माला"** से पांच माला जप करें।

नीराजन

अन्तस्तेजो बहिस्तेजः एकीकृत्यामितप्रभं।
त्रिधादीपं परिभ्राम्य कुलदीपं निवेदये।।
असित गिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धु पात्रे,
सुर तरु वर शाखा लेखिनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं;
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।

जल आरती

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष (गूं) शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वे देवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व (गूं) शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।
ॐ इद (गूं) हविः प्रजननं मे अस्तु दशवीर (गूं) सर्वगण (गूं) स्वस्तये। आत्मसनि प्रजासनि पशुसनि लोकन्यभयसनिः। अग्निः प्रजां बहुलां

मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त।

ॐ सोमो वा एतस्य राज्यमादत्ते यो राजं सन् राज्यो वा सोमेन यजते देव सुषामेतानि हवींषि भवन्ति एतावन्तौ वै देवाना सवाः त एनं पुनः सुवन्ते राज्याय। देवसू राजा भवति।
न तत्र सूर्यो भाति न तारकं नैता; विद्युतो कुतो यमग्निः,
समेन भान्तमनुभाति सर्वं तस्य भासा; सर्वमिदं विभाति।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नीराजनं समर्पयामि।

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में खुले पुष्प लेकर मंत्र बोलें–

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् तेह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान् काम कामाय मह्यम् कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः।

ॐ स्वस्तिः। साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्। सार्वभौमः सर्वायुषः अन्तादापराधात्। पृथिव्यै समुद्रपर्यन्तायाः एकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद।
नाना सुगन्ध पुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पांजलि र्मया दत्ता गृहाण गुरुनायक।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

नमस्कार

दोनों हाथ जोड़ कर प्रणाम अर्पित करें—

गुरुरूपमेवं गुरुर्ब्रह्मरूपं विष्णुश्च रुद्रं देवं वदाम्यं।
गुरुर्वै गुरुर्वै परम पूज्यरूपं गुरुर्वै सदाहं प्रणम्यं नमामि।।

गुरुदेव कारुण्यरूपं सदेवं गुरु आत्मरूपं प्राण स्वरूपम्।
देवस्य रूपं चैतन्यमूर्तिं गुरुर्वै प्रणम्यं गुरुर्वै प्रणम्यम्।।

चरणौ ग्रही पूर्व मदैव रूपं शरण्यै वदान्यै वदनं वदन्तम्।
अश्रुर्वतां पूर्ण मदैव तुल्यं गुरुर्वै गुरुर्वै गुरुर्वै गुरुर्वै।।

सिद्धाश्रमोऽयं परिपूर्णरूपं सिद्धाश्रमोऽयं दिव्यं वरेण्यम्।
आतुर्यमाणमचलं प्रवतं प्रदेयं सिद्धाश्रमोऽयं प्रणमं नमामि।।

सिद्धाश्रमो प्राण मदैव रूपं योगीश्वरोऽयं योगीर्वदेन्यं।
भवतोर्वदेनाथ मदैव रूपं निखिलेश्वरोऽयं प्रणमं नमामि।।

जीवोऽपि देहं निखिलेश्वरोऽयं निखिलेश्वरोऽयं निखिलेश्वरोऽयं।
न शब्दं न वाक्यं न चिन्त्यं वदेन्यं निखिलेश्वरोऽयं निखिलेश्वरोऽयं।।

ज्ञानर्वदां च वदितं ब्रह्माण्डरूपं नित्यं वदैव वहितं सहितं सदेवं।
शब्दोर्वतां व्यर्थ मदैव नित्यं किं पूर्व परवेत वहितं महितं च नित्यं।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः प्रणामाञ्जलिं समर्पयामि।

क्षमा प्रार्थना

न जानामि योगं न जानामि ध्यानं।
न मंत्रं न तंत्रं न योगं क्रियान्वै।।

न जानामि पूर्णं न देहं न पूर्वं।
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

त्वं मातृ रूपं पितृ स्वरूपं।।
आत्मस्वरूपं प्राण स्वरूपं।।

चैतन्य रूपं देवं दिवन्त्रं।
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

मम अश्रु अर्घ्यं पुष्पं प्रसूनं।
देहं च पुष्पं शरण्यं त्वमेवम्।।

जीवोद्वदां पूर्ण मदैव रूपं।
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

त्वं नाथ पूर्णं त्वं देव पूर्णं।
आत्मं च पूर्णं ज्ञानं च पूर्णं।।

अहं त्वां प्रपन्नं प्रपद्ये सदाहं।
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

अनाथो दरिद्रो जरा रोग युक्तः।
महाक्षीणदीनः सदा जाड्य वक्त्रः।।

विपत्ति प्रविष्टः सदाहं भजामि।
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः प्रार्थनां समर्पयामि।

विशेषार्घ्य

हाथ में जल लेकर पुष्प एवं अक्षत मिला लें–

गुरुर्वै गुरोः स प्राण आत्म ब्रह्माण्ड वै प्रचः।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः विशेषार्घ्यं समर्पयामि।

"हे गुरुदेव! आप जीवन के आधार हैं, पथ प्रदर्शक हैं, अन्धकार में प्रकाश रूप हैं, आप मेरे प्राणों में रच-पच जायें।"

सिद्धाश्रम स्तवन

अत्यन्त भाव भरे हृदय से दोनों हाथ जोड़कर स्तवन पाठ करें –

सिद्धाश्रमोऽयं परिपूर्ण रूपं,
सिद्धाश्रमोऽयं दिव्यं वरेण्यम् ।
न देवं न योगं न पूर्वं वरेण्यं;
सिद्धाश्रमोऽयं प्रणम्यं नमामि ।।

दिव्याश्रमोऽयं सिद्धाश्रमोऽयं,
वदनं त्वमेवं आत्मं त्वमेवम् ।
वारन्यरूप पवतं पहितं सदैवं;
सिद्धाश्रमोऽयं प्रणम्यं नमामि ।।

सिद्धाश्रमोऽयं मम प्राण रूपं,
सिद्धाश्रमोऽयं आत्म स्वरूपं ।
सिद्धाश्रमोऽयं कारुण्य रूपं;
सिद्धाश्रमोऽयं प्रणम्यं नमामि ।।

सिद्धाश्रमोऽयं देवत्वरूपं,
सिद्धाश्रमोऽयं आत्म स्वरूपं ।
सिद्धाश्रमोऽयं सिद्धाश्रमोऽयं;
सिद्धाश्रमोऽयं प्रणम्यं नमामि ।।

सिद्धाश्रमोऽयं सिद्धाश्रमोऽयं,
सिद्धाश्रमोऽयं सिद्धाश्रमोऽयं ।
न शब्दं न वाक्यं न चिन्त्यं न रूपं;
सिद्धाश्रमोऽयं प्रणम्यं नमामि ।।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते ।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवाव शिष्यते ।।

ॐ शान्तिः । शान्तिः । शान्तिः ।।

वैदिक-गुरु पूजन

एवं अरे अस्य महतो भूतस्य निःश्वसित।
एतत् यद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरसः।।

अर्थात्– "मनुष्य को जीवित रहने के लिए जिस प्रकार श्वास-प्रश्वास की क्रिया स्वतः सम्भव होती है, उसी प्रकार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद ईश्वर के निःश्वास रूप हैं।"

'वेद' भारतीय संस्कृति का आदि उद्गम स्थल हैं, इस चराचर विश्व में जितने भी ज्ञान, विज्ञान, कलाएं, विद्याएं दृश्यमान हो रही हैं, उन सभी का मूल वेदों में ही निहित है। वेद में समाहित ज्ञान के आलोक से ही यह समस्त धरा आलोकित है, इस प्रकार समस्त ज्ञान का केन्द्र वेद ही हैं, जो सभी के लिए प्रेरणा स्रोत हैं।

वेद में संनिहित ज्ञान के द्वारा निश्चय ही मनुष्य का शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक व आत्मिक विकास सम्भव है, जिसके कारण मनुष्य स्वतः ही उन्नति की ओर अग्रसर होता ही है, यही कारण है कि वेद-ज्ञान को अपने तन-मन में समाहित कर भारतीय मनीषियों ने जीवन के चारों पुरुषार्थ– धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष में पूर्णता प्राप्त कर भारत को विश्व में सर्वोच्चतम स्थान पर अवस्थित किया. . . इसी से भारत को "जगद्गुरु" शब्द से सम्बोधित किया गया है।

यह बात तो चिर सत्य है, कि इस धरा पर बढ़ते हुए पाप-दोष व व्यभिचार के वातावरण को समाप्त करने में और सामाजिक संतुलन बनाये रखने में आध्यात्मिकता का ही पूर्ण योगदान है. . . ऐसा सम्भव करने के लिए भारतीय

ऋषियों ने सदैव प्रयत्न किया है और आज भी कर रहे हैं; उनके प्रयास के फलस्वरूप ही पृथ्वी पर मनुष्य को आत्मिक शांति प्राप्त हुई, और सभी ने एक स्वर से इस विशेषता के कारण ही भारत भूमि को "स्वर्गादपि गरीयसी" जैसे अलंकरण से सुशोभित किया।

भारतीय जीवन क्रम में जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त सभी संस्कार वेद मंत्रों द्वारा सम्पादित होते हैं, प्रत्येक पूजा पद्धति एवं सभी संस्कार वेद पर ही आधारित हैं, इसलिए वेद मंत्र मांगलिक शक्ति और ज्ञान के पुञ्ज हैं; इसीलिये कहा गया है—

- "प्रत्येक मंत्र के उद्घोष पर ऐसा अनुभव होता है, जैसे अनुपम अमृत-सागर लहरा रहा है।"
- "वेद विद्या-बुद्धि का कौतूहल नहीं हैं और पाण्डित्य का विलास भी नहीं हैं, वेद-ज्ञान तो अमृत तत्त्व का साक्षात्कार है।"
- "सभी धर्म एवं ज्ञान का उद्गम स्रोत वेद हैं, जैसे एक महानद से अनेक छोटी-छोटी नदियां निकल कर विभिन्न दिशाओं में बहती हुई पृथ्वी को हरीतिमा युक्त बना देती हैं, ठीक उसी प्रकार समस्त धर्मों का उद्गम वेद से ही है।"
- अरब के प्रसिद्ध कवि 'लाबी' ने लिखा है—"वेद हमारे मन को शीतल ऊषा का प्रकाश देते हैं। परमात्मा ने इन वेदों को प्रकाशित किया, ये वह प्रकाश-स्तम्भ हैं, जो हमें विश्व-भ्रातृत्व की ओर चलने के लिये प्रेरित करते हैं।"

संसार के पथ प्रदर्शन के लिए इन पावन ऋचाओं को पाकर यह मानव कितना स्वर्गीय ज्ञान से ओत-प्रोत रहा होगा, जिसकी आज कल्पना करना भी सुखद प्रतीत होता है। मनुष्य कैसे मनुष्य बने, मनुष्य बनकर परस्पर कैसे व्यवहार करे, ये उदात्त प्रेरणाएं वेद की प्रत्येक ऋचाओं में निहित हैं, जिनके स्वाध्याय से, मनन एवं आचरण से मानवता का विकास हुआ है और होता रहेगा। ज्ञान, कर्म, उपासना और जीवन धर्म की व्यवहारिकता से परिपूर्ण वेद ज्ञान का ही प्रभाव था, कि भारत लाखों वर्षों तक ज्ञान के क्षेत्र में जगद्गुरु बना रहा। आज भी इस देश को उस ज्ञान की आवश्यकता है, जिससे कहीं भी दुःख, दरिद्रता, कष्ट व क्लेश शेष न रहे। इसके लिए अनिवार्य है— जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आनन्द का उपयोग करते हुए हम जीवन की यात्रा को अविराम गति से पार करते रहें; इस जीवन यात्रा में चेतनामय बने हुए यज्ञमय जीवन के द्वारा मोक्ष को लक्ष्य बनायें तथा इस जन्म-मृत्यु के कष्टदायक क्षणों को निरस्त कर सकें।

मानव के पास परम सुख को पाने के लिए अन्य कोई मार्ग नहीं है। ईश्वर

की यह अमरवाणी ऋग्, यजुः, साम तथा अथर्ववेद के रूप में सतत कल्याण-मार्ग का दर्शन करा रही है। वेद प्रतिपादित ज्ञान, कर्म और उपासना मानव कल्याण के सूत्र हैं, आधार हैं।

- अंग्रेज विद्वान् मि० ब्राउन ने लिखा है– "वैदिक धर्म एक वैज्ञानिक धर्म है, जिसमें धर्म और विज्ञान साथ-साथ चलते हैं।"
- प्रो० मैक्समूलर, जो प्रारम्भ में वेदों का कट्टर विरोधी था, जब उसने वेद का अध्ययन किया, तो इनकी उत्कृष्टता पर मुग्ध हो गया और उसने लिखा– "वेद की ऋचाओं में संग्रहीत सूक्ष्म विचार अत्यन्त उच्च हैं, ये ऋषियों से भिन्न किसी अन्य शक्ति द्वारा प्रेरित किये गये प्रतीत होते हैं।"

वेद सर्व विद्याओं का कोश हैं, वेदों में केवल धार्मिक या आध्यात्मिक एवं मोक्ष आदि के सम्बन्ध में ही महत्त्वपूर्ण ज्ञान नहीं दिया गया है, अपितु लौकिक विषय पर भी विस्तार पूर्वक विवेचना की गई है और वे सभी उपाय बताये गये हैं, जिनके द्वारा मनुष्य शारीरिक, मानसिक और आत्मिक सभी दृष्टियों से स्वस्थ एवं सम्पन्न बना रहे।

वेद में निहित ज्ञान का सार है– व्यक्ति पशुत्व से ऊपर उठ कर मनुष्यत्व और फिर देवत्व की भावभूमि की ओर प्रवृत्त हो सके। उसका गृहस्थ जीवन पूर्ण सुख और सौभाग्य युक्त हो। वह समस्त प्रकार के पाप और कुकर्मों से परे हट कर सदाचारी और संयमी बना रहे, जिससे ईर्ष्या, द्वेष, छल एवं कपट जैसी दुर्वृत्तियां उस पर प्रभावी न हो सकें। मानव अपने आत्मिक उत्थान की ओर ध्यान दे और स्वावलम्बी बन कर आगे बढ़े। आत्मविश्वास की दिव्य तरंगें उसके रोम-रोम में तरंगित हों। जब प्रत्येक मनुष्य के अन्दर इन गुणों का विकास होगा, तभी तो सब ओर प्रेम का सरोवर छलछलाता हुआ दिखाई देगा।

यद्यपि आज सारा संसार, विज्ञान प्रदत्त सुख-सुविधाओं से भरा हुआ है, फिर भी प्रत्येक मानव अंतर्मन से अपने-आप को टूटा हुआ एहसास करता है। वह स्वयं को एक अंधकार में भटकता हुआ पाता है और वह एक ऐसी तृष्णा से ग्रसित हो गया है, जिसकी समाप्ति का कोई आसार दिखाई नहीं दे रहा है। ऐसी स्थिति में ही आवश्यकता है पुनः वेद-ज्ञान के आलोक को विस्तारित करने की, तभी मनुष्य अपनी अतृप्त प्यास को बुझा सकेगा।

वेद-ज्ञान की आवश्यकता सदैव रही है और आगे भी बनी रहेगी, क्योंकि मनुष्य कैसे मनुष्य बने, मनुष्य बन कर कैसे परस्पर सद्व्यवहार करे, ये उदात्त प्रेरणाएं

वेद की प्रत्येक ऋचाओं में निहित हैं; जिनके स्वाध्याय, मनन एवं आचरण से मानवता का विकास हुआ, उसे स्थायी बनाये रखने के लिए भी वेद-ज्ञान की आवश्यकता है। वेद-ज्ञान की गंगा में जिसने भी स्नान किया उसने अपना जीवन सफल बना लिया, क्योंकि इस ज्ञान को प्राप्त करने के पश्चात् मन में भ्रम, सन्देह ठहर ही नहीं सकता। प्रभु की इस वाणी से प्रेरणा लेकर जो अपना जीवन निर्धारित करते हैं, वे धन्य हैं। अपने मन की अशान्ति को दूर करने के लिए वेद-मंत्रों का सहारा लेना ही होगा।

आज इस ज्ञान की इतनी अधिक आवश्यकता है जितनी पहले कभी नहीं रही, इस ज्ञान के द्वारा ही आज के इस दूषित वातावरण को स्वच्छ और स्वस्थ बनाया जा सकता है। मध्यकाल में हमारे पतन का मूल कारण इस ज्ञान का लुप्त होना है, और यह ज्ञान तब इसलिए लुप्त हो गया, क्योंकि हमारे पास ऐसे कोई गुरु नहीं रहे जो जन-साधारण को यह ज्ञान दे सकें; यदि थे, तो उन्हें हम पहिचान नहीं पाये और जिन्हें हम गुरु मानते रहे, वे इस ज्ञान से बिलकुल शून्य थे।

पहले ऐसे गुरु की खोज की जानी चाहिए, जो हमें वेद-ज्ञान से परिचित करा सकें, तभी हम पूर्ववत् ऋषि समुदाय के वंशज कहलाने का गौरव प्राप्त कर सकेंगे। उन गुरुओं को प्राप्त करें, उनके चरणों में बैठें, उनका यथोचित शास्त्रीय विधि से अर्चन तथा पूजन करें।

इन दिव्य आत्माओं की कैसे आराधना की जाती है— तत्कालीन पूजा पद्धति क्या थी, वही वैदिक-गुरु पूजा पद्धति प्रस्तुत है—

प्रातः स्मरण

साधकों को प्रातः चार बजे उठ जाना चाहिए, उठकर अपने इष्टदेव का स्मरण करते हुए, निम्न मंत्रों का पाठ करें—

प्रातः स्मरामि भवभीतिहरं सुरेशं
गंगाधरं वृषभ वाहनमम्बिकेशं।
खट्वांग शूल वरदाभय-हस्तमीशं
संसार रोग हरमौषधमद्वितीयम्।।१।।

"जन्म-मृत्यु को हरण करने वाले, वृषभवाहन, गंगा को अपने मस्तक पर धारण करने वाले, संसार रोग को दूर करने वाले भगवान् शंकर

को मैं स्मरण करता हूं।"

प्रातः स्मरामि गणनाथमनाथ बन्धुं
सिन्दूरपूर्ण परिशोभित गण्डयुग्मं।
उद्दण्ड विघ्न परिखण्डन चण्ड दण्ड
माखण्डलादि सुरनायक वृन्दवन्द्यम्।।२।।

"समस्त विघ्नों को दूर करने वाले, समस्त देव तथा दानवों द्वारा पूजित, अनाथों के नाथ भगवान् गणपति को मैं स्मरण करता हूं।"

इसके बाद स्नानादि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर स्वच्छ वस्त्र धारण करके, पूर्व या उत्तर की ओर मुख करके पीले आसन या कुशासन पर बैठें। अपने सामने चौकी पर थाली या प्लेट पर "गुरु यंत्र" स्थापित कर लें, साथ में "गुरु चित्र" भी रखें।

स्वस्तिवाचन

प्रतिदिन निर्विघ्नता एवं मंगल के लिए स्वस्तिवाचन पाठ करें—

ॐ स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा
विश्व वेदाः स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः
स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु।
ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा(गूं) सस्तनुभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।

भूत शुद्धि

दायीं नासिका से श्वास लेते हुए निम्न मंत्र का चिन्तन करें और भावना करें— "मैं मूलाधार स्थित जीवात्मा को सुषुम्ना मार्ग से ऊपर ले जाकर सहस्रार स्थित ब्रह्म से एकाकार कर रहा हूं" और बायीं नासिका से श्वास को बाहर निकाल दें।

ॐ मूलश्रृंगाटकात् सुषुम्नापथेन जीव शिवं परमशिव पदे
योजयामि स्वाहा।

इसके बाद निम्न मंत्रों से क्रमशः शोधन की भावना करें–

१. **ॐ यं संकोच शरीरं शोषय शोषय स्वाहा।**
मेरे सूक्ष्म शरीर का शोषण हो रहा है।

२. **ॐ रं संकोच शरीरं दह दह पच पच स्वाहा।**
मेरा सूक्ष्म शरीर दग्ध हो रहा है।

३. **ॐ वं परमशिवामृतं वर्षय वर्षय स्वाहा।**
ब्रह्मरन्ध्रस्थ सोममंडल से द्रवित अमृत धारा से मैं सिंचित हो रहा हूं।

४. **ॐ लं शांभव शरीरं उत्पादयोत्पादय।**
अमृत से सिंचित मैं शिवत्व से पूर्ण हो रहा हूं।

५. **ॐ हंसः सोऽहं अवतर अवतर शिवपदात्।**
मैं शिवमय होकर मूलाधार में स्थित हूं।

गणपति स्मरण

दोनों हाथ जोड़कर श्रद्धा पूर्वक प्रार्थना करें–

ॐ लं नमस्ते गणपतये।

त्वमेव प्रत्यक्षं तत्त्वमसि। त्वमेव केवलं कर्ताऽसि। त्वमेव केवलं धर्ताऽसि। त्वमेव केवलं हर्ताऽसि। त्वमेव सर्वं खल्विदं ब्रह्मासि। त्वं साक्षादात्माऽसि। नित्यमृतं वच्मि। सत्यं वच्मि।

अव त्वं माम्। अव वक्तारम्। अव श्रोतारम्। अव दातारम्। अव धातारम्। अवानूचनमव शिष्यम्। अव पुरस्तात्तात्। अव दक्षिणात्तात्। अव पश्चिमात्तात्। अवोत्तरात्तात्। अव चोर्ध्वात्तात्। अवाधरात्तात्। सर्वतो मां पाहि पाहि समन्तात्।

संकल्प

साधक दायें हाथ में जल लेकर संकल्प करें– जल में अक्षत तथा पुष्प मिला लें और मंत्र बोलें–

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः श्रीमद्भगवतो महापुरुषस्य विष्णोराज्ञया प्रवर्तमानस्य अद्य श्रीब्रह्मणो द्वितीय परार्द्धे श्वेतवाराह कल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे कलियुगे कलिप्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे, अमुक वासरे, अमुक नाम, अमुक गोत्रेत्पन्नोऽहं, शिष्यरूपेण त्वां पूर्णता प्राप्ति निमित्तं गुरु देवता प्रीत्यर्थे यथा ज्ञानं, यथा मिलितोपचारैः पूजनं करिष्ये।

तत्पश्चात् हाथ में लिए जल को निर्माल्य-पात्र में छोड़ दें (अमुक के स्थान पर दिन, अपना नाम और गोत्र बोलें)।

न्यास

न्यास का अर्थ है– "रखना या स्थापित करना", (मैं आराध्य देव की उदात्त शक्ति को अपने विभिन्न अंगों में समाहित कर रहा हूं), इसके बाद निर्दिष्ट अंगों को दाहिने हाथ से स्पर्श करें–

ॐ सहस्रशीर्षा इति	बायें हाथ को स्पर्श करें।
ॐ पुरुष एवेद (गूं)	दायें हाथ को स्पर्श करें।
ॐ एतावानस्य महिमातो	बायें पैर को स्पर्श करें।
ॐ त्रिपादूर्ध्वमुदैत्	दक्षिण पैर को स्पर्श करें।
ॐ ततोविराडजायत	बायें घुटने को स्पर्श करें।
ॐ तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतः	दायें घुटने को स्पर्श करें।
ॐ तस्माद् यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः	बायें कमर को स्पर्श करें।
ॐ तस्मादश्वाजायन्त	दायें कमर को स्पर्श करें।
ॐ तं यज्ञम् बर्हिषि	नाभि को स्पर्श करें।
ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः	हृदय को स्पर्श करें।
ॐ ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीत्	बायें कंधे को स्पर्श करें।
ॐ चन्द्रमा मनसो जातः	दायें कंधे को स्पर्श करें।
ॐ नाभ्या आसीदन्त	कंठ को स्पर्श करें।
ॐ यत्पुरुषेण हविषा	मुख को स्पर्श करें।

ॐ सप्तस्यासन इति — दोनों नेत्रों को स्पर्श करें।
ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त — मस्तक को स्पर्श करें।

ध्यान

पूर्णों स वातं गुरुवै प्रणम्यं,
सदाहं भजामि भवदेव नित्यं।
एको हि रूपं ममतां प्रणेशं;
गुरुत्वं प्रणम्यं गुरुत्वं प्रणम्यम्।।

ब्रह्मा स्वरूपं विष्णु स्वरूपं,
रुद्र स्वरूपं आत्म स्वरूपं।
ब्रह्म स्वरूपं चिन्त्यमचिन्त्यं;
गुरुर्वै प्रणम्यं गुरुर्वै प्रणम्यम्।।

"सभी कलाओं से पूर्ण, नित्य स्वरूप, एकात्म रूप, शिष्यों पर करुणा करने वाले, ब्रह्मा, विष्णु एवं रुद्र की शक्तियों से युक्त, साक्षात् ब्रह्म स्वरूप, चिन्त्य तथा अचिन्त्य रूप गुरुदेव को मैं हृदय से नमन करता हूं।"

आवाहन

दोनों हाथों से आवाहन की मुद्रा बनाकर निम्न मंत्र से उस गुरुत्व शक्ति का आवाहन करें—

ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमि (गूं) सर्वतस्पृत्वाऽत्यतिष्ठद् दशांगुलम्।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आवाहनं समर्पयामि।

"हे गुरुदेव! आप हजारों सिर वाले, हजार-हजार आंख वाले तथा पैर वाले हैं, आप आकाश एवं भूमि में सर्वत्र निराकार रूप से व्याप्त होकर सभी प्राणियों के हृदय में स्थित हैं।"

आसन

ॐ पुरुष एवेद (गूं) सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम्।
उतामृतत्त्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आसनं समर्पयामि।।

"यह दृश्यमान समस्त जगत गुरुत्व से भिन्न नहीं है, गुरु तत्त्व अमृत रूप है, जो अज्ञान दशा में अन्नमय कोष से ढका हुआ है।"

पाद्य

फिर दो आचमनी जल गुरु चरणों में पाद-प्रक्षालन के लिए चढ़ावें—

ॐ एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः।
पादोऽस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पाद्यं समर्पयामि।

"यह दृश्यमान समस्त जगत उस गुरुत्व की ही महिमा मात्र है, जो इससे श्रेष्ठ है। यह समस्त प्रपंच उस गुरुत्व के एक अंश में ही स्थित है, उसका तीन अंश अमृतमय है, तथा इस संसार से भिन्न है।"

अर्घ्य

(देवता को हाथ धोने के लिए दिया जाने वाला जल 'अर्घ्य' कहा जाता है) साधक अपने दाहिने हाथ में जल लेकर, उसमें अक्षत, पुष्प और कुंकुम या चन्दन मिला कर निम्न मंत्र से हस्त प्रक्षालन के लिए समर्पित करें—

ॐ त्रिपादूर्ध्वमुदैत्पूरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशनेऽभि।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः अर्घ्यं समर्पयामि।

"वह गुरुत्व त्रिपाद रूप इस प्रपंच से भिन्न है, इसके एक पाद(अंश) में यह समस्त विश्व पुनः-पुनः उत्पन्न एवं विलीन होता रहता है।"

आचमन

आचमन के लिए तीन आचमनी जल गुरु चरणों में या यंत्र पर अर्पित करें –

ॐ ततो विराडजायत विराजोऽधिपूरुषः।
सजातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमि अथोपुरः।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।

"यह समस्त जगत उस विराट पुरुष (गुरुत्व) से उत्पन्न हुआ है, गुरुत्व शक्ति समस्त विश्व में व्याप्त है और उसी गुरुत्व से यह भूमि लोक तथा अन्य लोक उत्पन्न हुए। उस प्राण स्वरूप गुरुत्व के लिए आचमनी से जल समर्पित कर रहा हूं।"

स्नान

स्नान के लिए श्री गुरु चरणों में या यंत्र पर आचमनी से जल चढ़ायें –

ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतम्पृषदाज्यम्।
पशूंस्तांश्चक्रे वायव्या नारण्या ग्राम्याश्च ये।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः स्नानं समर्पयामि।

"इस गुरुत्वमय यज्ञ से घी, दधि आदि तथा ये सभी आरण्य एवं ग्राम्य पशु उत्पन्न हुए, उसी आद्य शक्ति गुरुत्व को स्नानीय जल समर्पित करता हूं।"

पंचामृत स्नान

ॐ पञ्च नद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः।
सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित्।
पञ्चामृतं मयानीतं पयो दधि घृतं मधु।

शर्करा च समायुक्तं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।

दुग्ध स्नान

ॐ पयःपृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः।
पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पयः स्नानं समर्पयामि।
शुद्ध जलेन स्नापयामि।

दधि स्नान

ॐ दधिक्राब्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखाकरत्प्रण आयूंषि तारिषत्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दधिस्नानं समर्पयामि।
शुद्ध जलं समर्पयामि।

घृत स्नान

ॐ घृतं मिमिक्षे घृतमस्य योनिर्घृते श्रितो घृतं वस्य धाम।
अनुष्वधमावह मादयस्व स्वाहाकृतं वृषभ वक्षि हव्यम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः घृतस्नानं समर्पयामि।
शुद्ध जल स्नानं समर्पयामि।

मधु स्नान

ॐ मधुवाताऽऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः
माध्वीर्नः सन्त्वोषधीः
मधु नक्तमुतोषसो मधुमत्पार्थिवं रजः

मधु द्यौरस्तु नः पिता।
मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमांऽअस्तु सूर्यः
माद्ध्वीर्गावो भवन्तु नः।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः मधुस्नानं समर्पयामि।
शुद्ध जलं समर्पयामि।

शर्करा स्नान

ॐ अपा(गूं) रसमुद्वयस (गूं) सूर्ये सन्त समाहितम्।
अपा (गूं) रसस्य यो रसस्तं वो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोऽसीन्द्राय त्वा जुष्टं गृह्णाम्येष ते योनिरिन्द्राय त्वा जुष्टतमम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः शर्करास्नानं समर्पयामि।
शुद्ध जलं समर्पयामि।

शुद्ध स्नान

ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जेदधातन महे रणाय चक्षसे यो वः शिवतमो रसः तस्य भाजयते ह नः उशतीरिवमातरः। तस्माअरंग मामवः। यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः।

गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।

ॐ शुद्धवालः सर्वशुद्धवालो मणिवालस्तऽआश्विनाः। श्येतः श्येताक्षोऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामाऽअवलिप्ता रौद्रा नभोरूपाः पार्जन्याः।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः शुद्धोदकस्नानं समर्पयामि।
स्नानान्ते आचमनीयं जलं समर्पयामि।

वस्त्र

वस्त्र चढ़ायें, यदि वस्त्र न हो, तो मौली (कलावा) चढ़ावें—

ॐ तस्मात् यज्ञात् सर्वहुतः ऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद् यजुस्तस्मादजायत।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि।

"उस गुरुत्व से ऋग्वेद की ऋचाएं, सामवेद, सभी छन्द और यजुर्वेद उत्पन्न हुए।"

यज्ञोपवीत

इसके बाद यज्ञ-सूत्र समर्पित करें—

ॐ तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात् तस्माज्जाता अजावयः।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

"उसी गुरुत्व रूप परम तत्त्व से ऊपर-नीचे दोनों ओर दांत वाले पशु—गौ, घोड़े, बकरी तथा भेड़ उत्पन्न हुए।"

गन्ध

श्री गुरु चरणों में चन्दन या कुंकुम अथवा केसर का तिलक करें—

ॐ तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

"उस गुरुत्व रूप यज्ञीय तत्त्व से सृष्टि उत्पत्ति के बाद विराट् पुरुष(हिरण्य गर्भ) उत्पन्न हुए, उसी को आधार लेकर देवताओं, सिद्धों तथा ऋषियों ने सृष्टि की उत्पत्ति की।"

अक्षत

तिलक के बाद चावल चढ़ावें, जो टूटे हुए न हों—

ॐ अक्षान्नमी मदन्त ह्यवऽप्रियाऽअधूषत।
अस्तोषत स्वभानवो विप्रान्
विष्ठयामती योजान् विन्दते हरी।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।

पुष्प

पुष्प या हार चढ़ावें—

ॐ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत् किम्बाहू किमूरू पादा उच्येते।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः पुष्पहारं समर्पयामि।

"उस गुरुत्व का क्या स्वरूप है? कितने उसके प्रकार हैं? उसके मुख, बाहु, जंघा तथा पैर क्या हैं?"

धूप

अगरबत्ती या धूप जलावें—

ॐ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीत् बाहू राजन्यः कृतः।
उरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रोऽजायत।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः धूपम् आघ्रापयामि।

"उसी गुरुत्व से सभी मानवों की उत्पत्ति हुई तथा बाद में वही अपने-अपने विभिन्न कर्मानुसार भिन्न-भिन्न जातियों में सामाजिक व्यवस्था हेतु विभक्त हुए।"

दीप

घी का दीपक दिखावें—

चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्योऽजायत।
श्रोत्राद् वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।

"उस विराट् पुरुष रूप गुरुत्व के मुख से चन्द्रमा उत्पन्न हुए, उसके
त्र से सूर्य, कान से वायु, प्राण तथा मुख से अग्नि उत्पन्न हुए।"

वेद्य

इसके बाद किसी सुरुचि पूर्ण पात्र में भोज्य पदार्थों को सजाकर उसमें
नु मुद्रा दिखाकर घंटी की आवाज सहित निम्न मंत्र को उच्चरित करें–

ॐ नाभ्या आसीदन्तरिक्ष (गू) शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत।
पदभ्यां भूमि र्दिशः श्रोत्रांस्तथा लोकांऽअकल्पयन्।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि।

"उस विराट् गुरु तत्त्व की नाभि से आकाश और अन्तरिक्ष, सिर से
लोक, उनके पैरों से भूमि, कान से दिशाएं तथा अन्य लोक उत्पन्न हुए।"

ाचमन

इसके ब़ाद निम्न सन्दर्भों के साथ पांच आचमनी जल चढ़ावें –

ॐ प्राणाय स्वाहा। **ॐ अपानाय स्वाहा।**
ॐ व्यानाय स्वाहा। **ॐ उदानाय स्वाहा।**
ॐ समानाय स्वाहा।

ाम्बूल

पान, सुपारी, लौंग मुख शुद्धि के लिए समर्पित करें–

ॐ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत।
वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्मऽइध्मः शरद्धविः।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः ताम्बूलं समर्पयामि।

दक्षिणा

ॐ हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत।
स दाधार पृथिवीं उत द्यां कस्मै देवाय हविषा विधेम।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः, दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि।

"इस सृष्टि निर्माण से पूर्व गुरुत्व रूप हिरण्यगर्भ पुरुष हुए, जिन्होंने भूलोक तथा अन्य सभी लोकों को धारण किया, उन्हीं देव विशेष के लिए मैं दक्षिणा प्रदान करता हूं।"

नमस्कार

दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करें—

ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः नमस्कारं समर्पयामि।

"उसी यज्ञीय पुरुष गुरुत्व की शक्ति से देवताओं ने सृष्टि का निर्माण किया, उस सृष्टि निर्माण रूपी यज्ञ में वसन्त ऋतु हवन-सामग्री, ग्रीष्म ऋतु समिधा तथा शरद ऋतु हवि कर्म बना।"

मूल मंत्र

।।ॐ परम तत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः।।

इस मंत्र का पांच माला या ग्यारह माला अथवा इक्कीस माला मंत्र जप **"स्फटिक माला"** से करें।

आरती

ॐ इन्द्रो विवस्य राजति शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे

शन्नो मित्रः शं वरुणः शन्नो भवत्वर्य्यमा
शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः
शन्नो वातः पवता (गूं) शन्नस्तपतु सूर्यः
शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभि वर्षतु
अहानि शं भवन्तु नः श (गूं) प्रति धीयताम्
शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोध्यः शन्न
इन्द्रावरुणा रातद्रव्या शन्न इन्द्रा
पूषणा वाजसातौ शमिन्द्रा सोमा
सुविताय शंयोः

आरती के बाद तीन आचमनी जल जोत के ऊपर घुमाकर जल छोड़ दें।

परिक्रमा

यदि गुरु स्वयं उपस्थित हों, तो उनकी तीन बार घूमकर परिक्रमा करें तथा निम्न मंत्र का उच्चारण करें–

ॐ सप्तस्यासन्परिधयः त्रिसप्तसमिधःकृता।
देवा यद् यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम्।।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः।
परिक्रमां समर्पयामि।

पुष्पाञ्जलि

फिर दोनों हाथों में खुले पुष्प लेकर निम्न मंत्र पढ़ें–

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने। नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। समे कामान् कामकामाय मह्यम्। कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः।

ॐ स्वस्तिः साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं पारमेष्ठ्यं राज्यं महाराज्यमाधिपत्यमयं समन्तपर्यायी स्यात्, सार्वभौमः सर्वायुषः आन्तादापरार्धात्, पृथिव्यै

समुद्र पर्यन्तायाः एकराडिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीतो मरुतः परिवेष्टारो मरुतस्यावसन् गृहे। आविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद।

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सं बाहुभ्यां धमति सम्पतत्त्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव एकः।

श्री गुरु चरण कमलेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

क्षमा प्रार्थना

दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करें–

आवाहनं न जानामि न जानामि तवार्चनम्।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।

मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे।।

यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर।।

समर्पण

ॐ गुह्याति गुह्यगोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं।
सिद्धिर्भवतु मे देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे।।
ॐ ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविः ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना।।

इस मंत्र का उच्चारण करके एक चम्मच जल निर्माल्य-पात्र में छोड़ दें।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

औपनिषद-गुरु पूजन

यह संसार क्या है? किसने बनाया? क्यों बनाया? और ब्रह्म, जीव, आत्मा तथा माया ये क्या हैं? ये ज्वलन्त प्रश्न तभी से हैं, जब से मानव-जाति ने प्रकृति के प्रांगण में आंखें खोलीं . . .और आज भी ये प्रश्न अनबुझे ही प्रतीत होते हैं। इन प्रश्नों का समाधान सतत खोजा जाता रहा है, किन्तु उपनिषद् काल में इन्हीं विशेष प्रश्नों पर अधिकाधिक चिन्तन और मनन हुआ; इसीलिए उपनिषद् काल में अध्यात्म से सम्बन्धित जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये गये, वे सभी मौलिक और स्थायी माने गये हैं। उपनिषदों के इन्हीं प्रगाढ़ चिन्तनों के कारण ही सभी उपनिषद् प्रतिपादित शास्त्रीय सिद्धान्त प्रमाण के साथ अनुसरण किये जाते हैं। "सर्वोपनिषदो गावो" भगवद् गीता का यह कथन सर्वमान्य प्रमाण है।

आत्मा अजर-अमर है, जीव और ब्रह्म एक हैं, साकार एवं निराकार आदि मौलिक विचार हैं— ये सभी उपनिषद् काल की ही देन हैं, अतः इसे स्वर्णिम काल भी कहते हैं।

उपनिषद् काल में अध्यात्म सम्बन्धी उदात्त चिन्तन के पीछे गुरु के दायित्व का बोध उद्भासित होता है, क्योंकि उन्होंने ही बताया है— "सर्व

खल्विदं ब्रह्म" सब का प्रादुर्भाव परब्रह्म से ही हुआ है। उससे भिन्न कुछ भी नहीं है, इसलिए किसी से भेदभाव करना या किसी को छोटा-बड़ा समझना अनुचित है। आत्म दृष्टि से सब कुछ समान है।

आज की भयावह विषम समस्याओं का इन वाक्यों से स्वत: ही समाधान हो जाता है, कि मानव समाज की एकता और समानाधिकार का इससे स्पष्ट प्रमाण और क्या हो सकता है। इन शिक्षाओं को स्पष्ट करने के लिए गुरुत्व की आवश्यकता होती है, उपनिषद् काल में गुरुत्व को समझा गया, उसी का परिणाम है, कि वह काल अभी भी स्वर्णिम युग के रूप में स्मरण किया जाता है।

तत्कालीन गुरुओं को मालूम था, कि किन बिन्दुओं को कम्पित करने से कुण्डलिनी जागरण की क्रिया सम्भव होती है, और शिष्य के सौभाग्य को जाग्रत किया जाता है, इसीलिए वे उपनिषद् कालीन ऋषि अभी भी जीवित हैं, अपने ज्ञान के माध्यम से।

उपनिषद् का अर्थ है – गुरु के पास जाना और उनके चरणों के समीप बैठना, उस दिव्य ज्ञान को प्राप्त करने के लिए; क्योंकि उस ज्ञान को प्राप्त करने का एक ही माध्यम है 'गुरु', भारतीय अध्यात्म साहित्य में उपनिषद् काल उदात्त एवं श्रेयस्कर माना गया है, हमारी बहुत-सी परम्पराएं इसी काल के ऋषियों की देन हैं, जब चिद्घन अखण्ड ज्ञान की अजस्र धारा प्रवाहित हुई; और आज भी वह ज्ञान की गरिमा भारत को महिमा मण्डित की हुई है।

गुरु का अर्थ है – ज्ञान, तृप्ति, आनन्द, मस्ती और पूर्णता; जिसकी खोज सदैव इस जीवात्मा को रही है. . . और रहेगी। उपनिषद् काल में ऋषियों, महर्षियों और ज्ञानियों की श्रेणी उजागर हुई, अवश्य ही उनमें गुरुत्व के प्रति पिपासा रही है, तभी यह ज्ञान उस काल में अभिव्यक्त हुआ।

उस काल के ऋषियों ने जिस पद्धति से गुरुत्व को पहचाना, प्राप्त किया; पूजा की वह पद्धति सभी साधकों को ज्ञात हो, जिससे वे शीघ्र लाभान्वित हो सकें, उसी प्रयास की यह लघु कड़ी है। साधक का प्रथम कर्तव्य यही होता है, कि वह चैतन्य गुरु की प्राप्ति के लिए अहर्निश प्रयास करे. . . प्राप्ति के बाद आराधना तथा पूजा कैसे करें, वह पूजन की प्रक्रिया निम्न है –

ज्ञानेनाकाशकल्पेन धर्मान्यो गगनोपमान्।
ज्ञेयाभिन्नेन संबद्धस्तं वन्दे द्विपदां परम्।।१।।

"जिसने ज्ञेय (आत्मा) से अभिन्न आकाश सदृश निर्मल ज्ञान से धर्मों (जीवों) को जाना है, उस गुरु तत्त्व को मैं नमन करता हूं।"

अस्पर्शयोगो वै नाम सर्वसत्व सुखावहः।
अविवादोऽविरुद्धश्च देशिकस्तं नमाम्यहम्।।२।।

"जिसने सभी प्राणियों के लिए हितकर, सुखकर, निर्विवाद एवं अविरोध आत्मा का उपदेश दिया, ऐसे गुरुपद को मैं नमन करता हूं।"

साधकों को चाहिए कि ब्रह्म मुहूर्त में उठकर, स्नानादि से निवृत्त होकर पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठें। किसी भी साधना में मंत्र जप या पूजा काल में दिशा आदि का भी विशेष महत्त्व होता है। अपनी इच्छानुसार किसी भी दिशा में बैठकर पाठ या मंत्र जप तो कर सकते हैं, किन्तु अभीष्ट लाभ नहीं हो पायेगा।

'प्राची हि देवानां दिक्'

"देवताओं की दिशा पूर्व है", इसीलिए सन्ध्या-वन्दन में पूर्व की ओर मुख करके बैठना चाहिए, पूर्वाभिमुख बैठने का प्रमुख कारण, सूर्य का पूर्व से उदय होना है, क्योंकि सूर्य तेजस्विता, शक्ति तथा आरोग्यता का प्रतीक है, और यह हमें प्राप्त हो, इसी उद्देश्य से पूजा काल में पूर्वाभिमुख ही बैठने का प्रावधान है।

पूर्व दिशा की ओर मुख करके बैठने के बाद आंख को बन्द कर लें, अपने मन तथा इन्द्रियों को बाह्य विषयों से हटाकर एकाग्र करने का प्रयास करें तथा हृदय में या आज्ञा चक्र में गुरु का ध्यान करें, धीरे-धीरे इस प्रयास से मन शान्त होने लगेगा, बाह्य विषयों से हटकर अन्तः प्रवेश करने का स्वाभाविक मन बनेगा। तत्पश्चात् "प्राणायाम" करना चाहिए। प्राणायाम करते समय भी उपरोक्त चिन्तन को बनाये रखें। प्राणायाम को नियमित पूजन से पूर्व करना ही चाहिए, क्योंकि इससे अन्तः प्राणश्चेतना जाग्रत होती है और

साधक को शीघ्र सफलता प्राप्त होती है।

इसके बाद अपने सामने एक छोटी-सी चौकी रख लें, उस पर पीला या लाल वस्त्र बिछा लें, मध्य में किसी प्लेट या थाली में दिव्य 'गुरु यंत्र' को स्थापित करें तथा साथ में 'गुरु चित्र' भी स्थापित कर लें, धूप-दीप जलाकर निम्न क्रमानुसार पूजन करें–

आचमन

तीन बार आचमनी से दाहिने हाथ में जल लेकर पी लें। आचमन का अर्थ है– "क्लीं, श्रीं और ऐं" इन तीनों शक्तियों को अपने भीतर धारण करने की प्रक्रिया। इसमें यह सूक्ष्म भावना निहित है, जिसे समझना आवश्यक है– इस आचमन के साथ तीनों शक्तियां 'महाकाली', 'महालक्ष्मी' और 'महासरस्वती' मुझ में समाहित हों।

न्यास

इसके बाद न्यास करना चाहिए, न्यास का अर्थ है– 'धारण करना शरीर के भीतर'। सिर, आंखें, कान, हृदय, नाभि, लिंग और हाथ-पैर आदि विभिन्न लोक कहे गये हैं, इन्हें जाग्रत एवं पवित्र करते रहना चाहिए। न्यास द्वारा इन सभी शक्ति केन्द्रों को पावन तथा सक्रिय बनाये रखा जाता है।

दायें हाथ के अंगूठे और अनामिका उंगली को मिलाकर नीचे लिखे मंत्र का उच्चारण करते हुए जिन अंगों का संकेत हो, उसे स्पर्श करें और भावना करें, कि मेरे ये अंग शक्तिशाली और पवित्र हो रहे हैं–

अंग न्यास

ॐ	**हृदयाय नमः**	– हृदय को स्पर्श करें।
परमतत्त्वाय	**शिरसे स्वाहा**	– सिर को स्पर्श करें।
नारायणाय	**शिखायै वषट्**	– शिखा को स्पर्श करें।
गुरुभ्यो	**कवचाय हुम्**	– भुजाओं को स्पर्श करें।
नमः	**नेत्रत्रयाय वौषट्**	– नेत्रों को स्पर्श करें।
ॐ	**अस्त्राय फट्**	– तीन बार ताली बजायें।

कर न्यास

ॐ	—	अंगुष्ठाभ्यां नमः।
परमतत्त्वाय	—	तर्जनीभ्यां नमः।
नारायणाय	—	मध्यमाभ्यां नमः।
गुरुभ्यो	—	अनामिकाभ्यां नमः।
नमः	—	कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ	—	करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

ध्यान

अपने आज्ञा चक्र या सहस्रार में पूज्य गुरुदेव का ध्यान करते हुए निम्न मंत्रों को बोलें—

यो विश्वात्मा विविधविषयान् प्राश्य भोगान् स्वधिष्ठान्,
पश्चाच्चान्यान् स्वमतिविषयान् ज्योतिषा स्वेन सूक्ष्मान्।
सर्वानेतान् पुनरपि शनैः स्वात्मनि स्थापयित्वा;
हित्वा सर्वान् विगतगुणगणः पात्वसौ नस्तुरीयः।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः ध्यानं समर्पयामि।

"जो गुरुत्व (स्थूल शरीर में आकर) शुभाशुभ कर्मजनित भोगों को भोग कर अपनी 'स्व' शक्ति द्वारा कल्पित सूक्ष्म विषयों को अपने ही प्रकाश से भोगते हुए, धीरे-धीरे समस्त जागतिक प्रपंच को अपने भीतर समाहित कर निर्गुण रूप में स्थित हो जाते हैं, वह तुरीय स्वरूप सद्गुरु हमारी रक्षा करें।"

आसन

दाहिने हाथ में पुष्प लेकर गुरुदेव को आसन दें, यदि साक्षात् गुरुदेव उपस्थित हों, तो यथाविधि सम्मानपूर्वक आसन देकर बिठा दें तथा इस मंत्र का उच्चारण करें—

आदिबुद्धाः प्रकृत्यैव सर्वे धर्माः सुनिश्चिताः।

यस्यैवं भवति शान्तिः सोऽमृतत्वाय कल्पते।।

तमो स पूर्वा एतोस्मानं सकृते कल्याण त्वां कमलया स शुद्ध बुद्ध प्रबुद्ध स चिन्त्य अचिन्त्य वैराग्यं नमितां पूर्वा एतोस्मानं सकृते कल्याण त्वां पुष्पासनं समर्पयामि नमः।

आवाहन

दोनों हाथ सामने उठाकर आवाहन करें–

मम प्राण स्वरूपं, देह स्वरूपं, चिन्त्य स्वरूपं, समस्त स्वरूपं गुरुं आवाहयामि नमः।

न निरोधो न चोत्पत्ति र्न बद्धो न च साधकः।
न मुमुक्षुर्न वै मुक्तः इत्येषा परमार्थता।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदमावाहनं समर्पयामि।

"न प्रलय है, न उत्पत्ति; न बद्ध है, न मुक्त है; यही गुरुत्व की परमार्थता है। मैं भावपूर्ण हृदय से उनका आवाहन करता हूं।"

पाद्य

गुरु चरणों को प्रक्षालन के लिए आचमनी से जल समर्पित करें–

न कश्चिज्जायते जीवः संभवोऽस्य न विद्यते।
एतत् तदुत्तमं सत्यं यत्र किंचित्र जायते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदं पाद्यं समर्पयामि।

"कोई भी जीव उत्पन्न नहीं होता, उसके जन्म की सम्भावना ही नहीं है, सत्यता यही है कि किसी वस्तु की उत्पत्ति ही नहीं होती। ऐसे निरामय गुरुत्व को पाद प्रक्षालन के लिए जल समर्पित करता हूं।"

अर्घ्य

दाहिने हाथ में जल लेकर निम्न मंत्र पढ़ें–

यस्मिन् सर्वाणि भूतानि आत्मैवाभूद् विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः।।

ॐ देवो तवा वै सर्वां प्रणतवं परिसंयुत्वाः सकृत्वं सहेवाः।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः अर्घ्यं समर्पयामि नमः।

आचमन

तीन आचमनी जल गुरु चरणों में अर्पित करें–

ॐ हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापि हितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपा वृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदमाचमनीयं जलं समर्पयामि।

"सूर्यमण्डलस्थ उस परमतत्त्व का मुख हिरण्मय पात्र से ढका हुआ है। हे गुरुदेव! मुझ साधक को आत्मा की उपलब्धि के लिए उस आवरण को दूर कर दें।"

स्नान

स्नान के लिए गुरु चरणों में जल समर्पित करें–

यस्यामतं तस्य मतं मतं यस्य न वेद सः।
अविज्ञातं विजानतां विज्ञातमविजानताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः स्नानीयं जलं समर्पयामि।

"ब्रह्म, जिसे ज्ञात नहीं है वही ब्रह्म को जानता है, जिसे ज्ञात है वह नहीं जानता, क्योंकि वह जानने वालों का बिना जाना हुआ तथा न जानने वालों का जाना हुआ है।"

वस्त्र

यद्वाचानमभ्युदितं येन वागभ्युदीयते।
तदेव ब्रह्मत्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि।

"जो वाणी का विषय नहीं है, किन्तु वाणी जिससे समर्थ होती है, उसी को ब्रह्म जानो। जिस वस्तु की लोग उपासना करते हैं, वह ब्रह्म नहीं है।"

यज्ञोपवीत

विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

"जो विद्या और अविद्या दोनों को जानते हैं, वह अविद्या के माध्यम से विद्याओं को जानकर अमरत्व को प्राप्त कर लेते हैं।"

गन्ध

चन्दन, केशर अथवा कुंकुम से तिलक करें और उसके बाद निम्न मंत्र पढ़ें—

यच्चक्षुषा न पश्यति येन चक्षूंषि पश्यति।
तदेव ब्रह्म तद्, विद्धि नेदं यदिदमुपासते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः चंदनं समर्पयामि।

"जिसे नेत्र नहीं देख सकते, किन्तु जिसकी सहायता से नेत्र अपने विषयों को देख पाते हैं, वही ब्रह्म है।"

पुष्प

यच्छोत्रेण न शृणोति येन श्रोत्रमिदं श्रुतम्।
तदेव ब्रह्म तद्विद्धि नेदं यदिदमुपासते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पहारं समर्पयामि।

"जिसे कान नहीं सुन सकते, किन्तु श्रोत्र जिसकी शक्ति से अपने विषयों को सुन पाता है, वह ब्रह्म है।"

धूप

तस्मादृचः साम यजूंषि दीक्षा,
यज्ञाश्च सर्वे क्रतवो दक्षिणाश्च।
संवत्सरश्च यजमानश्च लोकाः;
सोमो यत्र पवते यत्र सूर्यः।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।

"उस परब्रह्म स्वरूप गुरुत्व से ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, दीक्षा, यज्ञ, दक्षिणा, संवत्सर, यजमान, सोम तथा सूर्य उत्पन्न हुए।"

दीप

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः,
सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः;
साक्षी चेतो केवलो निर्गुणश्च।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।

"शरीर आदि समस्त भूतों में स्वप्रकाश, अद्वितीय ब्रह्म ही आत्मरूप से विद्यमान है, वह अविद्या से आच्छन्न होने के कारण गुप्त है, अर्थात् सभी उसे नहीं जान सकते।"

नैवेद्य

किसी पात्र में मिष्ठान्न रखकर नैवेद्य अर्पित करें तथा निम्न मंत्र बोलें –

यद्यत्पश्यतिचक्षुर्भ्यां तत्तदात्मेति भावयेत्,
यद्यच्छृणोति कर्णाभ्यां तत्तदात्मेति भावयेत्;
दृष्टिं ब्रह्ममयीं कृत्वा पश्येद् ब्रह्ममयं जगत्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि।

"जो कुछ नेत्रों से देखा जाता है, वह सभी ब्रह्म है; कानों से जो-जो सुना जाता है, वह सभी ब्रह्म ही है, ऐसी ही भावना करें, इस दृष्टि से संसार को ब्रह्ममय समझें।"

आचमन

ॐ प्राणाय स्वाहा,
ॐ अपानाय स्वाहा,
ॐ व्यानाय स्वाहा,
ॐ उदानाय स्वाहा,
ॐ समानाय स्वाहा।

इस संदर्भ को बोल कर पांच बार आचमन करें।

ताम्बूल

सादे पान में लौंग, इलायची रखकर ताम्बूल समर्पित करें—

तमेव विदित्वाति मृत्युमेति।
नान्याः पन्थाः विद्यतेऽयनाय।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः ताम्बूलं समर्पयामि।

"उस गुरुत्व को जानकर ही साधक मृत्यु के पार जा सकता है, जीवन को पूर्णता देने के लिए आत्म-ज्ञान के सिवा अन्य मार्ग नहीं है।"

मूल मंत्र

।।ॐ श्रीं निं खिं लं श्रीं ॐ।।

इस मंत्र का **"रुद्राक्ष माला"** से तीन माला जप करें।

नीराजन (आरती)

ॐ असतो मा सद्गमय,
तमसो मा ज्योति र्गमय मृत्योर्माऽमृतं गमय।।

आब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतां मा राष्ट्रे,
राजन्युः शूरऽइषव्योऽति व्याधी महारथो,
जायतां दोग्धी धेनुर्वोढा न उपानशुः सप्तिः,
पुरन्धियोषाजिष्णु रथेष्ठाः सभेयो युवास्य,
यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः
पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नऽओषधयः
पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नीराजनं समर्पयामि।

जल आरती

ॐ असौ यस्ताम्रोऽअरुण उतबभ्रुः सुमंगलः। ये चैन (गूं)
रुद्राऽअभितो दिक्षुश्रिताः सहस्त्रशोऽवैषा (गूं) हेऽऽईमहे।

शांन्ति पाठ पढ़कर दीप के चारों ओर तीन बार आचमनी से जल घुमावें।

पुष्पाञ्जलि

सर्वाननशिरोग्रीवः सर्वभूत गुहाशयः।
सर्व व्यापी स भगवान् तस्मात् सर्वगतः शिवः।।

नानासुगन्धपुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्ता गृहाण गुरुनायक।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

"गुरु का मुख, सिर, कंठ सभी ओर है, गुरु सर्वव्यापी हैं और समस्त प्राणियों के हृदय में स्थित हैं, अतएव वे सर्वव्यापी एवं सर्व कल्याणकारी हैं।"

नमस्कार

यतो वा इमानि भूतानि जायन्ते, येन जातानि जीवन्ति,

यत् प्रत्यभिसंविसन्ति तद्विजिज्ञासस्व,तद् ब्रह्मेति।
परास्य शक्ति र्विविधैव श्रूयते।
स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया च।।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नमस्कारं समर्पयामि।

विशेषार्घ्य

दाहिने हाथ में जल लेकर निम्न मंत्र पढ़ें–

सर्वकर्मा सर्वकामः सर्वगन्धः सर्वरसः,
सर्वमिदभग्यात्तोऽवाक्यानादर एष म;
आत्मान्तर्हृदय एतद् ब्रह्मैतमितः
प्रेत्याभि सं भवितास्मीति यस्य
स्यादद्धा विचिकित्सास्तीति ह
स्माह शाण्डिल्य शाण्डिल्यः।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः विशेषार्घ्यं समर्पयामि।
ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्ण मुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।

इस मंत्र को बोल कर एक आचमनी से जल पूजा की पूर्णता हेतु निर्माल्य पात्र में छोड़ दें।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

पौराणिक-गुरु पूजन

मानव मन सदैव ही अतृप्त और चंचल रहा है, उसे किसी ऐसी वस्तु की तलाश है, जिसे पाकर वह आत्माराम बन जाय, सभी भटकाव समाप्त हो जाय। जब सागर में रहने वाली मछली छोटे-से गड्ढे में फंस जाती है, तालाब या कुएं में किसी कारणवश आ जाती है. . . वह विक्षिप्त-सी रहती है. . . और बड़े सरोवर में जाकर सदा के लिए निश्चिन्त हो जाती है। ठीक यही गति मनुष्य की है, दुर्भाग्य वश मन तथा इन इन्द्रियों को प्रकृति ने बहिर्मुख बनाया हैं, अन्तर्मुख होने की प्रक्रिया इन्हें ज्ञात नहीं है।

पराञ्चि खानि व्यतृणत् स्वयंभू,
स्तस्मात् पराङ्पश्यति नान्तरात्मन्।
कश्चिद् धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षः;
दावृत्त चक्षुरमृतत्त्वमिच्छन्।।

ये समस्त इंद्रियां बहिर्मुख हैं, अतः ये अन्तर्मुख होकर आत्मा को नहीं देख सकतीं। कोई-कोई धीर पुरुष ही गुरु कृपा होने पर विषयों से विमुख होकर उस परम तत्त्व को जान पाते हैं। ये सभी क्रियाएं एकमात्र गुरु कृपा साध्य हैं, उग्र और कठिन साधनाओं के द्वारा स्वतः उस परम तत्त्व को नहीं जान सकते।

दुर्लभो विषयत्यागः दुर्लभं तत्त्व दर्शनं।
दुर्लभा सहजावस्था सद्गुरोः करुणां बिना।।

"विषयों का त्याग, तत्त्वज्ञान तथा कैवल्य पद की प्राप्ति गुरु कृपा बिना असंभव है।"

जीवन के सभी दुःखों का आत्यन्तिक अभाव तथा सुख की प्राप्ति जो चाहते हैं, उसके लिए अनेक उपायों को क्रियान्वय भी करते हैं; फिर भी अनुकूल परिणाम की प्राप्ति नहीं हो पाती। इस प्रकार प्राणियों की दयनीय दशा को देखकर परम कृपालु गुरुदेव जो अकारण करुण हैं, साधकों को उस अध्यात्म पथ पर सुगमता से सतत प्रयास करके ले जाया करते हैं, लेकिन गुरु की कृपा प्राप्ति के लिए सतत उनका साहचर्य प्राप्त होना चाहिए, जिससे उनकी सेवा तथा समीपीकरण से चरणों के प्रति प्रेम का उद्भव हो; उनके गुणों पर रीझें, उन्हें आदर्श मानकर प्रणत हों, क्योंकि गुरु में कुछ ऐसी शक्ति निवास करती है, जो साधक को प्रिय है, जिसको वह अपने जीवन में धारण करना चाहता है।

गुरु की यह सत्ता सौम्य है, सोम के समान आह्लाद एवं शीतल है। इस संसार में जो कुछ प्राण, वीर्य, ऐश्वर्य एवं वैभव आदि हैं, सब कुछ गुरुत्व में समाहित है। सात्विकता परायण व उल्क्रमणशील साधकों की एकमात्र सम्पदा गुरु ही हैं।

वचनों द्वारा गुरु का नाम लेना, उनके वाचक मंत्रों का उच्चारण करना, इन्हीं क्रियाओं के माध्यम से शिष्य अनायास गुरु के साथ आमोद जनित आनन्द की अनुभूति प्राप्त करने लगता है।

वस्तुतः देखा जाय, तो गुरु तत्त्व अचिन्त्यनीय और अनिवर्चनीय है। वह देशकाल तथा कार्य-कारण की परिधि से अपरिच्छिन्न है तथा समस्त नाम-रूपों से भिन्न है, इसलिए गुरुत्व पूजा का विषय नहीं बनता। 'केनोपनिषद्' (प्रथम खण्ड) के अनुसार—न तो वह चक्षु का, न वाणी का विषय है और न मन वहां जा सकता है, यह वह नहीं है जो शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाय, यह वह गुरुत्व या ब्रह्म नहीं है जिसकी लोग उपासना या पूजा करते हैं. . . किन्तु सब उपाधियों से रहित निर्विशेष तथा शुद्ध चैतन्य उस परम तत्त्व के साथ

सम्पर्कित होना सर्वसाधारण के लिए सम्भव नहीं है। वहां एक के बाद दूसरे स्तर पर क्रम से ही ऊपर चढ़ना होता है। अतः पूर्व क्रमानुसार सगुण शरीर की आराधना एवं पूजा अपेक्षित है।

साधनात्मक जीवन में चित्त शुद्धि के लिए साकार गुरु की आराधना एवं पूजा की नितांत आवश्यकता है। चित्त शुद्धि के लिए यह पूजा सबसे बड़ा सम्बल है। मनःशुद्धि गुरु-अर्चना पर निर्भर है, उसके बिना अशान्त मन अन्य उपायों से भी उस गुरुत्व को प्राप्त नहीं कर सकता। काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर आदि आभ्यन्तर् शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने के लिए, भव-बाधा की निवृत्ति के लिए गुरु-अर्चना ही परम पाथेय है।

जैसे किसी वृक्ष का उत्कृष्ट सौन्दर्य उसका फूल होता है, वैसे ही समस्त ज्ञान-विज्ञान का अन्तिम लक्ष्य गुरुत्व प्राप्ति होता है, अर्थात् मनुष्यों में अपने को अमृतत्त्व की ओर ले जाने की जो बुभुक्षा है, उसकी सदा के लिए तृप्ति इसी से ही सम्भव है। नाना दुःखों से संतप्त प्राणियों के लिए गुरुत्व की प्राप्ति ही परमोपाय है।

नारायणोऽपि विकृतिं याति गुरोः प्रच्युतस्य दुर्बुद्धेः।
कमलं जलादपेतं शोषयति रविर्न पोषयति।।

"जैसे कमल को विकसित करके सूर्य उसे सौन्दर्य प्रदान करता है, जल से अलग होने पर उसे सुखा कर कान्तिहीन कर देता है, उसी प्रकार गुरु कृपा से अलग होने पर देवता भी निर्बल और महत्त्वहीन हो जाता है।"

पुराण प्रतिपादित गुरु पूजन उतना ही उपादेय एवं श्रेयस्कर है, जितना वैदिक एवं तांत्रिक पूजन। कहा तो यहां तक जाता है, कि पुराणोक्त-गुरु पूजन अन्य सूक्ष्म विद्या की अपेक्षा अत्यन्त सरल है और सर्वगम्य है। वेदों के कठिन मंत्रों से सभी परिचित नहीं हैं। अतः वर्तमान में यह पूजन निश्चित ही शीघ्र सफलतादायक है, इसी उद्देश्य से. . .

साधक प्रतिदिन प्रातः अपनी नियमित क्रियाओं से निवृत्त होकर पूर्व या उत्तर दिशा की ओर मुंह करके बैठें, सामने किसी चौकी पर 'गुरु यंत्र' तथा 'गुरु चित्र' स्थापित करके, धूप, दीप आदि जला लें तथा गुरु पूजन से सम्बन्धित अन्य सामग्री भी अपने पास ही रखें।

इस पूजन से पूर्व तीन बार आचमन कर लें, पवित्रीकरण कर लें, फिर तीन बार "ॐ" की ध्वनि करें तथा यथा शक्ति प्राणायाम करके अपने मन को एकाग्र करने का प्रयास करें।

गुरु पूजन प्रारम्भ करने से पूर्व पांच मिनट तक साधक आंख बन्द करके अपने मन तथा इंद्रियों को एकाग्र करें, क्योंकि चंचल मन से पूजन अनुकूल नहीं हो पाता, जितना होना चाहिए—

ध्यान

दोनों हाथ जोड़कर अत्यन्त श्रद्धापूर्ण हृदय से अपने कई-कई जन्मों के तथा इस जन्म के अनेक अच्छे और बुरे कर्मों के परिणाम को स्मरण करते हुए प्रार्थना करें—

द्विदल कमलमध्ये बद्ध संवित् समुद्रं,
धृतशिवमयगात्रं साधकानुग्रहार्थं।
श्रुतिशिरसि विभान्तं बोध मार्तण्ड मूर्तिं;
शमिततिमिर शोकं सद्गुरुं भावयामि।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः ध्यानं समर्पयामि।

आवाहन

आगच्छ भगवन् देव! स्थाने चात्र स्थिरो भव।
यावत् पूजां करिष्यामि तावत् त्वं सन्निधौ भव।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आवाहनं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! इस पूजा स्थान में आयें तथा पूजा ग्रहण करें।

आसन

अपने दाहिने हाथ में पुष्प लेकर आसन दें—

रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्व सौख्य करं शुभम्।
आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आसनं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! यह पुष्पासन है, इस पर आप विराजमान होवें।

पाद्य

गुरु चरण प्रक्षालन के लिए दो आचमनी जल चढ़ावें–

गंगोदकं निर्मलं च सर्वसौगन्ध्य संयुतम्।
पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पाद्यं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! यह पवित्र गंगाजल जो सुगन्धमय है, आप को पाद प्रक्षालन के लिए अर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

अर्घ्य

दाहिने हाथ में जल लेकर गुरुदेव को अर्घ्य दें–

नमस्ते देव देवेश! नमस्ते करुणाम्बुधे।
करुणां कुरु मे देव! गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः अर्घ्यं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! आप दया के सागर हैं, देवाधिदेव हैं। कृपा करके इस अर्घ्य को हस्त प्रक्षालन के लिए स्वीकार करें।

आचमन

आचमन के लिए तीन आचमनी जल समर्पित करें–

सर्वतीर्थ समानीतं सुगन्धिं निर्मलं जलम्।
आचम्यतां मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि।

सभी तीर्थों से एकत्र किये गये सुगन्धित एवं पवित्र गंगा जल से आचमन करें।

स्नान

स्नान के लिए आचमनी से गुरु चरणों में या यंत्र पर जल चढ़ावें –

गंगा सरस्वती रेवा पयोष्णि नर्मदा जलैः।
स्नापितोऽसि मया देव! ततः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः स्नानं समर्पयामि।

हे प्रभो! गंगा, सरस्वती तथा देव आदि अनेक तीर्थों के पावन जल से आप को स्नान करा रहा हूं, यह स्नान मुझे शान्ति प्रदान करे।

पंचामृत स्नान

दुग्ध, दही, घी, शहद और शक्कर पांचों चीजों को मिलाकर, पंचामृत बनाकर चढ़ावें –

पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करा युतम्।
पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

दूध, दही, घृत, शहद और शर्करा से मिला पंचामृत स्नान के लिए समर्पित करता हूं।

श्री गुरु चरणेभ्यो पंचामृत स्नानं समर्पयामि।

पंचामृत स्नान के बाद शुद्ध जल से स्नान करा दें।

दुग्ध स्नान

कामधेनु समुत्पन्नं सर्वेषां जीवनं परम्।
पावनं यज्ञ हेतुश्च पयः स्नानार्थमर्पितम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दुग्ध स्नानं समर्पयामि।

कामधेनु का दुग्ध जो सभी को जीवन देने वाला है, जिससे पवित्र यज्ञ किया जाता है, स्नान के लिए समर्पित है, स्वीकार करें

दधि स्नान

पयसस्तु समुद्भूतं मधुराम्लं शशिप्रभम्।
दध्यानीतं मया देव स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दधि स्नानं समर्पयामि।

दुग्ध से बना हुआ मधुर एवं स्वच्छ दधि स्नान के लिए आप स्वीकार करें।

घृत स्नान

नवनीत समुत्पन्नं सर्वसंतोष कारकम्।
घृतं तुभ्यं प्रदास्यामि स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः घृत स्नानं समर्पयामि।

नवनीत(मक्खन) से बना हुआ, सभी को संतुष्टि देने वाला यह घृत स्नान के लिए समर्पित है।

मधु स्नान

तरुपुष्पसमुद्भूतं सुस्वादु मधुरं मधु।
तेजः पुष्टि करं दिव्यं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः मधुस्नानं समर्पयामि।

श्रेष्ठ पुष्पों के रस से निर्मित, तेज, पुष्टि और तुष्टि को प्रदान करने वाला मधु आपको स्नान के लिए अर्पित है।

शर्करा स्नान

इक्षुसार समुद्भूता शर्करापुष्टि कारिका।
मलापहारिका दिव्या स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः शर्करा स्नानं समर्पयामि।

गन्ने के रस से बना हुआ, शरीर को परिपुष्ट करने एवं मल को दूर

करने वाला, स्नान के लिए शक्कर समर्पित करता हूं।

गन्धोदक स्नान

जल में चन्दन या सुगन्धित वस्तु मिलाकर स्नान करावें–

मलयाचल संभूतं चन्दनागरु संभवम्।
चन्दनं देव देवेश! स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः गन्धोदक स्नानं समर्पयामि।

मलयाचल चन्दन तथा अगरु आदि जल में मिला कर, स्नान के लिए समर्पित है, हे गुरुदेव! स्वीकार करें।

उद्वर्त स्नान

घी, शहद, एवं दधि एक साथ मिलाकर चढ़ावें–

नाना सुगन्धि द्रव्याणि चन्दनं रजनीयुतम्।
उद्वर्तनं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः उद्वर्तन स्नानं समर्पयामि।

शुद्ध जल से स्नान करा दें। अनेक सुगन्धित द्रव्य, चन्दन आदि उद्वर्त स्नान के लिए समर्पित हैं।

वस्त्र

वस्त्र चढ़ावें, इसके अभाव में मौली भी चढ़ा सकते हैं–

सर्वभूषादिके सौम्ये लोक लज्जानिवारणे।
मयोपपादिते तुभ्यं गृह्यतां वासी शुभे।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! लोक लज्जा निवारण के लिए, सुन्दरतम वस्त्र मैं आप को समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

यज्ञोपवीत

नवभिस्तुन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम्।
उपवीतं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि।

हे प्रभो! नवीन तन्तुओं से युक्त यह यज्ञीय सूत्र समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

चन्दन

श्री खण्ड चन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम्।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः चन्दनं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! यह चन्दन, जो अत्यन्त सुगन्ध युक्त है, आप स्वीकार करें।

अक्षत

बिना टूटे हुए चावल कुंकुम से रंग कर चढ़ावें–

अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ! कुंकुमाक्ता सुशोभिताः।
मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।

कुंकुम से रंगे हुए चावल जो मंगलप्रद हैं, हे गुरुदेव! आप स्वीकार करें।

पुष्पहार

माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो।
मयोपनीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पमालां समर्पयामि।

मालती आदि सुगन्धित पुष्पों से बनी हुई माला, आप को समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

सौभाग्य द्रव्य

अबीरं च गुलालं च हरिद्रादि समन्वितं।
नाना परिमलं द्रव्यं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः सौभाग्य द्रव्याणि समर्पयामि।

अबीर, गुलाल, हल्दी और अनेक सौभाग्यप्रद द्रव्य स्वीकार करें।

धूप

वनस्पति रसोद्भूतः गन्धाढ्यः सुमनोहरः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः धूपं आघ्रापयामि।

अनेक वनस्पतियों से बना हुआ, सभी देवों को प्रिय सुगन्धित यह धूप आप को समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

दीप

साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया।
दीपं गृहाण देवेश! त्रैलोक्य तिमिरापहा।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।

तीनों लोकों के अन्धकार को दूर करने वाला घी का दीप समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।

नैवेद्य

इसके बाद सुन्दर पात्र में भोज्य वस्तु अर्पित करें–

शर्कराघृत संयुक्तं मधुरं स्वादु चोत्तमं।
उपहार समायुक्तं नैवेद्यं प्रति गृह्यताम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नैवेद्यं निवेदयामि।

शक्कर, घृत आदि से बना हुआ स्वादिष्ट भोजन, तुष्टि के लिए समर्पित है, स्वीकार करें।

फल

इदं फलं मया देव! स्थापितं पुरतस्तव।
तेन मे सफलावाप्तिः भवेज्जन्मनि जन्मनि।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः फलानि समर्पयामि।

ये अनेक प्रकार के फल पुष्टि के लिए समर्पित हैं, आप स्वीकार करें।

आचमन

भोजन और फल अर्पण के बाद तीन आचमनी जल निम्न संदर्भों को बोलकर चढ़ा दें–

एलाशीर लवंगादि कर्पूर प्रतिवासितं।
प्राशनार्थं कृतं तोयं गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदं आचमनीयं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! भोजन के बाद मुख प्रक्षालन के लिए कपूर, लौंग, इलायची आदि से युक्त सुगन्धित जल समर्पित है, स्वीकार करें।

ताम्बूल

लौंग, इलायची तथा सुपारी से युक्त पान चढ़ावें–

पूगीफलं महद् दिव्यं नागवल्ली दलैर्युतम्।
एलाचूर्णादि संयुक्तं ताम्बूलं प्रतिगृह्यताम्।।

श्रीगुरु चरणेभ्यो नमः
मुख शुद्धयर्थं ताम्बूलं समर्पयामि।

हे गुरुदेव! इलायची, लौंग तथा सुपारी आदि से सुवासित यह पान मुख शुद्धि के लिए स्वीकार करें।

दक्षिणा

हिरण्यगर्भ गर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः।
अनन्तपुण्यफलदं अतः शान्तिं प्रयच्छ मे।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि।

सोना आदि दिव्य द्रव्यों से युक्त, गुरु-दक्षिणा हेतु यह द्रव्य स्वीकार करें। इसके बाद गुरु मंत्र का प्रतिदिन चार, आठ, ग्यारह या इक्कीस माला मंत्र जप करें।

मूल मंत्र

।। ॐ नमो नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।।

इस मंत्र को **"हकीक माला"** से पांच माला जप करें।

आरती

मंत्र जप के बाद आरती करें–

ॐ नीराजनं निर्मल दीप्तिमद्भिर् दीपांकुरैरुज्ज्वल मूर्तिमदभिः।
घंटानिनादेन समर्पयामि नारायणाय नरकान्तकाय।।

ॐ कर्पूरगौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्रहारं।
सदावसन्त हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।

नीराजनं समर्पयामि श्री गुरुचरणेभ्यो नमः।

जल आरती

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष(गूं) शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः
शान्तिरोषधयः शान्ति र्वनस्पतयः शान्ति र्विश्वेदेवाः शान्तिः
ब्रह्मशान्तिः सर्व(गूं) शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।।

इस मंत्र को बोल कर आरती के चारों ओर आचमनी से जल घुमाकर छोड़ दें।

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में खुले पुष्प लेकर मंत्र बोलें–

पुष्पांजलिं गृहाणेमं सर्वसौभाग्यदायक।
भक्त्या समर्पितं देव! सुप्रीता भव सर्वदा।।
नाना सुगन्ध पुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पाञ्जलिर्मया दत्ता गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि ।

प्रदक्षिणा

ॐ यानि कानि च पापानि जन्मान्तर कृतानि च।
तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि।

नमस्कार

ॐ नमः सर्वहितार्थाय जगदाधारहेतवे।
साष्टांगोऽयं प्रणामस्ते प्रयत्नेन मया कृतः।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नमस्करोमि।

प्रार्थना

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षया तपसा सह।
अग्निर्मा तत्र नयत्वग्निर्मेधा दधातु मे।।

"ब्रह्म-ज्ञानी पुरुष दीक्षा और तपस्या के द्वारा जिस लोक में जाते हैं, अग्नि मुझे वहां पहुंचाएं और मुझे मेधा प्रदान करें।"

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षया तपसा सह।
वायुर्मा तत्र नयतु वायुः प्राणान् दधातु मे।।

"ब्रह्म-ज्ञानी पुरुष दीक्षा और तपस्या के द्वारा जिस लोक में जाते

हैं, वायु मुझे उस लोक में पहुंचाएं तथा मेरे प्राणों में ऊर्जस्विता प्रदान करें।"

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षाया तपसा सह।
सूर्यो मा तत्र नयतु चक्षुः सूर्यो दधातु मे।।

"दीक्षा और तपस्या के बल से ब्रह्मज्ञानी ब्रह्माण्ड में जहां विचरण करते हैं, सूर्य वहां मुझे पहुंचाएं और मेरी आंखों में दिव्यत्व प्रदान करें।"

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षाया तपसा सह।
चन्द्रो मा तत्र नयतु मनसश्चन्द्र दधातु मे।।

"अपनी दीक्षा और तपस्या के बल से ब्रह्मज्ञानी जिन-जिन स्थानों में या दिव्य लोकों में गमन करते हैं, चन्द्रमा मुझे उन लोकों का दर्शन कराएं तथा मेरे मन को आह्लाद से भर दें।"

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षाया तपसा सह।
सोमो मा तत्र नयतु पयः सोमो दधातु मे।।

"दीक्षा-शक्ति और तपोबल ब्रह्मज्ञानी पुरुष को जिन-जिन लोकों में प्रेरित करते हैं। सोम मुझे उन लोकों में पहुंचा कर अमृतपान कराएं।"

यत्र ब्रह्मविदो यान्ति दीक्षाया तपसा सह।
इन्द्र मा तत्र नयतु बलमिन्द्रो दधातु मे।।

"दीक्षा और तपोबल से ब्रह्मज्ञानी जिन लोकों में स्वेच्छया भ्रमण करते हैं। इन्द्र मुझे उन लोकों में पहुंचा कर बलशाली बनाएं।"

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

साबर-गुरु पूजन

अनमिल आखार अरथ न जापू।
प्रगट प्रभाव महेश प्रतापू।।

आदिकालीन ऋषियों ने बहुत सूक्ष्मता से अपने तथा सम्पूर्ण मानव-जीवन के, और साथ ही साथ अपने आसपास के सभी चराचर प्राणियों, वस्तुओं आदि का अध्ययन किया। उनके द्वारा जब अनुसंधान किया जा रहा था, तब उन्हें ज्ञात हुआ कि सभी जड़-चेतन एक विशेष प्रकार की तरंग के द्वारा अपने आसपास के वातावरण को प्रभावित करते हैं। इस तरंग को उन्होंने 'ध्वनि' शब्द से सम्बोधित किया।

वर्तमान में भी यह सर्वमान्य सिद्धान्त है, कि ध्वनि का प्रभाव सर्वत्र व्याप्त है और प्रत्येक प्राणि ही नहीं, सम्पूर्ण वातावरण इससे प्रभावित होता ही है। हम स्वयं ही अपने दैनिक जीवन पर व्याप्त ध्वनि के महत्त्व को देख कर इस बात की पुष्टि कर सकते हैं, क्योंकि ध्वनि का प्रभाव हमें सम्वेदित करता ही है और हम तत्काल प्रतिक्रिया कर बैठते हैं।

प्राणि मात्र का यह स्वभाव है कि वह विशेषतः निरर्थक और सार्थक ध्वनियों पर ही ध्यान देता है, किन्तु यह हमारी एकांगी चेतना के कारण होता है, जबकि चाहे-अनचाहे सभी प्रकार की ध्वनियों का प्रभाव सहना ही पड़ता है। परस्पर वार्तालाप में मधुर सम्भाषण हो रहा हो, तो हमारे हृदय में अतिशय

आनन्द के कारण तुष्टि की सृष्टि होती है, और अगर यही वार्तालाप बेरुखी और कर्कशतापूर्ण शब्दों से प्रभावित होने लगे तो हमारे हृदय में क्रोध और दुःख के कारण वितृष्णा का भाव उत्पन्न होगा।

यह तो मानव हृदय की बात है, ध्वनि का प्रभाव तो पेड़-पौधों पर भी पड़ता ही है और इस बात की प्रामाणिकता प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्र विशेषज्ञ 'श्री जे० सी० बोस' के द्वारा किये गये एक परीक्षण से स्पष्ट होता है। उन्होंने एक छोटे-से पौधे को अपने प्रयोग के लिए चुना और उसके सम्मुख बहुत ही मधुर स्वर लहरियों में वाद्य यंत्र बजाया और पौधे से निकलने वाली तरंग को जब मीटर के ऊपर देखा, तो उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि एक बहुत ही सुव्यस्थित समयान्तराल से बहुत ही कोमल तरंगें प्राप्त हो रही हैं। फिर उन्होंने उसी पौधे के सामने बहुत ही बेसुरे ढंग से वाद्य यंत्रों को बजाया, तो उस समय प्राप्त होने वाली तरंगों में कोई समानता नहीं थी।

श्री बोस के द्वारा किये गये इस परीक्षण से स्पष्ट होता है कि ध्वनि का प्रभाव मनुष्य पर ही नहीं, पेड़-पौधों और सम्पूर्ण वातावरण पर भी पड़ता ही है। इसी प्रकार का प्रयोग धातुओं पर भी किया गया और उपरोक्त परिणाम ही प्राप्त हुए।

आदिकालीन ऋषियों ने (जैसा कि मैंने पूर्व में ही लिखा है, कि वे ध्वनि के प्रभाव और महत्त्व को जान चुके थे) अपने अनुसंधान को आगे बढ़ाया और इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि प्रत्येक ध्वनि किसी विशेष देवी-देवता की शक्ति से आबद्ध होती है। इस ध्वनि को उन्होंने वर्ण के रूप में प्रस्तुत किया और आज जिन स्वर और व्यञ्जन का प्रयोग हम अपनी मनोभावनाओं को स्पष्ट करने के लिए प्रयुक्त करते हैं यह उन महान् ऋषियों की तपस्या और शोध का ही प्रतिफल है।

प्रत्येक वर्ण किसी न किसी दैवी शक्ति से सम्बद्ध है, और उसका उच्चारण करने पर वह अपने से सम्बन्धित देवी-देवता को सम्वेदित करता ही है। इसी बात को आधार मान कर उन्होंने विविध वर्णों को संयोजित कर मंत्र रचना की। इस प्रकार मंत्र साधना वास्तव में ध्वनि साधना ही है।

पारस्परिक सम्भाषण, वाद्य यंत्र, गायन, रुदन, क्रोध इत्यादि के

कारण उत्पन्न होने वाली ध्वनियों का प्रभाव हमारे ऊपर पड़ता ही है, यह स्पष्ट हो जाने के बाद इस बात में जरा भी शंका नहीं रह जाती कि मंत्रों का प्रभाव व्याप्त होता है कि नहीं, क्योंकि मंत्रों का प्रभाव प्राचीन काल से ही विदित और प्रमाणित है। मंत्रों की शक्ति अदम्य है और प्रभाव असंदिग्ध है, अतः मंत्रोच्चारण के समय उत्पन्न होने वाली ध्वनि अत्यधिक सूक्ष्म, सम्वेदनकारी, वातावरण और मानसिकता में परिवर्तनशीला होती है।

किसी देवी-देवता के लम्बे-चौड़े श्लोक और स्तुति, जो फलदायक प्रभाव नहीं उत्पन्न कर सकते, उसे ही एक छोटा-सा मंत्र तत्काल कर दिखाता है। इसी प्रभाव के कारण मानव-जीवन की सभी आवश्यकताओं – चाहे वह दैविक हो, चाहे वह दैहिक हो और चाहे वह भौतिक हो, की पूर्ति में मंत्र को पूर्ण समर्थ और सहायक स्वीकार किया गया है। इस प्रकार प्रागैतिहासिक काल से ही जीवन के प्रत्येक क्षेत्र, कार्य, प्रयोजन और आयाम को मंत्रों के द्वारा मण्डित किया गया है।

मंत्र निर्माण में यह आवश्यक नहीं है कि कई वर्णों को संगुम्फित किया जाय। मंत्र तो एक अक्षर का भी होता है, जिसे "बीजाक्षरी मंत्र" कहते हैं और पांच, पन्द्रह, बीस, पच्चीस अथवा पचास अक्षरों के संयोजन से भी मंत्रों का निर्माण होता है। समाज के प्रत्येक व्यक्ति बहुविध इन मंत्रों का उपयोग कर लाभान्वित हो सकें, इसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ऋषियों ने अनेक प्रकार के मंत्रों का निर्माण किया। इन मंत्रों का उच्चारण कर देवताओं की प्रसन्नता प्राप्त की जाती है, जिससे मानव को समस्त सुख-सुविधा, ज्ञान-भक्ति, वैराग्य आदि का लाभ प्राप्त होता ही है।

मानव की आवश्यकता के अनुरूप ही विविध मंत्रों का निर्माण किया गया है, इस प्रकार मंत्र कई प्रकार के होते हैं। वेदकालीन मंत्रों की रचना संस्कृत के शब्दों के माध्यम से हुई है, और जब तक निश्चित ध्वनि के साथ मंत्रोच्चार नहीं होगा, तब तक सम्बन्धित देवता का सम्वेदित हो पाना सम्भव नहीं है। यद्यपि कुछ लघु मंत्रों का भी निर्माण हुआ है, जो उच्चारण में सरल एवं शीघ्र याद हो जाने वाले होते हैं, किन्तु अधिकांश मंत्रों को अशिक्षित व्यक्ति प्रयोग कर ही नहीं सकते हैं। यदि करें तो भी उनके द्वारा किया जाने वाला अशुद्ध

उच्चारण और असन्तुलित स्वर मंत्र के प्रभाव को नष्ट कर देता है, परिणामतः साधक का परिश्रम बेकार हो जाता है और लाभ मिलने की आशा, निराशा में परिवर्तित हो जाती है।

मंत्रों की इस क्लिष्टता के कारण ही ऋषियों ने यह विचार किया कि कुछ इस प्रकार के मंत्रों का भी निर्माण होना चाहिए, जिनका अशिक्षित व्यक्ति भी उच्चारण कर सकें और अत्यन्त सुगमता से उससे होने वाले लाभ को प्राप्त कर सकें। इस विचार के कारण ही निर्मित हुए ऐसे 'मंत्र' जिनके प्रयोग में अर्थ, ध्वनि और व्याकरण सम्मति की कोई प्रतिबद्धता नहीं है। लोक कथाओं की तरह ही ये प्राचीन काल से अपना स्थान मानव-समाज में बना कर जन-मानस में पूर्ण विश्वास और श्रद्धा के साथ अवस्थित हैं। इस प्रकार के सहज और तुरन्त फलप्रदायी मंत्रों को "साबर मंत्र" के नाम से सम्बोधित किया गया है। यदि इन मंत्रों को पढ़कर इनके शब्दों के द्वारा अर्थ निकालने का प्रयास किया जाय. . . तो बिलकुल व्यर्थ है ऐसा प्रयास, क्योंकि ये पढ़ने और सुनने में बिलकुल अर्थहीन होते हैं. . . किन्तु वास्तविकता इसके सर्वथा विपरीत है। अपने तुरन्त और अचूक प्रभाव के कारण इन मंत्रों के आगे बड़े-बड़े वैज्ञानिक, शास्त्रज्ञ और ज्ञानी भी आश्चर्यचकित रह जाते हैं।

साबर मंत्र पूर्ण सिद्धि प्रदायक होते हैं, अस्तु इनके शब्द संरचना, अर्थ-दोष आदि पर ध्यान न देकर, ज्यों का त्यों उच्चारण करते हुए ही जप करना चाहिए।

साबर मंत्रों की विशेषता

१. साबर मंत्र का प्रयोग कभी भी, कहीं भी और किसी भी स्थिति में किया जा सकता है।
२. साबर मंत्र का प्रयोग कोई भी चाहे वह किसी भी धर्म या जाति का हो, किसी भी उद्देश्य के लिए कर सकता है।
३. शास्त्रीय और वैदिक मंत्रों की अपेक्षा शीघ्र सिद्ध हो जाते हैं।
४. निश्चित फल प्रदान करते हैं।
५. साबर मंत्र अतिशीघ्र प्रभाव

साबर मंत्र का प्रभाव क्षेत्र

साबर मंत्र का प्रभाव क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। मानव जगत की कोई समस्या, कोई इच्छा अथवा कोई भी उद्देश्य हो, यदि इनका प्रयोग किया जाय, तो निश्चित लाभ प्राप्त होता ही है। साबर मंत्र अमोघ और सहज साध्य होने के कारण दुर्भाग्य, अभिशाप, दरिद्रता, अनिद्रा, भौतिक संकट निवारण, जीव-जन्तु त्रास, विष-प्रभाव, भ्रम, डर, वायु-दोष, मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण, कीलन, स्तम्भन, विद्वेषण, रोगमुक्ति, शत्रुनाश, आपद् निवारण, सुरक्षा, समृद्धि, वैराग्य, भक्ति और ज्ञान ये सब कुछ प्रदान अथवा नष्ट कर देने में पूर्ण समर्थ होते हैं, इस प्रकार संसार की प्रत्येक समस्या के निवारण का सामर्थ्य साबर मंत्रों में निहित है।

कार्य भेद के अनुसार ही मंत्रों के भी विभिन्न प्रकार होते हैं, इसलिए किसी कार्य विशेष के लिए निर्दिष्ट मंत्र विशिष्ट का ही जप करना चाहिए। कभी-कभी ऐसा भी देखने में आता है, कि एक ही समस्या के निवारण के लिए कई साबर मंत्रों की रचना हुई है। ऐसी दशा में योग्य गुरु से निर्देश प्राप्त कर साधक को अपने अनुकूल मंत्र का प्रयोग करना चाहिए।

साबर मंत्र सिद्धि का विधान

साबर मंत्र प्रयोग करने के लिए किसी विशेष विधि-विधान की आवश्यकता नहीं होती है, कुछ लघु नियम हैं जिन्हें अवश्य ध्यान में रखना चाहिए—

१. किसी भी पुस्तक को पढ़ कर, उसमें छपे साबर मंत्रों को पढ़ कर प्रयोग कर लेना और इच्छित फल न प्राप्त होने पर साबर मंत्र को दोष देना उचित नहीं है, क्योंकि भ्रष्ट, विकृत् और शब्दान्तरित मंत्र अपने प्रभावशीलता से वंचित हो जाते हैं, इसलिए साबर मंत्र किसी प्रामाणिक पुस्तक अथवा योग्य गुरु द्वारा ही ग्रहण करना चाहिए।

२. अपनी सुविधानुसार दिवस चुन कर, उस दिन स्नानादि से निवृत्त हो, शुद्ध श्वेत वस्त्र धारण कर, किसी एकान्त स्थान में अथवा अपने पूजा स्थान

में, अपने इष्ट देव के सम्मुख उत्तराभिमुख अथवा पूर्वाभिमुख होकर ऊनी आसन पर बैठ कर पूर्व निर्धारित संख्या में मंत्र जप सम्पन्न करें।

३. मंत्र जप समाप्ति के पश्चात् लोबान, धूप अथवा हवन सामग्री किसी भी एक वस्तु के द्वारा मूल मंत्र को पढ़ते हुए ग्यारह, बारह, इक्यावन या एक सौ आठ बार हवन करें। ऐसा करने पर मंत्र सिद्ध हो जाता है।

४. सिद्ध किये हुए मंत्र को जब भी जरूरत पड़े, तो मात्र पांच, सात या ग्यारह बार पढ़ कर जल या कोई पदार्थ मंत्राभिषिक्त करके प्रक्षिप्त कर देने पर अभीष्ट कार्य पूरा हो जाता है।

५. मंत्र की शक्ति यथावत् बनाये रखने के लिए आवश्यक है कि थोड़े-थोड़े समय अन्तराल पर, अर्थात् साल में दो या तीन बार उसी विशिष्ट पर्व या मुहूर्त पर मंत्र जप और हवन कर दिया जाय। ऐसा करने से मंत्र की शक्ति सम्वर्द्धित हो जाती है।

६. अपने द्वारा सिद्ध किये गये मंत्र तथा विधि को अपने परम प्रिय व्यक्ति को भी नहीं बताना चाहिए, क्योंकि बताने पर मंत्र-शक्ति क्षीण हो जाती है।

साबर मंत्र हेतु सतर्कता

साबर मंत्र सिद्ध कर रहे साधक को ध्यान में रखना चाहिए कि वह शब्द-शुद्धि, व्याकरण, मूल धातु और भाषा-बोली के चक्कर में न पड़ कर उसे उसी रूप में पढ़ें जिस रूप में वे लिखे गये हैं, क्योंकि इनके अव्यवस्थित क्रम में ही निहित है, वह दिव्य शक्ति जिसके माध्यम से हमारे कार्य सम्पादित होते हैं। साबर मंत्र की महत्ता बताते हुए 'तुलसीदास जी' ने लिखा है–

अनमिल आखर अरथ ना जापू,
प्रगट प्रभाव महेस प्रतापू।
कलि विलोकि जगहित हर गिरिजा,
साबर मंत्र जाल जिन सिरिजा।।

साबर मंत्र के उत्पत्ति कर्ता

साबर मंत्र किसी भी कार्य को करने में अपने जनक, अपने प्रणेता भगवान् शिव की तरह ही पूर्ण सक्षम हैं। भूत भावन भगवान् शिव जिस प्रकार विचित्र और कौतूहल पूर्ण होते हुए भी तुरन्त और आशुफल प्रदायक हैं, उसी प्रकार साबर मंत्र प्रभावी हैं। भगवान् शिव की तरह ही ये पूर्ण प्रभाव सम्पन्न और शक्तिशाली होते हैं। बाह्य रूप से देखा जाय तो जिस प्रकार भगवान् शिव की वेशभूषा अत्यधिक विचित्र होती है, वैसे ही साबर मंत्रों के शब्द समूह भी अत्यधिक विचित्र प्रतीत होते हैं।

सभी देवताओं से सर्वथा अलग है भगवान् शिव का वस्त्र विन्यास और जीवनचर्या. . . थोड़ा-सा ध्यान दें तो स्पष्ट हो जायेगा। भगवान् आशुतोष जैसा उदार, दयालु, पर-रक्षक, परम सन्तुष्ट, वीतरागी, सर्वसमर्थ होकर भी सर्वथा निर्दम्भ अन्य कोई देवी या देवता नहीं हैं।

इतना अधिक सामर्थ्यवान् होने के बाद भी अन्य देवताओं की भांति उन्होंने न तो विविध रत्नाभूषणों से अपने-आप को अलंकृत किया है और न ही सुस्वादु भोजन की उन्हें आवश्यकता है— सिर पर जटाजूट, गले में रुद्राक्ष की माला, कमर में बाघम्बर, सर्पभूषण और भोज्य पदार्थ के रूप में घोर विषाक्त वस्तुएं— धतूरा, मदार, अहिफेन। रहते हैं ऐसे स्थान पर जहां किसी भी जीव-जन्तु का होना सम्भव नहीं है, हिमालय के उत्तुंग शिखर कैलाश की हिम शिलाओं पर निवास।

इतनी विचित्रताओं से युक्त होने के बावजूद भी भगवान् शिव संसार के सर्वाधिक प्राणियों के उपास्य देव न होकर देवताओं के भी आराध्य देव हैं, और यही कारण है कि अपने प्रणेता भगवान् आशुतोष की तरह ही शब्द संयोजन में विचित्र व निरर्थक प्रतीत होते हुए भी साबर मंत्र त्वरित वेग तथा अदम्य क्षमता के साथ अलौकिक प्रभावयुक्त और सर्व संकट निवारक होते हैं।

साबर मंत्रों के रचनाकार

साबर मंत्र की रचना किसने प्रारम्भ की, इस विषय पर विभिन्न मत

प्राप्त होते हैं, और बहुमत के साथ हमारे सामने यही तथ्य आता है कि मां पार्वती के कहने पर भगवान् शिव ने सर्वजन की सहजता के लिए लोक-कल्याण हेतु इनकी सृष्टि की। उन्होंने सूत्र रूप में कुछ अति सरल शब्द समूहों को शब्दसंयोजना और व्याकरण की नियमबद्धता से अलग हट कर इन्हें रचा और साबर नाम से सम्बोधित किया।

इसके साथ ही यह भी तथ्य प्राप्त होता है, कि जब द्वापर युग का अवसान सन्निकट था और कलिकाल का प्रारम्भ हो रहा था, उस समय भगवान् शिव ने कलियुग में वास करने वाले प्राणियों को कुसंग, दुराचार, दुःख, दैन्य आदि के प्रभाव से उत्पन्न दरिद्रता, रोग, शोक आदि कष्टों के निवारण हेतु नाथ पंथ की स्थापना करने का विचार किया। भगवान् शिव के इस कल्याणकारी विचार से ब्रह्मा और विष्णु भी पूर्ण सहमत हो गए।

भगवान् शिव के इस विचार को क्रिया रूप में परिवर्तित करने के लिए ही महासती अनुसूइया को दिये गए वरदान के कारण उन तीनों ने अपने-अपने अंश द्वारा अनुसूइया के गर्भ से जन्म लिया। ब्रह्मा के अंश रूप में चन्द्रमा, शिव के अंश रूप में दुर्वासा ऋषि और विष्णु के अंश रूप में भगवान् दत्तात्रेय का जन्म हुआ।

भगवान् दत्तात्रेय नाथ पंथ के आदि गुरु हैं, क्योंकि इनमें सिर्फ विष्णु का अंश नहीं, शिव और ब्रह्मा के भी अंश विद्यमान हैं। मुख्यतः विष्णु का अंश रूप होने से भगवान् विष्णु के चौबीस अवतारों में दत्तात्रेय अवतार की भी गणना होती है। नारायणों के अवतार रूप मुख्य नवनाथों की दीक्षा इन्हीं के द्वारा हुई।

ये नवनारायण और नवनाथ इस प्रकार हैं—

नवनारायण	**नवनाथ**
कवि नारायण	मत्स्येन्द्रनाथ
हरि नारायण	गोरखनाथ
अन्तरिक्ष नारायण	जालंधरनाथ
प्रबुद्ध नारायण	कानीफानाथ

द्रुमिल नारायण	भर्तृहरिनाथ
करभाजन नारायण	गहिनीनाथ
चमस नारायण	रेवणनाथ
आविर्होत्रि नारायण	नागनाथ
पिप्लायन नारायण	चर्पटीनाथ

त्रिदेवों के प्रतीक नवनारायणों के उपरोक्त अवतार अयोनि संभव हैं। इनमें से किसी ने मछली के पेट से, किसी ने अग्नि कुण्ड से, किसी ने हाथी के कान से, किसी ने हाथ की अंजली से तो किसी ने कुश की झाड़ी से अवतार लिया है।

इन सभी नाथों को भगवान् दत्तात्रेय ने दीक्षा प्रदान की और योग विद्या, अस्त्र-शस्त्र विद्या, मंत्र, तप आदि विषयों में पारंगता प्रदान की। इन नवनाथों के अन्दर इतनी क्षमता थी, कि ये कुछ ही पल में कोई भी कार्य कर सकते थे। परकाया प्रवेश, पृथ्वी, आकाश, पाताल गमन, मृत व्यक्ति को जीवित करना आदि अनेक असम्भव क्रियाओं को भी सम्भव कर देने की क्षमता इनके अन्दर थी।

मुद्रा, धांधरी, सुमिरनी, आकारी, कंठा, सोटा, भस्म, त्रिपुण्ड्र, गुदड़ी तथा खप्पर का स्थान इनके वेश-भूषा में प्रमुख है। कुछ नाथ योगी श्रृंगी, चिमटा और त्रिशूल भी धारण करते हैं। मत्स्येन्द्रनाथ व गोरखनाथ के अनुयायी कान में गोल छल्ले जैसा कुण्डल धारण करते हैं।

उपरोक्त प्रमुख नवनाथों के बारे में कहा जाता है, कि ये आज भी विभिन्न दुर्गम स्थानों पर साधना में रत हैं. . . और जब कभी ये अपने भक्त पर प्रसन्न होते हैं, तो उन्हें दर्शन भी प्रदान करते हैं।

अप्रकट देवता की आराधना नहीं हो सकती है, गुरु ही प्रत्यक्ष और चैतन्य देवता हैं, जो शिष्यों के कल्याण के लिए मानव देह धारण करते हैं, साबर साधनाओं के एकमात्र मसीहा गुरु ही होते हैं। उनके ही प्रथमोपचार की आवश्यकता है; उपचार का अर्थ है– अपने स्थूल स्वरूप के बाह्य प्रतीक द्वारा निवेदन।

प्रातः स्मरण

साधक ब्रह्ममुहूर्त में उठकर शय्या में ही बैठे-बैठे गुरु-स्मरण करें—

आनन्दयानन्दकरं प्रसन्नं,
ज्ञानस्वरूपं निजबोधरूपम् ।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्यं;
श्री मद्गुरुं नित्यमहं भजामि ।।

पहले मानसिक रूप से ही देवताओं की पूजा करें—

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि ।
हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि ।
यं वाय्वात्मकं धूपम् आघ्रापयामि ।
रं वह्न्यात्मकं दीपं दर्शयामि ।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं निवेदयामि ।
सं सर्वात्मकं ताम्बूलादि सर्वोपचारान् समर्पयामि ।

गुरु मण्डल स्मरण

स्नान के बाद साधक शुद्ध वस्त्र पहन कर पीतासन या श्वेत आसन पर पूर्वाभिमुख बैठें, अपने सामने छोटी चौकी पर किसी पात्र में 'गुरु यंत्र' को स्थापित करें। निम्न सन्दर्भों के द्वारा गुरु मण्डल का स्मरण करें—

ॐ नवनाथ गुरुभ्यो नमः ।
ॐ निखिलेश्वरानन्दाय परम गुरवे नमः ।
ॐ सच्चिदानन्दाय पारमेष्ठि गुरवे नमः ।
ॐ दिव्यौघ गुरुं नमामि ।
ॐ सिद्धौघ गुरुं नमामि ।
ॐ मानवौघ गुरुं नमामि ।

ध्यान

दोनों हाथ जोड़ कर गुरुदेव का ध्यान करें–

गुरुर्वै सतां देहि मदैव ध्यानं
प्रज्ञाप्रदं सिद्धि मदं च ध्यानम् ।
देवत्व दर्शन मदे भव सिन्धुपारं,
गुरुर्वै कृपात्वं गुरुर्वै कृपात्वं ।।

"हे गुरुदेव! आप ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश से भी अधिक तेजोमय हैं, क्योंकि आप साक्षात् ब्रह्मस्वरूप हैं, आप ही हमें ध्यान, ज्ञान एवं सिद्धियां प्रदान कर सकते हैं, रूपवान् तथा यौवनवान् बना सकते हैं, हम केवल आप की ही शरण में हैं।"

दिशा रक्षण

बायें हाथ में पीली सरसों लें दाहिने हाथ से ढक दें, उसके बाद निम्न मंत्र उच्चारण करके इसे मंत्रबद्ध करें और सरसों को सभी दिशाओं में थोड़ा-थोड़ा फेंक दें–

ॐ शत्रुनां ज्वल ज्वल प्रज्ज्वल प्रज्ज्वल ह्रीं क्रीं क्रीं ह्रीं भंजय
भंजय नाशय नाशय दिशां रक्ष रक्ष मां सिद्धिं देहि देहि फट् ।

देह रक्षा

अपनी देह की सुरक्षा के लिए किसी पात्र में जल लेकर उसे निम्न मंत्र से सात बार पढ़कर अभिमंत्रित कर लें तथा अपने चारों ओर सुरक्षा चक्र खींच लें–

ॐ नमो आदेश गुरु को, वज्र वज्री वज्र किवाड़
वज्री में बांधा दसों द्वार को घाले,
उलट वेद वाही को खात ।
पहली चौकी गणपति की,

दूजी चौकी हनुमन्त जी की,
तीजी चौकी भैरों की, चौथी चौकी राय की,
रक्षा करने को श्री नृसिंह देव जी आवे, शब्द सांचा पिण्ड
कांचा फुरो मंत्र ईश्वरी वाचा। सत्यनाथ आदेश गुरु का।

आसन

कुछ पुष्प, आसन के लिए समर्पित करें तथा निम्न मंत्र पढ़ें–

ॐ राम जी नमो सत आदेश, गुरु जी कु आदेश।
ॐ गुरु जी अमर जोगी, अमर काया, अमर लोक से उतरी
माया, ब्रह्मा विष्णु महेश जाया।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आसनं समर्पयामि।

स्नान

गुरु चरणों में जल समर्पित करें–

गंगाक्लिन्न जटा भार सोम सोमार्धशेखर।
नद्या मया समानीतैः स्नानं कुरु महेश्वर।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः स्नानं समर्पयामि।

गन्ध

चन्दन या कुंकुम चरणों में अर्पित करें–

नमस्सुगन्धदेहाय ह्यबन्धफलदायिने।
तुभ्यं गन्धान् प्रदास्यामि सर्वाज्ञानविभञ्जन।।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

अक्षत

कुछ चावलों के दाने चरणों में समर्पित करें–

अक्षतान् धवलान् देव सिद्धगन्धर्व पूजित।
सुन्दरेशं नमस्तुभ्यं गृहाण वरदो भव।।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः अक्षतान् समर्पयामि।

पुष्प

पुष्प माला गुरु चरणों में समर्पित करें–

तुरीय वन सम्भूत परमानन्द सौरभं।
पुष्पं गृहाण सोमेश पुष्प चाप विभंजन।।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्प मालां समर्पयामि नमः।

पाद पूजन

निम्न मंत्रों से चरणों में चावल चढ़ावें–

ॐ भवाय नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ गुरुभ्यो नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ परमगुरुभ्यो नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ रुद्राय नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ मृडाय नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ भवनाशाय नमः पादौ पूजयामि नमः।
ॐ सर्वाज्ञान हराय नमः पादौ पूजयामि नमः।

धूप

अगरबत्ती या धूप समर्पित करें–

धराधर स्त्रितानाथ धूर्जटे धवलाप्रभ।
धूपमाघ्रापयामीश दशांगं गुग्गुलान्वितम्।।
श्री गुरु चरणेभ्यो नमः धूपमाघ्रापयामि।

दीप

दीप समर्पित करें—

साज्यावर्तियुतं दीपं सर्वमंगलकारकम्।
समर्पयामि पश्येदं सोमसूर्याग्निलोचन।।

नैवेद्य

इन मंत्रों का उच्चारण करते हुए भोग लगा दें—

नैवेद्यं षड्रसोपेतं मिष्टान्नं च घृतान्वितं।
मधुक्षीरादि संयुक्तं गृह्यतां गुरुनायक।।

यस्य स्मरण मात्रेण सफला सन्ति सत्क्रियाः।
तस्य देवस्य प्रीत्यर्थमिदं ऋतुफलार्पणम्।।

ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा,
ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा।

नीराजन

ॐ सोमो वा एतस्य राज्यमादत्ते। यो राज्यं सन् राज्यो वा सोमेन यजते। देव सुषामेतानि हवींषि भवन्ति, एतावन्तौ वै देवाना सवाः, त एनं पुनः सुवन्ते राज्याय। देवासू राजा भवति।

श्री. गुरु चरणेभ्यो नमः नीराजनं समर्पयामि।

मूल मंत्र

टारनभ्रम अघन की सेना, सतगुरु मुकुति पदारथ देना,
ठाकत दुगदा निरमल करणम् द्वार सुधामुख आपदा हरणम्,
धावत द्वैव हन्हेरी मन की, णासत गुरुभ्रमता सब मन की।

या किरिया सोऊ पिछाना, अद्वैत अखण्ड आप माना,
रम रहया सब में पुरुष अलेखं आद अपार अनाद अभेखम्,

डा डा मिति आतम दरसाना प्रकट के ज्ञान जो तक माना
लवलीन मय आदम पद ऐसे, ज्यूं जल जले भेद कहुं कैसे,
वासुदेव बिन और को
नानक ॐ सोऽहं आतम सोऽहम्।।

इस मूल मंत्र का इक्कीस बार पाठ करें।

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में पुष्प लेवें तथा निम्न मंत्र पढ़ें–

ॐ परमहंसाय विद्महे महातत्त्वाय
धीमहि तन्नो हंसः प्रचोदयात्।
ॐ महादेवाय विद्महे रुद्र मूर्तये
धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्।
ॐ गुरुदेवाय विद्महे परमब्रह्माय
धीमहि तन्नो गुरुः प्रचोदयात्।

नमस्कार

इसके बाद दोनों हाथ जोड़कर गुरु प्रार्थना करें–

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः।।

ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च,
नमः शंकराय च मयस्कराय च,
नमः शिवाय च शिवतराय च।

न गुरोरधिकं तत्त्वं न गुरोरधिकं तपः।
तत्त्व ज्ञानं परं नास्ति तस्मै श्री गुरवे नमः।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै इष्टदेव स्वरूपिणे।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसार संज्ञकम्।।

क्षमा प्रार्थना

आवाहनं न जानामि न जानामि विसर्जनं।
पूजां चैव न जानामि क्षमस्व परमेश्वर।।

मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर।
यत् पूजितं मयादेव परिपूर्णं तदस्तु मे।।

यदक्षरं पदं भ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत् सर्वं क्षम्यतां देव क्षमस्व परमेश्वर।।

समर्पण

गुह्याति गुह्य गोप्ता त्वं गृहाण तवार्चनम्।
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत् प्रसादान्महेश्वर।।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

गोम्पा-गुरु पूजन

भारतीय मनीषियों ने तीन मुख्य साधना-धारा का उपदेश दिया है—ज्ञान, योग और भक्ति; विचार करने पर विदित होता है कि ये तीनों परस्पर भिन्न हैं, फिर भी इनमें तारतम्य है। बिना ज्ञान के योग नहीं हो सकता, योग की चरम स्थिति ज्ञान ही है। अनुरक्ति-रूप भक्ति के बिना न तो ज्ञान में गति होगी और न ही योग सम्भव है, जब तक इन तीनों का सामंजस्य नहीं होगा तब तक आत्म-कल्याण की आशा व्यर्थ है।

गुरु का वस्तुतः स्वरूप निर्गुण और निराकार है। प्रथमतः इस स्वरूप का ध्यान एवं पूजन तो संभव हो नहीं सकता, फिर भी प्राथमिक स्थिति में साकार रूप बाह्य गुरु की आकृति का पूजन या ध्यान करना चाहिए।

गुरु मूर्ति की आराधना सन्निहित अवस्था में हो सकती है। साधक और गुरु की परस्पर अभिमुख अवस्था में ही, गुरु के साथ साधक का व्यवहार प्रारम्भ होता है; आविर्भाव के पश्चात् गुरु को सन्निहित करने के लिए चेष्टा आवश्यक है, सान्निध्य के पश्चात् पूजा का सूत्रपात होता है। आविर्भाव के पश्चात् उपचार द्वारा गुरु मूर्ति की सेवा करनी चाहिए, अप्रकट देवता की पूजा नहीं हो सकती, प्रकट होते ही पूजा की आवश्यकता होती है। पूजा पंचोपचार

या षोडशोपचार से होनी चाहिए। उपचार का अर्थ है– अपने स्थूल स्वरूप के बाह्य प्रतीक का निवेदन। गन्ध से पृथ्वी तत्त्व का, पुष्प से आकाश तत्त्व का, धूप से वायु तत्त्व का, दीप से तेज तत्त्व का, नैवेद्य से जल तत्त्व का तात्पर्य ध्वनित होता है।

सिद्धं सत्सम्प्रदाये स्थिरधियमनघं श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं,
सत्वस्थं सत्यवाचं समयनियतया साधुवृत्या समेतं।
दम्भा सूयादि मुक्तं जित विषयगणं दीर्घबन्धुं दयालुं;
स्खालित्ये शास्तितारं समरहित परं देशिकं भूष्णुरीप्सेत्।।

सभी साधनाओं में पारंगत, श्रेष्ठ गुरु परम्परा में दीक्षित, स्थिर बुद्धि युक्त, पाप रहित, श्रोत्रिय, ब्रह्मनिष्ठ, सात्विक, सत्यवक्ता, साधु वृत्ति से परिपूर्ण, दम्भ, असूयादि दोषों से दूर, जितेन्द्रिय, परमदयालु, शिष्यों को दोषों से हटाने वाले, सभी के परम हितैषी– ऐसे ही सद्गुरु के मिलने पर जीवन सार्थक हो सकता है।

शशिहीनं यथा रात्री,
रविहीनं यथा दिनम्।
नृपहीनं यथा राज्यं;
गुरुहीनं च मन्त्रकम्।।

"चन्द्रमा" के बिना रात्रि श्री विहीन हो जाती है, वह अमृत वर्षा सम्भव ही नहीं है, जो चन्द्रमा के होने पर होती है, उमंग, मस्ती तथा आनन्द सब चन्द्रमा में ही है। "सूर्य" के न होने पर दिन अपना सभी सत्व या वैभव खो देता है, पास कुछ बचा ही नहीं रहता जिस पर वह गर्व कर सके, उसकी समस्त तेजस्विता और ओजस्विता सूर्य के साथ समाप्त हो जाती है। "राजा" रहित राज्य का शासन अस्त-व्यस्त हो जाता है, प्रजा उच्छृंखल हो जाती है, अनुशासन के अभाव में शक्तिशाली दम्भी और लोलुप जन, प्रजा को तंग करते हैं, अर्थव्यवस्था असंतुलित होने से प्रजा दुःखी हो जाती है। "गुरु" के बिना मंत्र साधना की कल्पना ही नहीं हो सकती, साधक के सभी प्रयास गुरु के बिना व्यर्थ हैं, साधक को यही ध्येय रखना चाहिए कि उसे सद्गुरु मिलें. . . मिलें

और उनके दोनों चरणों को पकड़ ले, क्योंकि–

ॐ दिवोवतां च श्रियै सः गुरुर्वै सह हिते नः।

साधक एवं देवता के बीच में गुरु ही अटूट कड़ी हैं, जो साधक को सिद्धियां, प्रियता एवं श्रेय प्रदान करने वाले हैं। गुरु मिलें और गुरु को शिष्य समझ जाय, कि यही सद्गुरु हैं, जो मेरा कल्याण कर सकते हैं, जो मुझे सौभाग्य प्रदान कर सकते हैं, पूर्णता देकर मेरे पाप, ताप और संताप को समाप्त कर सकते हैं– ऐसे सद्गुरु को पहचानने के लिए साधक को सुविज्ञ होना चाहिए।

ॐ वेताः विदवदैर्न प्रोचर्हति।
श्रियै वदन्त पूर्णन्न वै चः।।

जो शिष्य मेधावान् है, चैतन्य है, सदसत् की पहचान कर सकता है वही गुरु के चरणों का साहचर्य पाने में क्षमतावान् हो सकता है। वही पूर्ण समर्पण के साथ उस ज्ञान और विज्ञान को श्रेष्ठता के साथ प्राप्त कर सकता है। ऐसे महत्त्वाकांक्षी साधक का सतत यही चिन्तन रहता है–

ॐ विद्यान्यै विद् विद्महे श्रियत्वं सह श्रिये सदन्नः।

संसार की सम्पूर्ण साधनाएं एवं विद्याएं, हे गुरुदेव! मैं आप की कृपा से प्राप्त कर सकूं, जिससे मैं अद्वितीय व्यक्तित्व बन कर अन्य सभी प्राणियों का कल्याण कर सकूं।

"तिब्बत" तंत्र साधना का अद्वितीय जाज्वल्यमान प्रसिद्ध पीठ रहा है। यहां के लामाओं ने अपनी साधनाओं के माध्यम से जिन ऊंचाइयों को स्पर्श किया है, वह सब कुछ आश्चर्यचकित कर देने वाला है। उन्होंने प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करके उन सभी रहस्यों को प्राप्त किया है जो सहज सम्भव नहीं हैं। स्वभाव से लामा अत्यन्त ही मृदु होते हैं, छल-कपट तो उनमें लेशमात्र भी नहीं होता। संयुक्त रूप से वे सभी बौद्ध मठों में रहते हैं, जिसे स्थानीय भाषा में 'गोम्पा' कहा जाता है। यहीं रहकर वे अपनी साधनाएं सम्पन्न करते हैं।

चीन के आक्रमण से पूर्व तिब्बत स्थित पोटाला, कपोरी, द्रेपुंग और सेरा आदि मठों का बहुत ही सम्मान था, पोटाला से दलाई लामा के निष्कासन

के बाद इन मठों पर चीनियों का कब्जा हो गया, और उनके हाथों तिब्बती ग्रंथों को (जो साधनाओं से सम्बन्धित थे) बहुत ही नुकसान पहुंचा। बहुत से बौद्ध भिक्षुओं की भी निर्ममता से हत्या कर दी गई। इतना होने पर भी तिब्बत की तंत्र और साधनात्मक परम्परा को पूर्णरूप से नष्ट करने में विदेशी असफल ही रहे, क्योंकि वे कम ऊंचाइयों पर स्थित मठों तक तो पहुंचे, किन्तु स्थानु, ऊरूंग और गौपांग मठों में, जो कि हिमालय की सुदूर ऊंचाइयों पर स्थित हैं, वहां वे नहीं जा सके, फलस्वरूप हजारों वर्षों की आयु प्राप्त लामा आज भी विद्यमान हैं और निरन्तर तंत्र पर शोध कर रहे हैं—

तिब्बत में मुख्यतः लामाओं की तीन परम्पराएं हैं— हिनयान, महायान और दिव्ययान, हालाकि इन तीनों परम्पराओं में काफी मतभेद है, पर फिर भी इनमें एक समानता भी है, और वह है—गुरु का महत्त्व। तिब्बत की सभी परम्पराओं में गुरु का स्थान सबसे ऊंचा है, महत्त्वपूर्ण है और वे उन्हें 'दौन दम पा इलाह' (परब्रह्म) की संज्ञा देते हैं। उनके अनुसार गुरु की स्थिति ब्रह्म से भी ऊंची है। लामा लोग 'ब्रह्मत्व' प्राप्ति को पूर्णता नहीं मानते, अपितु उसके बाद की दो और स्थितियों को आत्मसात् करके ही अपने जीवन को वे श्रेष्ठता प्रदान करते हैं, ये दो स्थितियां हैं— 'अण्डज' और 'गुरुत्व'।

अण्डज का अर्थ है— अन्तरिक्ष के वे सभी लोक जो कि गुरु की देह से निरन्तर निकलने वाली दिव्य तरंगों से निर्मित हैं। जब कोई लामा इन सभी लोकों को तथा गुरु की पराशक्तियों को पहचान लेता है, तब वह गुरुत्व प्राप्त करने की पूर्ण स्थिति पर पहुंच जाता है. . . और यह स्थिति तब पूर्ण होती है जब वह लामा पूर्णरूप गुरु, जो कि सृष्टि की सब से तीव्र शक्ति के स्रोत हैं, अपने शरीर में समाहित करके एकात्मयता स्थापित कर लेता है. . .

इस पूर्णता प्राप्ति से साधक की छठी इन्द्रिय स्वतः जाग्रत हो जाती है, और वह सभी परा-अपरा शक्तियों का स्वामी हो 'गुरुत्व' प्राप्त कर लेता है; यह स्थिति प्रायः प्राप्त करना इतना सरल नहीं है, अपितु कष्ट साध्य है।

'औलम्बा' और 'मिलारेपा' जैसे लामाओं ने जिस पद्धति से गुरु साधना या पूजन सम्पन्न करके पूर्णता प्राप्त की है, उन विशेष मंत्रों को जिनके जप से वे सिद्धि पुरुष बन पाये, वह पद्धति प्रस्तुत की जा रही है।

यह गुरु पूजन पद्धति गोपनीय रही है, किसी ग्रंथ में प्रकाशित नहीं है, केवल मौखिक गुरु-शिष्य परंपरा से शिष्य को प्रदान किया जाता है, इस विधि की गोपनीयता का यही प्रमाण है।

पूजन विधि

इस पूजन विधान के लिए साधक प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उठकर शुद्ध जल से स्नान करके धौत एवं स्वच्छ वस्त्र पहन कर पूर्वाभिमुख, सफेद, पीला या मृग चर्म के आसन पर बैठ जायें। सामने चौकी पर चांदी या सोने से बनी चरण पादुका स्थापित कर लें, दोनों में सोलह-सोलह चक्र अंकित करवा लें, इन बत्तीस (३२) चक्रों का अर्थ बहुत गूढ़ है– बाईं पादुका पर अंकित चक्र 'अपरा शक्ति' के द्योतक हैं, दाईं पादुका के सोलह चक्र 'परा शक्ति' के द्योतक हैं।

तिब्बत में पूर्णता का अर्थ आंखें बन्द करके बैठना नहीं है, न ही कोरी भौतिकता को ही वे मान्यता देते हैं। उनके अनुसार भौतिकता और आध्यात्मिकता का उपयुक्त सामंजस्य ही श्रेष्ठतम है। इसलिए जहां बाईं पादुका को उन्होंने भौतिक पूर्णता देने वाला कहा है, तो वहीं दाईं पादुका आध्यात्मिक पूर्णता की द्योतक है।

ये हैं बत्तीस बिन्दु जो साधनाओं द्वारा प्राप्तव्य हैं–

अपरा (भौतिक)	परा (आध्यात्मिक)
मान	मूलाधार
सम्मान	स्वाधिष्ठान
यश	मणिपुर
प्रतिष्ठा	अनाहत
ऐश्वर्य	विशुद्ध
धन	आज्ञा बिन्दु
धान्य	सहस्रार
शान्ति	कलावद
पद	निर्वाधिका

	अर्धचन्द्र
तुष्टि	वाद
अपराजय	नादांत
सुन्दरता	शक्ति
वाक्चातुर्य	व्यापिका
नीति	समना
पूर्णता	उन्मना
सफलता	

किसी अन्य पात्र में रखकर उन पादुकाओं को पंचामृत (दूध, दधि, घी, शहद और शक्कर) से स्नान कराकर शुद्ध जल से धो लें, पोंछ दें; फिर उस पात्र में जिसमें पादुकाओं को रखना है कुंकुम या चन्दन से "हुं" बीज बनाकर पादुका रख दें। धूप, दीप जलावें, अन्य सामग्री को भी अपने पास रख लें।

पवित्रीकरण

इसके बाद साधक बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ से ढक लें फिर निम्न मंत्र पढ़कर जल को अपने ऊपर छिड़क कर पवित्रीकरण कर लें–

नमो गुरुवै शिवरूपे उश्निश्यम विशुद्धै स्वाहा।

इसके बाद प्राणायाम करके अन्तःशुद्धि कर लें तथा पहले मानसोपचार पूजन करें–

लं पृथिव्यात्मकं गन्धं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।
हं आकाशात्मकं पुष्पं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।
यं वाय्वात्मकं धूपं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।
रं वह्न्यात्मकं दीपं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।
वं अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।
शं शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्री पादुकां नमः अनुकल्पयामि।

ध्यान

दोनों हाथ जोड़ें–

ॐ सदाः सदां बिग्लोवतां सा
क्रियते चिन्त्यं विचिन्त्यं देहोत्था
युक्त्वां साः पूर्वा परो क्षात्वां साः
चिन्त्यो वदान्य मुतावाः
उपस्थेऽग्ने अवलब्धं रक्षतांपूर्वाः।

"शिष्यों के हृदय-रूपी कमल में आत्मभाव से बैठे हुए, योगियों के द्वारा ध्यान योग्य, जिनकी साधना के बाद मृत्यु भय नहीं रहता, ऐसे चैतन्य स्वरूप गुरु का मैं हृदय से ध्यान करता हूं।"

आवाहन

फिर 'पद्म मुद्रा' द्वारा निम्न मंत्र का पांच बार उच्चारण करके गुरुदेव का आवाहन करें—

ॐ श्री गुरुर्वै आहूतं पूर्णिमा त्वं सदं सः।
विप्रेयता पूर्वे श्रियं च मदैव चित्तं।।

अक्षत

निम्न मंत्र को पढ़कर चरणों (पादुकाओं) में अक्षत चढ़ावें—

ॐ परमश्रेष्ठ लामायै निखिलेश्वरायै पद्मे हुम्।

पीठ पूजा

'शंखमुद्रा' से पादुका स्थित बत्तीस चक्रों का पूजन करते हुए अक्षत और पुष्प चरणों (पादुकाओं) में चढ़ावें—

ॐ गुरुभ्यो नमः।
ॐ परमगुरुभ्यो नमः।
ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः।
ॐ पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः।
ॐ आधार शक्तये नमः।
ॐ प्रकृत्यै नमः।

ॐ	अनन्ताय	नमः ।
ॐ	पृथिव्यै	नमः ।
ॐ	सर्वदेवेभ्यो	नमः ।
ॐ	धर्माय	नमः ।
ॐ	ज्ञानाय	नमः ।
ॐ	वैराग्याय	नमः ।
ॐ	ऐश्वर्याय	नमः ।
ॐ	सूर्याय	नमः ।
ॐ	सोमाय	नमः ।
ॐ	आत्मने	नमः ।
ॐ	परमात्मने	नमः ।
ॐ	ज्ञानात्मने	नमः ।
ॐ	जयायै	नमः ।
ॐ	विजयायै	नमः ।
ॐ	अजितायै	नमः ।
ॐ	अपराजितायै	नमः ।
ॐ	नित्यायै	नमः ।
ॐ	अघोरायै	नमः ।
ॐ	परायै	नमः ।
ॐ	अपरायै	नमः ।
ॐ	सर्वेश्वरायै	नमः ।
ॐ	दिव्यायै	नमः ।
ॐ	चैतन्यायै	नमः ।
ॐ	सत्वायै	नमः ।
ॐ	वैश्वानरायै	नमः ।
ॐ	सौभाग्यायै	नमः ।

इसके बाद तीन आचमनी जल पादुकाओं पर घुमाकर निर्माल्य पात्र में छोड़ दें।

फिर यंत्र पर निर्दिष्ट सामग्री चढ़ा कर पूजन करें–

ॐ ह्रौं गुरुत्वै नमः गन्धं कल्पयामि।
ॐ ग्लौं गुरुत्वै नमः पुष्पं कल्पयामि।
ॐ गं गुरुत्वै नमः धूपं आघ्रापयामि।
ॐ ग्रौं गुरुत्वै नमः दीपं दर्शयामि।
ॐ ग्रं गुरुत्वै नमः नैवेद्यं निवेदयामि।
ॐ ह्सौं गुरुत्वै नमः फलं समर्पयामि।
ॐ ग्रं गुरुत्वै नमः आचमनीयं समर्पयामि।
ॐ फ्रौं गुरुत्वै नमः ताम्बूलं कल्पयामि।

मूल मंत्र

।।ॐ ह्रौं ग्लौं गं ग्रौं ग्रं ह्सौं ग्रं फ्रौं गुरुत्वै नमः।।

इसके बाद **"गुरु चैतन्य माला"** से इस मूल मंत्र का एक माला जप करें।

नीराजन

ॐ सहस्रशीर्षं देवं विश्वाक्षं विश्वशंभवम्।
विश्वं नारायणं देवमक्षरं परमं पदम्।।

नारायणं महाज्ञेयं विश्वात्मानं परायणं।
नारायण परो ज्योतिरात्मा नारायणः परः।।

विश्वमेवेदं पुरुषस्तद् विश्वमुपजीवति।
पतिं विश्वस्यात्मेश्वरं शाश्वतं शिवमच्युतम्।।

नीराजनं समर्पयामि नमः।

तीन आचमनी जल दीपक के चारों घुमाकर निर्माल्य पात्र में

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में खुले पुष्प ले लें, निम्न संदर्भ पढ़कर चरणों में पुष्पांजलि समर्पित करें—

ऋतं सत्यं परं ब्रह्म पुरुषं कृष्णपिंगलं।
ऊर्ध्वरेतं विरूपाक्षं विश्वरूपाय वै नमो नमः।।

नारायणाय विद्महे दिव्यदेवाय धीमहि।
तन्नो गुरुः प्रचोदयात्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

प्रार्थना

सर्वज्ञान विज्ञान प्रदायक महात्मने।
नमस्ते सर्व देवेश सर्वभूत हितेरताः।।

अनन्त कान्ति सम्पन्न अनन्तासन संस्थित।
अत्यन्त कान्ति संयोग परमेश नमोऽस्तुते।।

सर्वार्थ निर्मलायोग सर्वव्याधिविनाशन।
योगि महायोगि योगीश्वर नमोऽस्तुते।।

समर्पण

गुह्यातिगुह्य गोप्ता त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपं,
सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर।
ॐ
ब्रह्मार्पणमस्तु।।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

तांत्रोक्त-गुरु पूजन

तन्यते विस्तार्यते ज्ञानमनेन इति तन्त्रम्।।

"जिसके द्वारा ज्ञान का विस्तार हो, वह तंत्र है" अर्थात् जिस साधना के द्वारा भोग और मोक्ष प्राप्ति की सम्भावना होती है, वह तंत्र है।

तनोति विपुलानर्थान् तत्त्वमन्त्र समन्वितान्।
त्राणं च कुरुते यस्मात् तन्त्रमित्यभिधीयते।।

तंत्र व्यवहारिक ज्ञान का शास्त्र है, महाविज्ञान है, यह तो जीवन व्यवस्था है। तंत्र द्वारा इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में व्याप्त ईश्वर की शक्ति, जिन्हें देवता कहा जाता है, अपने अनुकूल बनाकर उनकी शक्तियों को आकर्षित कर, अपनी इच्छानुसार सिद्धियां प्राप्त की जा सकती हैं।

तंत्र का उपासक अपने भीतर एक शक्ति को चुम्बक की तरह प्रभावशाली एवं तीव्र बनाता है। यह विज्ञान मानव-शरीर के सूक्ष्म शरीर में स्थित चक्रों और यौगिक ग्रन्थियों को जाग्रत कर शक्तिशाली बनाने की उदात्त प्रक्रिया है। तंत्र यह ज्ञान कराता है कि मानव अपने भीतर की परतन्त्रता को छोड़कर स्वतंत्र बन सकता है। अपनी शक्ति का असीम विस्तार कर सकता है। शरीर में रहते हुए भी शरीर से मुक्त होकर अपने आप को विस्तार दे सकता है।

तंत्र विज्ञान अपने भीतर एक विशेष शक्ति को जाग्रत कर देने की

प्रक्रिया है, जिससे इस ब्रह्माण्ड की समस्त व्यवस्था को भी अपने अनुकूल ढाल सकते हैं, इसी को सिद्धि कहते हैं। सभी शक्तियों का प्रवाह वातावरण में सदैव चलता रहता है, और जब आप की शक्ति उस बाहरी शक्ति को वश में करने में समर्थ हो जायगी, तब आप अपनी इच्छानुसार कार्य सम्पन्न कर सकते हैं। यही तन्त्र विज्ञान है, जहां साधक की इच्छा सर्वोपरि रहती है।

तंत्र के दो मार्ग हैं—दक्षिण मार्ग और वाम मार्ग। दक्षिण मार्ग में तंत्र द्वारा अपने भीतर की शक्तियों का विकास कर, ईश्वरीय सत्ता के साथ अपने आप को मिलाना, और जीवन को पूर्णरूप से मुक्त करना है। जब कि वाम मार्ग में शक्ति का सांसारिक हर्षपूर्ण उपयोग करना है।

सामान्य व्यक्ति आज तंत्र के विषय में क्या विचार रखते हैं यह बताने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि शक्ति के इस महाविज्ञान का दुरुपयोग ही अधिक हुआ है। जो तंत्र शास्त्र के वास्तविक जानकार हैं, वे तो इस ज्ञान के द्वारा अपने भीतर की शक्ति को जाग्रत कर, अपना आत्म साक्षात् कर, अपने आपको जीवन मुक्त कर परमानन्द की स्थिति में पहुंच जाते हैं। जब कि इस विज्ञान को पूरी तरह न समझने वाले और इसके केवल वाम मार्ग की ओर ध्यान देने वाले तांत्रिकों द्वारा इसका उपयोग दूसरों को पीड़ा पहुंचाने, शारीरिक आनन्द लेने तथा इसके कारण शक्ति का जागरण गलत प्रकार से हुआ।

व्यक्ति का चिन्तन हमेशा अच्छे पक्ष में होने के बजाय बुरे पक्ष की ओर अधिक जाता है, और यही चिन्तन जो श्रेष्ठ भाव से नहीं किया जाता है वह लाभ के स्थान पर हानि देता है, इसीलिए वास्तविक तंत्र विज्ञान को गोपनीय रखने के सम्बन्ध में प्रत्येक शास्त्र में लिखा है। इस तरह लिखने का कारण है कि इस साधना का सही उपयोग है, तो हर जगह प्रचार होना चाहिए, हर व्यक्ति को ज्ञान होना चाहिए . . . लेकिन ऐसा नहीं हुआ।

अतः वास्तविक तंत्र विज्ञान तो श्रेष्ठ गुरुओं द्वारा अपने शिष्यों को मौखिक रूप से ही बताया जाता था। गुरु अपने शिष्य को इसका अभ्यास कराकर ऐसा वचन प्राप्त करते थे, कि आगे तुम इस ज्ञान को योग्य व्यक्ति को ही दोगे। इसके पीछे मूल भावना उनकी शुद्ध रही है, कि यह विद्या कुपात्र को न प्राप्त हो अन्यथा दुरुपयोग करेगा। इसी कारण गुरु, तंत्र विद्या सिखाने

का अधिकार अपने पास रखते हैं। जब उन्हें यह ज्ञात हो जाता है कि शिष्य इस प्रकार की शक्ति को प्राप्त कर उसका दुरुपयोग नहीं करेगा, तो वह उसे तंत्र का ज्ञान देते हैं। क्योंकि तंत्र विद्या में सफलता मिलते ही साधक शक्तिशाली बन जाता है और शक्ति प्राप्त होते ही मदान्ध होकर वह इसका दुरुपयोग करता है, जबकि शक्तियों का प्रयोग आत्म-कल्याण तथा जन कल्याण हेतु होना चाहिए न कि जन पीड़ा हेतु।

जब तंत्र में वाम मार्ग अधिक प्रचलित हो गया और जो लोग केवल अनाचार के लिए तंत्र साधना करना चाहते थे, जब उन्हें सफलता नहीं मिली, तो वे लोग ही तंत्र के सबसे बड़े आलोचक बन गये और उन्होंने इस विषय में भ्रान्तियां फैला दीं।

तंत्र तो शक्ति का स्रोत है, इस महा विज्ञान द्वारा सिद्धि प्राप्त कर भौतिक बाधाओं से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। इसके द्वारा दूसरों को प्रभावित किया जा सकता है। अनिष्ट ग्रह, भूत-प्रेत बाधा आदि का उपचार तंत्र द्वारा सरल रूप से किया जा सकता है। मानसिक तनाव, असहनीय वेदना तथा अन्य शारीरिक अव्यवस्था के निराकरण में तंत्र विशेषतः सहायक सिद्ध हुआ है।

वास्तविक रूप में तंत्र आत्म-कल्याण का मार्ग है, जिसमें जीवन से सम्बन्धित और जीवन से परे सभी विषय सम्मिलित हैं। ईश्वर द्वारा प्रदत्त जीवन उपहार का श्रेष्ठ रूप से अपने भीतर सृजनात्मक शक्ति का जागरण कर, उन शक्तियों का उपयोग सुकर्म को प्रधानता देते हुए, अपने जीवन का पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए; इसी में मनुष्य जीवन की सार्थकता और सफलता है। तंत्र महा विज्ञान है, अनन्त शक्ति का आगार है और सद्यः सफलतादायक व्यवस्था है। इस प्रक्रिया द्वारा की गई गुरु पूजा निश्चित ही सफलता, पूर्णता तथा गुरु कृपा प्राप्ति की अन्यतम सरणी है। साधक का सौभाग्य है, कि वह इस विधि से गुरु पूजन करे, इसीलिए. . .

साधकों का जीवन संतुलित और नियमित होता है। प्रत्येक कार्य को यथा समय करना उनकी विशेषता होती है, क्योंकि वे साधना द्वारा शरीर, मन तथा इन्द्रियों को अपने अनुकूल किये होते हैं।

इस साधना के लिए प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में उठकर, स्नानादि करके,

पीतासन पर या सफेद आसन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठ जाना चाहिए। अपने सामने एक छोटी चौकी रख लें, या अपने आसन से ऊंची कोई अन्य वस्तु रख लें, जिस पर पीला कपड़ा बिछा दें। तांबे या स्टील की थाली या प्लेट पर कुंकुम या चन्दन से "ॐ" लिख दें। उसमें पंचामृत से स्नान कराके "गुरु यंत्र" तथा "कुण्डलिनी जागरण यंत्र" दोनों को स्थापित कर दें। सामने गुरु चित्र रख लें। पूजन के लिए गंगाजल, चन्दन, कुंकुम, केशर, अष्टगंध, अक्षत, पुष्प, बिल्वपत्र, दीप, अगरबत्ती, पुष्पहार, नैवेद्य, पंचामृत आदि सामग्री रख लें।

पवित्रीकरण

बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ की उंगलियों से अपने ऊपर जल छिड़कें–

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।

आचमन

निम्न मंत्रों को पढ़कर आचमनी से लेकर तीन बार जल पियें–

ॐ आत्म तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
ॐ ज्ञान तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।
ॐ विद्या तत्त्वं शोधयामि स्वाहा।

सूर्य पूजन

इसके बाद कुंकुम और पुष्प से सूर्य की पूजा करें तथा निम्न मंत्र का उच्चारण करें–

ॐ आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च।
हिरण्येन सविता रथेन याति भुवनानि पश्यन्।।
ॐ पश्येम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतं
जीवेम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्।

दोनों हाथ जोड़ कर इन मंत्रों का उच्चारण करें–

अचिन्त्य नादा मम देह दासं,
मम पूर्ण आशं देहस्वरूपं।
न जानामि पूजां न जानामि ध्यानं,
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यं।।

ममोत्थवातं तव वत्सरूपं,
आवाहयामि गुरुरूप नित्यं।
स्थायेद् सदा पूर्ण जीवं सदैव,
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यं।।

आवाहन

आवाहन मुद्रा प्रदर्शित करें–

ॐ स्वरूप निरूपण हेतवे श्री निखिलेश्वरानन्दाय गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ स्वच्छ प्रकाश विमर्श हेतवे श्री सच्चिदानन्द परम गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि।

ॐ स्वात्माराम पिंजर विलीन तेजसे श्री ब्रह्मणे पारमेष्ठि गुरवे नमः आवाहयामि स्थापयामि।

स्थापन

आवाहन के बाद गुरुदेव को अपने षट्चक्रों में स्थापित करने के लिए मंत्र पाठ के साथ इन चक्रों को स्पर्श करें–

श्री शिवानन्दनाथ पराशक्त्यम्बा
मूलाधार चक्रे स्थापयामि नमः।

श्री सदाशिवानन्दनाथ चिच्छक्त्यम्बा
स्वाधिष्ठान चक्रे स्थापयामि नमः।

श्री ईश्वरानन्दनाथ आनन्द शक्त्यम्बा
मणिपुर चक्रे स्थापयामि नमः।

श्री रुद्रदेवानन्दनाथ इच्छा शक्त्यम्बा
अनाहत चक्रे स्थापयामि नमः।

श्री विष्णुदेवानन्दनाथ क्रिया शक्त्यम्बा
सहस्रार चक्रे स्थापयामि नमः।

पाद्य

मम प्राण स्वरूपं, देह स्वरूपं, आत्म स्वरूपं, चिन्त्य स्वरूपं
समस्त रूप रूपं गुरुम्
आवाहयामि पाद्यं समर्पयामि नमः।

यंत्रों पर आचमनी से जल चढ़ायें।

अर्घ्य

दायें हाथ में जल लेकर यंत्र पर चढ़ायें–

ॐ देवो तवा वै सवां प्रणतवं परि
संयुक्त्वाः सकृत्वं सहेवाः।
अर्घ्यं समर्पयामि नमः।

गन्ध

निम्न नौ "सिद्धौघ" का उच्चारण करते हुए गुरु चरणों में या यंत्र पर निम्न सामग्री चढ़ावें–

ॐ श्री उन्मनाकाशानन्दनाथ – जलं समर्पयामि।
ॐ श्री समनाकाशानन्दनाथ– स्नानं समर्पयामि।
ॐ श्री व्यापकानन्दनाथ – सिद्धयोगा जलं समर्पयामि।

ॐ श्री शक्त्याकाशानन्दनाथ – चन्दनं समर्पयामि।
ॐ श्री ध्वन्याकाशानन्दनाथ – कुंकुमं समर्पयामि।
ॐ श्री ध्वनिमात्रकाशानन्दनाथ – केशरं समर्पयामि।
ॐ श्री अनाहताकाशानन्दनाथ – अष्टगंधं समर्पयामि।
ॐ श्री विन्द्वाकाशानन्दनाथ – अक्षतान् समर्पयामि।
ॐ श्री द्वन्द्वाकाशानन्दनाथ – सर्वोपचारान् समर्पयामि।

पुष्प, बिल्व पत्र

तमो स पूर्वां एतोस्मानं सकृते कल्याण त्वां कमलया स
शुद्ध बुद्ध प्रबुद्ध स चिन्त्य अचिन्त्य वैराग्यं नमितां
पूर्ण त्वां गुरुपाद पूजनार्थं
बिल्व पत्रं पुष्पहारं च समर्पयामि नमः।

पुष्प एवं बिल्व पत्र चढ़ावें।

दीप

निम्न सन्दर्भ का दीपक दिखाकर उच्चारण करें–

श्री महादर्पनाम्बा सिद्ध ज्योतिं समर्पयामि।
श्री सुन्दर्यम्बा सिद्ध प्रकाशं समर्पयामि।
श्री करालाम्बिका सिद्ध दीपं समर्पयामि।
श्री त्रिवाणाम्बा सिद्ध ज्ञान दीपं समर्पयामि।
श्री भीमाम्बा सिद्ध हृदय दीपं समर्पयामि।
श्री कराल्याम्बा सिद्ध सिद्ध दीपं समर्पयामि।
श्री खराननाम्बा सिद्ध तिमिरनाश दीपं समर्पयामि।
श्री विधीशालीनाम्बा पूर्ण दीपं समर्पयामि।

नीराजन

इसके बाद ताम्रपात्र में जल, कुंकुम, अक्षत एवं पुष्प लेकर यंत्रों पर समर्पित करें–

श्री सोममण्डल नीराजनं समर्पयामि।
श्री सूर्यमण्डल नीराजनं समर्पयामि।
श्री अग्निमण्डल नीराजनं समर्पयामि।
श्री ज्ञानमण्डल नीराजनं समर्पयामि।
श्री ब्रह्ममण्डल नीराजनं समर्पयामि।

पंच पंचिका

अपने दोनों हाथों में पुष्प लेकर निम्न पंच पंचिकाओं का उच्चारण करते हुए इन दिव्य महाविद्याओं की प्राप्ति के लिए गुरुदेव से प्रार्थना करें –

पंचलक्ष्मी

श्री विद्या लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री एकाक्षर लक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री महालक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री त्रिशक्तिलक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री सर्वसाम्राज्यलक्ष्मी लक्ष्म्यम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

पंचकोश

श्री विद्या कोशाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री परज्योति कोशाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री परिनिष्कल शाम्भवी कोशाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री अजपा कोशाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री मातृका कोशाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

पंचकल्पलता

श्री विद्या कल्पलताम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री त्वरिता कल्पलताम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

श्री पारिजातेश्वरी कल्पलताम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री त्रिपुटा कल्पलताम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री पंच बाणेश्वरी कल्पलताम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

पंचकामदुघा

श्री विद्या कामदुधाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री अमृत पीठेश्वरी कामदुघाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री सुधांशु कामदुधाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री अमृतेश्वरी कामदुघाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री अन्नपूर्णा कामदुधाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

पंचरत्न विद्या

श्री विद्या रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री सिद्धलक्ष्मी रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री मातंगेश्वरी रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री भुवनेश्वरी रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री वाराही रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।
श्री मन्मालिनी रत्नाम्बा प्राप्तिं प्रार्थयामि।

श्री मन्मालिनी

अन्त में तीन बार श्री मन्मालिनी का उच्चारण करना चाहिए, जिससे श्री गुरुदेव की शक्ति, तेज और सम्पूर्ण साधनाओं की प्राप्ति हो सके–

ॐ अं आं इं ईं उं ऊं ऋं ॠं ऌं ॡं एं
ऐं ओं औं अं अः।
कं खं गं घं ङं।
चं छं जं झं ञं।
टं ठं डं ढं णं।
तं थं दं धं नं।

पं फं बं भं मं।
यं रं लं वं शं षं सं हं क्षं
हंसः सोऽहं गुरुदेवाय नमः।

मूल मंत्र

।। ॐ निं निखिलेश्वरायै ब्रह्म ब्रह्माण्ड वै नमः ।।

इस मंत्र को **"मूंगा माला"** से एक माला जप करें।

प्रार्थना

दोनों हाथ जोड़कर गुरुदेव से प्रार्थना करें–

लोकवीरं महापूज्यं सर्वरक्षाकरं विभुम्।
शिष्य हृदयानन्दं शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
प्रिपूज्यं विश्व वन्द्यं च विष्णुशम्भो प्रियं सुतम्।
क्षिप्र प्रसाद निरतं शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
मत्त मातंग गमनं कारुण्यामृत पूजितम्।
सर्व विघ्न हरं देवं शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
अस्मत् कुलेश्वरं देवं सर्व सौभाग्यदायकम्।
अस्मादिष्ट प्रदातारं शास्तारं प्रणमाम्यहम्।।
यस्य धन्वन्तरिर्माता पिता रुद्रोऽभिषक् तमः।
तं शास्तारमहं वन्दे महावैद्यं दयानिधिम्।।

समर्पण

ॐ सहनावतु सह नौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै,
तेजस्विनां धीतमस्तु मा विद्विषावहै।
ॐ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविः ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतं।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्म कर्म समाधिना।।
ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

विशिष्ट-गुरु पूजन

साधना क्षेत्र में चलना तलवार की धार पर चलने के समान होता है, अभीष्ट गुरु की उपलब्धि के बाद भी गुरु कृपा प्राप्ति के लिए सतत प्रयासरत होना चाहिए, सेवा और समर्पण तो गुरु कृपा प्राप्ति के लिए नितान्त आवश्यक है ही; उसके बाद भी गुरु मंत्रादि का अनुष्ठान एवं जप आदि भी उतना ही शिष्य के लिए अपेक्षित है, जैसे भूखे व्यक्ति के लिए भोजन। मन आदि आभ्यन्तर् इन्द्रियों को तथा बाह्य इन्द्रियों को पाप-दोष एवं मल-विक्षेप से छुड़ाने के लिए नित्य कर्म के रूप में इनकी आवश्यकता होती है, जो शिष्य के लिए साधनात्मक पाथेय कहा जा सकता है।

साधना क्षेत्र में आने वाले प्रत्येक साधक या शिष्य को पहले सवा लाख या पांच लाख अथवा ग्यारह लाख गुरु मंत्र-जप करके गुरु सिद्धि; गुरु कृपा प्राप्ति का प्रयास अवश्य करना चाहिए। उसके बाद किसी अन्य साधना में पदार्पण करना चाहिए, क्योंकि गुरु साधना करने के बाद ही अन्य साधनाओं को करने के लिए आधार भूमि बनती है।

ऐसे भी दीक्षित शिष्य के लिए पहले गुरु साधना के माध्यम से आगे बढ़ने पर ही साधना में सफलता का मार्ग प्रशस्त होता है, अन्यथा

पग-पग पर अनेक बाधाएं आकर अवरोध खड़ा करती रहती हैं।

अतः गुरु कृपा प्राप्ति हेतु विशिष्ट-गुरु पूजन विधि जो अभी तक गुप्त रही है, साधकों के विशेष आग्रह पर प्रस्तुत की जा रही है—

विनियोग

दायें हाथ में जल लेकर मंत्र पढ़ें—

ॐ अस्य श्री गुरुमंत्रस्य श्री नारायण ऋषिः, गायत्री छन्दः, श्री निखिलेश्वरानन्द देवता, गुं बीजम्, नमः शक्तिः, श्री गुरु प्रसाद पूर्वक सकल मनोकामना सिद्ध्यर्थे विनियोगः।

इस संदर्भ को पढ़कर जल भूमि पर छोड़ दें।

ऋष्यादि न्यास

दाहिने हाथ की उंगलियों से विभिन्न अंगों का स्पर्श करें—

ॐ नारायण ऋषये नमः	-	**शिरसि**	सिर का स्पर्श करें।
ॐ गायत्री छन्दसे नमः	-	**मुखे**	मुख का स्पर्श करें।
ॐ निखिलेश्वर देवतायै नमः	-	**हृदि**	हृदय का स्पर्श करें।
ॐ गुं बीजाय नमः	-	**गुह्ये**	गुदा का स्पर्श करें।
ॐ नमः शक्तये नमः	-	**पादयोः**	पैरों का स्पर्श करें।
ॐ विनियोगाय नमः	-	**सर्वांगे**	सिर से पैर तक सभी अंगों का स्पर्श करें।

कर न्यास

ॐ गां अंगुष्ठाभ्यां नमः।

दोनों तर्जनी उंगलियों से दोनों अंगुष्ठों का स्पर्श करें।

ॐ गीं तर्जनीभ्यां नमः।

दोनों अंगुष्ठों से दोनों तर्जनी का स्पर्श करें।

ॐ गूं मध्यमाभ्यां नमः।

दोनों अंगुष्ठों से मध्यमा का स्पर्श करें।

ॐ गैं अनामिकाभ्यां नमः।

दोनों अंगुष्ठों से अनामिका का स्पर्श करें।

ॐ गौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।

दोनों अंगुष्ठों से कनिष्ठा उंगलियों का स्पर्श करें।

ॐ गः करतलकर पृष्ठाभ्यां नमः।

दोनों हथेलियों का परस्पर बाहर-भीतर स्पर्श करें।

अंग न्यास

ॐ गां हृदयाय नमः।

दाहिने हाथ की उंगलियों से हृदय का स्पर्श करें।

ॐ गीं शिरसे स्वाहा।

सिर का स्पर्श करें।

ॐ गूं शिखायै वषट्।

शिखा का स्पर्श करें।

ॐ गैं कवचाय हुम्।

दोनों बाहुओं का स्पर्श करें।

ॐ गौं नेत्रत्रयाय वौषट्।

दोनों नेत्र एवं ललाट का स्पर्श करें।

ॐ गः अस्त्राय फट्।

तीन बार ताली बजावें।

मंत्र वर्ण न्यास

ॐ गां नमः ब्रह्मरन्ध्रे - कपाल का स्पर्श करें।

ॐ गीं नमः भ्रुवोर्मध्ये	-	दोनों भौंहों के मध्य स्पर्श करें।
ॐ गूं नमः हृदि	-	हृदय का स्पर्श करें।
ॐ गैं नमः नाभौ	-	नाभि का स्पर्श करें।
ॐ गौं नमः लिंगे	-	लिंग का स्पर्श करें।
ॐ गः नमः पादयोः	-	दोनों पैरों का स्पर्श करें।

ध्यान

दोनों हाथों को श्रद्धा पूर्वक जोड़ लें–

येनोदात्त तपः चयेन सततं सन्यस्तमाभूषितं।
ब्रह्मानन्द रसेन सिक्त मनसा शिष्याश्च संभाविताः।।
ब्रह्माण्डं नवराग रंजित वपुः हस्तामलकवद् धृतं।
सोऽयं भूति विभूषितः गुरुवरः निखिलेश्वरः पातु माम्।।

पुष्प

फिर अंजलि में पुष्प लेकर यह मंत्र पढ़ें–

ॐ संविन्मयः परोदेवः परामृत रसप्रियः।
अनुज्ञां देहि मे देव परिवारार्चनाय मे।।

पुष्प चढ़ाकर परिवार अर्चन के लिए अनुज्ञा प्राप्त करें।

प्रथमावरण पूजन

भगवत्यै नमः - भगवती श्री पादुकां पूजयामि नमः।
गुरुभ्यो नमः - गुरु श्री पादुकां पूजयामि नमः।
परम गुरुभ्यो नमः - परम गुरु श्री पादुकां पूजयामि नमः।
परात्पर गुरुभ्यो नमः - परात्पर गुरु श्री पादुकां पूजयामि नमः।
पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः – पारमेष्ठि श्री पादुकां पूजयामि नमः।

ॐ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सल।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं प्रथमावरणार्चनम्।।

द्वितीयावरण पूजन

ॐ त्रिजटायै नमः।

त्रिजटा श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ ब्रह्माण्डेश्वराय नमः।

ब्रह्माण्डेश्वर श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ विशुद्धानन्दाय नमः।

विशुद्धानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ पूर्णानन्दाय नमः।

पूर्णानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ अभयानन्दाय नमः।

अभयानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ निर्भयानन्दाय नमः।

निर्भयानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ श्रीधरानन्दाय नमः।

श्रीधरानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ चैतन्यानन्दाय नमः।

चैतन्यानन्द श्री पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः।

ॐ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सल।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं द्वितीयावरणार्चनम्।।

तृतीयावरण पूजन

ॐ धृष्टये नमः। धृष्टि श्री पादुकां पूजयामि नमः।

ॐ जयन्ताय नमः। जयन्त श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ विजयाय नमः। विजय श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ सुराष्ट्रवर्धनाय नमः। सु राष्ट्र वर्धन श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ अकोपाय नमः। अकोप श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ धर्मपालाय नमः। धर्मपाल श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ सुमन्ताय नमः। सुमन्त श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सल।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं तृतीयावरणार्चनम्।।

चतुर्थावरण पूजन

ॐ लं इन्द्राय नमः। इन्द्र श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ रं अग्नये नमः। अग्नि श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ मं यमाय नमः। यम श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ क्षं निर्ऋतये नमः। निर्ऋति श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ वं वरुणाय नमः। वरुण श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ यं वायवे नमः। वायु श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ कुं कुबेराय नमः। कुबेर श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ ईं ईशानाय नमः। ईशान श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ आं ब्रह्मणे नमः। ब्रह्म श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ हीं अनन्ताय नमः। अनन्त श्री पादुकां पूजयामि नमः।
ॐ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सल।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं चतुर्थावरणार्चनम्।।

पंचमावरण पूजन

ॐ वं वज्राय नमः।
ॐ शं शक्त्यै नमः।

ॐ दं दण्डाय नमः।
ॐ खं खड्गाय नमः।
ॐ पं पाशाय नमः।
ॐ अं अंकुशाय नमः।
ॐ गं गदायै नमः।
ॐ त्रिं त्रिशूलाय नमः।
ॐ पं पद्माय नमः।
ॐ चं चक्राय नमः।

ॐ अभीष्ट सिद्धिं मे देहि शरणागत वत्सल।
भक्त्या समर्पये तुभ्यं पंचमावरणार्चनम्।।

प्रार्थना

पूर्णो स वातं गुरु वै प्रणम्यं,
सदाहं वसामि भवदेव नित्यं।
एकोहि रूपं ममतां प्रणेशं,
गुरुत्वं प्रणम्यं गुरुत्वं प्रणम्यं।।

ब्रह्मा स्वरूपं विष्णु स्वरूपं,
रुद्रस्वरूपं आत्म स्वरूपं।
ब्रह्म स्वरूपं चिन्त्यं विचिन्त्यं,
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

त्वं मातृरूपं पितृ स्वरूपं,
आत्म स्वरूपं देव स्वरूपं।
त्वं प्राण रूपं भवतां सदेवं,
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

न पूजा न ज्ञानं न ध्यानं न योगं,

ततो न विरक्ति भवदेह देयं।
न जानामि मंत्रं न जानामि पूजां,
एकोहि मंत्रं गुरुर्वै शरण्यम्।।

त्वं पूर्णरूपं त्वं सेव्य रूपं,
ज्ञान स्वरूपं निर्विकार रूपं।
त्वमेवं त्वमेवं त्वमेवं त्वमेवं,
गुरुर्वै शरण्यं गुरुर्वै शरण्यम्।।

इसके बाद सवा लाख मूल मंत्र जप करके पुरश्चरण करने से गुरु सिद्धि होने पर सकल मनोकामनाओं की पूर्ति होती ही है।

मूल मंत्र

।। ॐ ऐं ब्रं ब्रह्माण्डस्वरूपं ब्रं ऐं फट्।।

इस मंत्र का **'खड्ग माला'** से जप करें।

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में खुले पुष्प लेकर निम्न मंत्र का उच्चारण करें–

ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतो मुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात्। सं बाहूभ्यां धमति संपतत्रैर् द्यावाभूमि जनयन् देव एकः।
पुष्पांजलिं समर्पयामि नमः।

समर्पण

अनेन कृतेन पूजाराधन कर्मणा श्री परासंवित् स्वरूपः श्री गुरुदेवः प्रीयन्ताम्।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

अघोर-पूजा पद्धति

इस देश का सौभाग्य रहा है, कि उपासना के क्षेत्र में वैदिक काल से लेकर आज तक कई विधियां उपादेयता क्रम से प्रकाश में आईं और इतने दीर्घ कालिक अन्तराल में कइयों को समाज ने विधिवत् अपनाया; वहीं कई स्वतः ही अपनी अनुपयोगिता वशात् काल-कवलित हो गईं, इनमें हैं— भगवान् महावीर की जैन-प्रक्रिया, बुद्ध का बौद्ध सम्प्रदाय, भगवान् दत्तात्रेय का नाथ-पंथ तथा अवधूत (अघोर) आदि। अघोर सम्प्रदाय शिव मत की अद्वितीय साधना पद्धति है, जिसके माध्यम से अत्यन्त कठोर व घोरतम साधना के द्वारा समस्त इंद्रियों को वशीभूत कर कुण्डलिनी जागरण के द्वारा शिवत्वमय हुआ जाता है। भगवान् शंकर इस पद्धति के प्रथम आचार्य हैं, जनक हैं।

पुराण प्रतिपादित आख्यानों के अनुसार विभिन्न कल्पों में महाप्रलय के बाद जब ब्रह्मा पुनः सृष्टि उत्पत्ति की प्रक्रिया आरम्भ करते हैं, तब उनको अतिरिक्त शक्ति की आवश्यकता होती है, ब्रह्मा के सहायतार्थ भगवान् शंकर कल्प भेद से विभिन्न अवतार ग्रहण करते हैं, उनमें सद्योजात, वामदेव, तत्पुरुष ईशान, रुद्र आदि हैं।

एक विशिष्ट शिव कल्प में जब ब्रह्मा ने सृष्टि रचना आरम्भ की,

तो उनके सामने एक बालक प्रकट हुआ, जो अत्यन्त पराक्रमी, साहसी और तेजस्वी था। उस बालक की दिव्यता से ब्रह्मा जी समझ गये कि ये भगवान् शंकर हैं, और उन्होंने स्तुति आदि करने के बाद उनकी कृपा से निर्माण कार्य प्रारम्भ किया, यही शिव जी का 'अघोर अवतार' था। इस मत की उपासना पद्धति अत्यन्त कठोर एवं कठिन है। सर्व साधारण गम्य नहीं है। इस सम्प्रदाय में दीक्षित साधक अघोर, औघड़ या अवधूत कहे जाते हैं।

आज भी इस सम्प्रदाय में इस घोर-योग के साधक हैं, परन्तु बहुत कम। कालान्तर से आई विकृतियों के कारण आज समाज में इनका सम्मान न के बराबर है। लोग इन्हें हेय दृष्टि से देखते हैं। घर में इनका आना कभी सौभाग्य समझा जाता था. . . पर आज दुर्भाग्य समझते हैं तथा इनसे बचने का प्रयास करते हैं। कभी ये अद्वितीय इन्द्रियजयी माने जाते थे, संयम के जीते-जागते स्वरूप होते थे. . . परन्तु अब इन्द्रिय लोलुपता ने इन्हें ग्रस लिया है।

अघोर नाम को सुनते ही मन विषैला-सा हो जाता है, चित्त उद्वेलित एवं चंचल हो जाता है। अब तो ये अपशब्द बोलने वाले, अकारण क्रोधी, नशेड़ी, भक्ष्याभक्ष्य खाने वाले, बड़ी-बड़ी डरावनी तथा भयानक आंखों का प्रदर्शन करने वाले होते हैं, अब औघड़ किसी पर भी अकारण कुपित हो जाता है तथा अनजाने में किये गये किसी छोटे-से अपराध के कारण श्राप भी दे देता है।

बीभत्स, जुगुप्साग्रस्त, क्रूर, दुराग्रही तथा अपवक्ता व्यक्तित्व अघोर का पर्याय-सा बन गया है, इनका रहन-सहन, बोल-चाल, काम-काज सब कुछ अन्य संन्यासियों, साधुओं तथा सन्तों से भिन्न है, जो समाजोपयोगी नहीं कहा जा सकता। वर्तमान में कई असामाजिक तत्त्व भी इनमें पाये जाते हैं तथा अपराध करते हुए रंगे हाथों पकड़े गये हैं, इसीलिए ये निन्दास्पद और घृणास्पद हो गये हैं।

इस मत में घोर-योग के माध्यम से शनैः-शनैः समस्त इन्द्रियों के विषयों पर विजय प्राप्त करके साधना की उच्च स्थिति पर पहुंच कर साधक शिवमय हो जाता है। यह स्वाभाविक है कि इन्द्रिय निग्रह के बाद आध्यात्मिक चेतना का स्वतः विकास होने लगता है। प्राण वायु के द्वारा मूलाधार में प्रसुप्त कुण्डलिनी स्वतः ही जाग्रत होकर विभिन्न चक्रों का भेदन करती हुई सहस्रार में पहुंच जाती है। यही अघोर सम्प्रदाय में जीव को शिवमय बनाने की उदात्त

प्रक्रिया कही जाती है।

साधना सम्पन्न अघोरी मस्ती के आलम में जीते हैं, इन्हें किसी की चिन्ता नहीं होती, दुनियां क्या कहेगी– इसको सोचते भी नहीं, ये अपने ढंग से जीते हैं, खूब खाते हैं, खूब पीते भी हैं, किसी चीज की इन्हें परवाह नहीं होती; जहां भी जाते हैं, इनका ही साम्राज्य होता है, किसी से जो चाहें साम और दण्ड से मनवाना जानते हैं, लोगों को कहना और करवा लेना इनकी आदत है। ऐसे अघोर या अवधूत निर्द्वन्द्व होकर सर्वत्र निर्भयता से विचरते हैं।

"निर्द्वन्द्वो नित्य सत्वस्थो निर्योग क्षेम आत्मवान्।"

मान-अपमान से दूर सर्वत्र अपने शिवमय स्वरूप का ही दर्शन करता है। चाहे वह फूलों की सेज पर बैठा हो या कांटों पर, दिव्यासन पर बैठा हो या भूमि पर, दिगम्बर हो या पीताम्बर, उसके भावों में कोई विभेद शेष नहीं रहता। सुख-दुःख से परे, सर्दी-गर्मी से अपरिचित वह अघोरी निर्विकार भाव से परिपूर्ण, महासर की तरह शान्त, निर्मल, शिशुवत् सरल एवं निर्भय हो जाता है। प्रत्येक सामाजिक बन्धनों से रहित पर्वतों, कन्दराओं या किसी निर्जन स्थान पर एकान्त वास करते हुए समाधि में लीन रहता है।

इस सम्प्रदाय की मुख्य साधना पद्धति पंच मकार की है। मांस, मत्स्य, मुद्रा, मदिरा और मैथुन; जो इस साधना प्रक्रिया में अलौकिक अर्थ से सम्पृक्त हैं–

१. **मांस** – पूर्ण मौन और समस्त स्वाद का परित्याग।
२. **मत्स्य** – प्राणायाम द्वारा श्वास सिद्धि, जिससे मृत्यु पर विजय पाया जाय।
३. **मुद्रा** – यौगिक मुद्राएं, जिनके करने से कुण्डलिनी शक्ति ऊर्ध्वगमन करती है।
४. **मदिरा** – सहस्रार से प्रवहमान अमृत का पान।
५. **मैथुन** – शिव (सहस्रार) और शक्ति (कुण्डलिनी) का मिलन।

इस तरह से साधक तीन गुण, पांच तत्त्व, छः स्वाद एवं दस इन्द्रियां– इन चौबीस तत्त्वों की परिधि से विमुक्त होकर पूर्णता प्राप्त

कर लेता है।

"तद् विज्ञानार्थं स गुरुमेवाभिगच्छेत्"

"परन्तु तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के लिए सद्गुरु की ही शरण में जाना चाहिए।"

साधना में प्रथमतः गुरु की आवश्यकता होती ही है। स्वयं ज्ञान स्वरूप होते हुए गुरु के उपदेश रूप संस्कार की आवश्यकता बनी ही रहती है। शास्त्र की अभिव्यक्ति गुरु के द्वारा ही सम्भव है।

सद्गुरु द्वारा सम्पादित ज्ञान ही श्रेय पथानुगामी शिष्यों का कल्याण कर सकता है। स्वयं शास्त्र पढ़कर या कथा, व्याख्यान में सुन लेने से ज्ञान की प्राप्ति सम्भव ही नहीं है।

गुरु भी जीवित, जाग्रत और चैतन्य हों, "श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं गुरुमभिगच्छेत्"– जो स्वयं समस्त शास्त्रों के ज्ञान से अभिषिक्त तथा तत्त्वज्ञान में पारीण हों, वही सद्गुरु हो सकते हैं और उनके द्वारा प्रदत्त ज्ञान ही शिष्य के लिए कल्याणास्पद हो सकता है।

"उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिनः"

"गुरु ही ज्ञान का उपदेश दे सकते हैं।"

साधक प्रतिदिन ब्रह्म मुहूर्त में उठें, क्योंकि साधक का उचित समय यही है, उठकर नित्य क्रिया से निवृत्त होकर बिलकुल शान्त भाव से पूर्वाभिमुख होकर कुशासन, मृगासन या जो भी समयानुकूल उपलब्ध हो, बैठें। पवित्रीकरण, आचमन तथा प्राणायाम आदि करें।

मानसोपचार

पहले मानसोपचार पूजन सम्पन्न करें। सतत इस प्रक्रिया से कुण्डलिनी जागरण की सम्भावना बलवती होती चली जाती है–

मुद्रा	**पृथिवी तत्त्वं**	**चन्दनं च समर्पयामि नमः।**
मांस	**वायु तत्त्वं**	**धूपमाघ्रापयामि नमः।**
मैथुनं	**आकाश तत्त्वं**	**पुष्पं समर्पयामि नमः।**

मदिरा अग्नि तत्त्वं दीपं समर्पयामि नमः।
मत्स्य जल तत्त्वं नैवेद्यं समर्पयामि नमः।

इस मानसोपचार के पश्चात् कुछ मिनट तक ध्यान करें।

इसके बाद अपने सामने एक छोटी चौकी रख लें, उस पर कपड़ा बिछालें, उसके ऊपर किसी पात्र में कुंकुम से "ॐ" लिखकर "गुरु यंत्र" को स्थापित करें। धूप-दीप जलालें तथा पूजन की आवश्यक सामग्री अपने पास रखलें और पूजन आरम्भ करें।

विनियोग

विनियोग के लिए दाहिने हाथ में जल लेकर निम्न संदर्भ का उच्चारण करें—

ॐ अस्य श्री अघोराख्य मंत्रस्य मूल प्रकृति ऋषिः, जगती छन्दः, त्र्यम्बक देवता क्लीं बीजं, औं शक्तिः, ह्रौं कीलकं गुरु प्रसाद सिद्धयर्थे जपे विनियोगः।

कर न्यास

ॐ हां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः।
ॐ हूं मध्यमाभ्यां नमः।
ॐ ह्रैं अनामिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रौं कनिष्ठिकाभ्यां नमः।
ॐ ह्रः करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः।

अंग न्यास

ॐ मूल प्रकृति ऋषये नमः – शिरसि।
ॐ जगती छन्दसे नमः – मुखे।

ॐ अघोर देवतायै नमः – हृदि।

ॐ क्लीं बीजाय नमः – गुह्ये।

ॐ ह्रीं शक्तये नमः – पादयोः।

ॐ ह्रौं कीलकाय नमः – सर्वांगे।

ध्यान

सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमः।
भवे भवे नाति भवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः।।१।।

"मै सद्योजात गुरु की शरण में हूं, आप को मेरा नमस्कार स्वीकार हो, कहीं भी मेरा पराभव न हो।"

ब्रह्मस्वरूपममलं च निरञ्जनं तं,
ज्योति प्रकाश मनिशं महतो महन्तम्।
कारुण्य रूपमति बोधकरं प्रसन्नम्;
दिव्यं स्मरामि सततं मनुजावनाय।।२।।

"उस ब्रह्म स्वरूप, परम पावन, माया से रहित, करुणामय, दिव्य ज्ञान से अतिप्रसन्न, मनुज शरीरधारी गुरुत्व को मैं भावपूर्ण हृदय से प्रणाम करता हूं।"

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः ध्यानं समर्पयामि।

आवाहन

आवाहन मुद्रा में दोनों हाथ ऊपर करें–

कृतार्थोऽनुगृहीतोऽस्मि सकलं जीवितं तु मे।
यदागतोऽसि देवेश चिदानन्दमव्यय।।

अज्ञानाद्वा प्रमादाद्वा वैकल्यात् साधनस्य च।
यदपूर्णं भवेत् कृत्यं तथाप्यभिमुखो भव।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः आवाहनं समर्पयामि।

"हे चैतन्य स्वरूप! हे गुरुदेव!! आप के निकट आने से मैं कृतार्थ हो गया हूं। मेरी साधना या पूजा अज्ञानवश प्रमाद या विकलतावश अपूर्ण हो गई हो, फिर भी आप आकर हमें कृतार्थ करें।"

पाद्य

गुरुदेव के पाद प्रक्षालन के लिए आचमनी से जल समर्पित करें–

देवानामपि देवाय देवानां देवतात्मने।
आचामं कल्पयामीश सुधाया श्रुति हेतवे।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पाद्यं समर्पयामि।

"हे गुरुवर! आप देवों के भी देव हैं तथा आराध्य हैं। आप अमृतमय हैं, इसलिए अमृतक्षरण के लिए आचमनीय जल समर्पित करता हूं।"

अर्घ्य

दायें हाथ में जल लें, उसमें अक्षत और पुष्प मिला कर यंत्र पर या गुरुदेव के हाथ में समर्पित करें–

तापत्रय हरं दिव्यं परमानन्दलक्षणम्।
तापत्रय विमोक्षाय तवार्घ्यं कल्पयाम्यहम्।।

"हे गुरुदेव! आप को अर्पित अर्घ्य तीनों तापों का हरण करने वाला है, अतः त्रितापों से मुक्ति के लिए आप को अर्घ्य समर्पित करता हूं।"

मधुपर्क

एक चम्मच मधु, घी और दधि मिलाकर चढ़ावें–

सर्वकल्मषहीनाय परिपूर्णसुधात्मकम्।
मधुपर्कमिमं देव कल्पयामि प्रसीद मे।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः मधुपर्कं समर्पयामि।

"हे देव! आप समस्त दोषों से रहित हैं, आप के लिए सुधामय

यह मधुपर्क समर्पित कर रहा हूं, स्वीकार करें।"

आचमन

उच्छिष्टोऽप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः।
शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः इदमाचमनीयं समर्पयामि।

"जिनके स्मरण मात्र से ही उच्छिष्ट और अपवित्र पावन हो जाते हैं, ऐसे परम पावन आप को आचमन के लिए जल समर्पित कर रहा हूं।"

स्नान

परमानन्दबोधाब्धि निमग्ननिजमूर्तये।
सांगोपांगमिदं स्नानं कल्पयाम्यहमीश ते।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः स्नानं समर्पयामि।

"परमानन्द में निरन्तर निमग्न रहने वाले आप के लिए हे गुरुदेव! स्नान के सभी साधनों से पूर्ण यह स्नानीय जल समर्पित कर रहा हूं।"

वस्त्र

मायाचित्र पटाच्छन्नं निजगुह्योपतेजसे।
निरावरणरूपस्त्वं वाससस्ते कल्पयाम्यहम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः वस्त्रं समर्पयामि।

"हे देव! आप अपने तेजोमय स्वरूप को मायारूपी वस्त्र से ढके हुए हैं, स्वयं आवरण रहित हैं, फिर भी यह वस्त्र आप के लिए समर्पित है।"

उत्तरीय

यमाश्रित्य महामाया जगत् सम्मोहिनी सदा।
तस्मै ते परमेशाय कल्पयाम्युत्तरीयकम्।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः उत्तरीय वस्त्रं समर्पयामि।

"जिनका आश्रय लेकर महामाया समस्त जगत को सम्मोहित करती है, वह आश्रय आप ही हैं, आप के लिए मैं उत्तरीय वस्त्र समर्पित करता हूं।"

यज्ञोपवीत

यस्य शक्ति त्रयेणेदं सम्प्रोतमखिलं जगत्।
यज्ञसूत्राय तस्मै ते यज्ञ सूत्रं प्रकल्पये।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः यज्ञ सूत्रं समर्पयामि।

गन्ध

परमानन्द सौरभ्य परिपूर्णदिगन्तरम्।
गृहाण परमं गन्धं कृपया परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि।

धूप

वनस्पति रसोद्भूतः गन्धाढ्यः सुमनोहरः।
आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।।

"वनस्पतियों के रस से निर्मित, दिव्य सुगन्ध द्रव्य जो देवताओं द्वारा आघ्रेय है, मैं आप को समर्पित करता हूं।"

दीप

सुप्रकाशो महादीप सर्वतस्तिमिरापहः।
सबाह्याभ्यन्तरः ज्योति र्दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः दीपं दर्शयामि।

"अत्यधिक तेजस्वी, बाहर-भीतर ज्योतियुक्त, चारों ओर के अन्धकार को दूर करने वाला, यह उत्तम दीप आप को समर्पित करता हूं।"

नैवेद्य

सत्पात्रसिद्धं सुहविर्विविधानेक भक्षणम् ।
निवेदयामि देवेश सानुगाय गृहाण तत् ।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नैवेद्यं समर्पयामि ।

"हे गुरुदेव! पवित्र पात्र में बनाये गये, अनेक भक्ष्य पदार्थों से युक्त, यह नैवेद्य आपको समर्पित करता हूं, ग्रहण करें।"

आचमन

ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा,
ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा ।

इन संदर्भों को बोल कर पांच आचमनी जल समर्पित करें।

मूल मंत्र

इस मूल मंत्र का **"रुद्राक्ष की माला"** से एक माला जप करें–

।।ॐ अघोर अघोरे अथत्वा अगारेत्वं शिवोऽहं शंकरोऽहम् ।।

नीराजन

ॐ इद (गूं) हविः प्रजननंमे अस्तु दशवीर (गूं) सर्वगण (गूं)
स्वस्तये आत्मसनि, प्रजासनि, पशुसनि, लोक सन्यभयसनिः,
अग्निः प्रजां बहुलां मे करोत्वन्नं पयो रेतो अस्मासु धत्त ।

वन्दे देवमुमापतिं सुरगुरुं वन्दे जगत्कारणं,
वन्दे पन्नगभूषणं मृगधरं वन्दे पशूनां पतिं ।
वन्दे सूर्य शशांक वह्निनयनं वन्दे मुकुन्द प्रियं;
वन्दे भक्त जनाश्रयं च वरदं वन्दे शिवं शंकरम् ।।

कर्पूर गौरं करुणावतारं संसार सारं भुजगेन्द्रहारं।
सदा वसन्तं हृदयारविन्दे भवं भवानी सहितं नमामि।।

असित गिरि समं स्यात् कज्जलं सिन्धुपात्रे,
सुरतरुवर शाखा लेखिनी पत्रमुर्वी।
लिखति यदि गृहीत्वा शारदा सर्वकालं;
तदपि तव गुणानामीश पारं न याति।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः नीराजनं समर्पयामि।

जल आरती

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष (गूं) शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः वनस्पतयः शान्ति र्विश्वेदेवाः शान्तिः ब्रह्म शान्तिः सर्व (गूं) शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि।

आचमनी में जल लेकर दीपक के ऊपर तीन बार घुमाकर निर्माल्य-पात्र में छोड़ दें।

पुष्पाञ्जलि

दोनों हाथों में पुष्प ले लें—

ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमोवयं वैश्रवणाय कुर्महे स मे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु।
कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः।

नाना सुगन्ध पुष्पाणि यथा कालोद्भवानि च।
पुष्पांजलिर्मया दत्ता गृहाण परमेश्वर।।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः पुष्पांजलिं समर्पयामि।

नमस्कार

दोनों हाथ जोड़ें–

नारायण परब्रह्म तत्त्वं नारायणः परः।
नारायण परो ध्याता ध्यानं नारायणः परः।।
यच्च किंचिज्जगत् सर्वं दृश्यते श्रूयतेऽपि वा।
अन्तर् बहिश्च तत् सर्वं व्याप्य नारायणः स्थितः।।

क्षमा प्रार्थना

अपराधसहस्र संकुलं पतितं भीमभवार्णवोदरे।
अगतिं शरणगतं गुरोः कृपया केवलमात्मसात् कुरु।।
क्षमस्व देव देवेश क्षमस्व भुवनेश्वर।
तव पादाम्बुजे नित्यं निश्चला भक्तिरस्तु मे।

श्री गुरु चरणेभ्यो नमः प्रार्थनां समर्पयामि।

समर्पण

गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्र्यमेव च।
आगता सुख सम्पत्तिः पुण्यार्थं तव दर्शनात्।।

साधु वासाधु वा कर्म यद्यदाचरितं मया।
तत् सर्वं कृपया देव गृहाणाराधनं मम।।

अनेन पूजा कर्मणा श्री संविदात्मकः श्री गुरुदेवः प्रीयन्ताम्।
ॐ तत् सत् ब्रह्मार्पणम् अस्तु।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।।

मानसिक-गुरु पूजन

आज का युग विज्ञान का है, हर बात को, प्रत्येक कार्य को विचारों से, बुद्धि से और तर्क से परखने की कोशिश करते हैं. . .और उसे 'क्यों' का उत्तर मिलना ही चाहिए। प्रत्येक युवा वर्ग और बुद्धि-जीवी वर्ग के मन में पहले यही चिन्तन उभरता है, कि हम साधना या पूजन आदि क्यों करें, इनकी हमारे जीवन में क्या उपयोगिता है, ये सभी आडम्बर मात्र हैं— जो बेकार हैं, यह उन लोगों का काम है। हमारे पास धन-धान्य, मान-सम्मान, ऐश्वर्य-प्रतिष्ठा सब कुछ है, और भौतिक सुखों की भी कोई कमी नहीं है, तो फिर पूजा-आराधना आदि के पीछे क्यों समय नष्ट करें।

ऐसा सोचने वाले लोगों की यह धारणा नितान्त भ्रम मूलक है, गम्भीरता से विचार करने पर पता चलता है, कि हमें जिस तरह स्थूल देह की सुरक्षा एवं तुष्टि-पुष्टि के लिए भोजन वस्त्रादि की आवश्यकता है, वैसे ही आभ्यन्तर् शरीर (मन आदि) के लिए, उनको समुचित परिशुद्ध करने के लिए पूजा एवं साधना की आवश्यकता भोजन से भी अधिक है। अच्छा भोजन करने से, अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनने और अन्य सुखोपभोग करने से स्थूल शरीर की पुष्टि सम्भव है, यह देह अवश्य सबल होगी, किन्तु अन्तर्मन आदि में जो मल

तथा पाप आदि जमा हैं, उनकी शुद्धि के लिए पूजा-आराधना अपेक्षित है। हमारे सूक्ष्म शरीर में (मन में) अशान्ति, कुविचार, कुबुद्धि तथा कामादि विचार होते ही हैं, जिनके निराकरण के लिए तथा परमानन्द की प्राप्ति के लिए ही हमें पूजा-आराधना की आवश्यकता है।

जैसे पति के बिना पत्नी आश्रयहीन और अनाथ होती है, वैसे ही जीव को ब्रह्मत्व की पिपासा सदैव बनी ही रहती है, ब्रह्म की उपासना-साधना के बिना कर्म दोष से, कर्म बन्धन से उसे छुटकारा मिल ही नहीं सकता। अन्तर्मन के लिए पूजन एवं आराधना उसके उद्धारक तत्त्व हैं, जिसके द्वारा साधक कामना के प्रभुत्व को घटाकर उसके स्थान पर उस महान् ऊर्जा को प्रतिष्ठित करता है, अहम्परक भोगों को त्याग कर उस दिव्य आनन्द का आस्वादन करता है।

आज की इस अत्यधिक युगीय व्यस्तता के कारण कई लोगों के लिए आसन आदि पर बैठ कर साधनात्मक पद्धति से पूजा विधान में समय देना कठिन है। जीवन में इतनी अधिक भाग-दौड़ है, कि दो समय के भोजन की चिन्ता एवं जीवनोपयोगी आवश्यकता को पूरा करने में ही सारा समय निकल जाता है, चाहते हुए भी पूजन के लिए समय नहीं निकाल पाते या शहर में रहने के लिए पूरी आवासीय व्यवस्था सम्भव नहीं है, मुश्किल से एक ही कमरे में, थोड़ी जगह में रहते हैं, इसलिए पूजन की व्यवस्था नहीं हो पाती।

उस स्थिति के लिए यह मानसिक-गुरु पूजन की प्रक्रिया यहां अपेक्षित है, क्योंकि युगानुकूल प्रत्येक व्यवस्था में, प्रक्रिया में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की जाती है, और होनी भी चाहिए। इस मानसिक पूजन में अन्य विशिष्ट पूजनों की अपेक्षा किसी प्रकार की न्यूनता या कम लाभ होगा, ऐसा नहीं सोचना चाहिए, क्योंकि इस पूजन में भी वैसा ही लाभ एवं प्रभाव होता ही है।

इस पूजन में विशेष विधि-नियम की आवश्यकता नहीं है, बिना स्नानादि के भी हाथ-पैर धोकर, शुद्ध होकर किया जा सकता है। घर-बाहर में, बाग-बगीचे में या यात्रा करते समय ट्रेन अथवा बस में तथा होटल आदि में भी समयानुकूल, बिना किसी को कष्ट पहुंचाए चुपचाप, शान्त भाव से यह पूजन सम्पन्न किया जा सकता है।

मन की गति अबाध है, यह पूरे ब्रह्माण्ड का क्षण में ही परिभ्रमण कर सकता है, क्षण में ही ब्रह्माण्ड की समस्त व्यवस्था में हस्तक्षेप करने की क्षमता उसे प्राप्त है. शरीर के भीतर मन का ही कार्य है, मन ही सभी प्रकार की पूजन-पद्धतियों में सक्रियता से कार्य करता है। यह पूजा शान्त भाव से की जाती है, आंखें खुली रखें या बन्द रखें, यह आप पर निर्भर है, सभी बन्धनों से यह विधि मुक्त है, सामने बैठा हुआ व्यक्ति भी यह नहीं जान पायेगा कि आप मानसिक पूजन में संलग्न हैं। यह तांत्रोक्त मानसिक-गुरु पूजन सर्वथा गोपनीय, दुर्लभ और विलक्षण है, सुबह उठते ही शय्या पर बैठे-बैठे भी इसे सम्पन्न कर सकते हैं ।

इसके आश्चर्यजनक परिणाम देखने को मिले हैं, मानसिक पूजन करने से शिष्य को स्वतः ही गुरु की सारी सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं, वह सिद्ध बन कर, गुरु का अत्यन्त प्रिय पात्र होकर सिद्धाश्रम प्रवेश कर लेता है।

भूत शुद्धि

इस पूजन को प्रारम्भ करने से पूर्व शरीर और मन को शुद्ध करने के लिए पहले भूत शुद्धि करें–

"ॐ ह्रौं"

इस मंत्र का एक सौ आठ (१०८) बार जप करने से भूत शुद्धि हो जाती है।

चौर न्यास

भूत शुद्धि के बाद चौर मंत्र से न्यास करें। शरीर के दस द्वारों पर क्रमशः ध्यान एकाग्र करते हुए निम्न निर्दिष्ट बीज मंत्र का यथा संख्यानुसार जप करें–

१.	हृदय	क्रों	१० बार
२.	दोनों नेत्र	हां हां	२० बार, (१० + १०)
३.	दोनों कान	हीं हीं	२० बार (१० + १०)

४.	दोनों नाक	हुं हुं	२० बार (१० + १०)
५.	मुख	स्त्रीं स्त्रीं	१० बार
६.	नाभि	क्लीं	१० बार
७.	लिंग मूल	ह्सौः	१० बार
८.	गुह्य (गुदा)	ब्लूं	१० बार
९.	भ्रूमध्य	हूं	१० बार
१०.	सिर	ह्रीं स्त्रीं क्लीं	१० बार

ध्यान

इस चौर न्यास के बाद गुरुदेव का ध्यान करें—

स्वनाभौ दक्षिणे हस्ते वामहस्तं निधाय च।
भावयेत् तु सहस्रारे श्री गुरुं शक्तिसंयुतम्।।

अपनी नाभि पर दाहिने हाथ को स्थापित करें, फिर दाहिने हाथ के ऊपर बायें हाथ को रखकर ध्यान करें—

वराभय करं शान्तं शुक्लवर्णं सशक्तिकं।
ज्ञानानन्द मयं साक्षात् सर्व ब्रह्म स्वरूपकम्।।

"गौर वर्ण युक्त गुरुदेव साक्षात् ब्रह्म स्वरूप और ज्ञानमूर्ति हैं, वे अपनी शक्ति के साथ साधक के सहस्रार में स्थित होकर साधक को एक हाथ से वर तथा दूसरे हाथ से अभय प्रदान कर रहे हैं।"

ध्यायेच्छिरसि शुक्लाब्जे द्विनेत्रं द्विभुजं गुरुं,
श्वेताम्बर परिधानं श्वेत माल्यानुलेपनं।
वराभयकरं शान्तं करुणामय विग्रहं,
वामेनोत्पल धारिण्या शक्त्यालिंगित विग्रहं।
स्मेराननं सुप्रसन्नं साधकाभीष्टदायकम्।।

"सहस्रार स्थित श्वेत कमल पर दो नेत्र व दो भुजा वाले श्वेत वस्त्र

धारण किये हुए, श्वेत पुष्प हार पहने हुए, वर एवं अभय प्रदान करते हुए, शान्तमूर्ति, करुणा से परिपूर्ण, अति प्रसन्न एवं साधकों को अभीष्ट प्रदान करने वाले; जिनके बायें भाग में शक्तिमयी भगवती विराजमान हैं, उनका मैं श्रद्धामय होकर ध्यान करता हूं।"

कर न्यास

श्रीं	अंगुष्ठाभ्यां	नमः।
गुं	तर्जनीभ्यां	स्वाहा।
रं	मध्यमाभ्यां	वषट्।
वें	अनामिकाभ्यां	हुम्।
नं	कनिष्ठिकाभ्यां	वौषट्।
मः	अस्त्राय	फट्।

अंग न्यास

श्रीं हृदयाय नमः।

दायें हाथ की उंगलियों से हृदय को स्पर्श करें।

गुं शिरसे स्वाहा।

सिर को स्पर्श करें।

रं शिखायै वषट्।

शिखा को स्पर्श करें।

वें कवचाय हुम्।

दोनों भुजाओं को स्पर्श करें (मानसिक)।

नं नेत्रत्रयाय वौषट्।

दोनों नेत्रों को स्पर्श करें।

मः करतलकर पृष्ठाभ्यां फट्।

इसी प्रकार गुरु शब्द के गकार से भी दोनों न्यास करें—

कर न्यास

गां अंगुष्ठाभ्यां नमः।
गीं तर्जनीभ्यां स्वाहा।
गूं मध्यमाभ्यां वषट्।
गें अनामिकाभ्यां हुम्।
गौं कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्।
गः अस्त्राय फट्।

अंग न्यास

गां हृदयाय नमः।
गीं शिरसे स्वाहा।
गूं कवचाय हुम्।
गौं नेत्रत्रयाय वौषट्।
गः करतल कर पृष्ठाभ्यां फट्।

– इन दोनों न्यासों से साधक में साधना सम्बन्धी शीघ्र लाभ की सम्भावना स्वतः बलवती होने लगती है।

पूजा विधि

ॐ ऐं कनिष्ठिकाभ्यां "लं" पृथिव्यात्मकं
गन्धं सशक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।
गन्ध समर्पित करें।

ऐं अंगुष्ठाभ्यां "हं" आकाशात्मकं पुष्पं सशक्तिकं
श्री गुरवे समर्पयामि नमः।
पुष्प समर्पित करें।

ऐं तर्जनीभ्यां "यं" वागात्मकं धूपं
सशक्तिकं श्री गुरवे समर्पयामि नमः।
धूप समर्पित करें।

ऐं मध्यमाभ्यां "रं" हृदयात्मकं दीपं सशक्तिकं
श्री गुरवे समर्पयामि नमः।
नैवेद्य समर्पित करें।

ऐं करतलकर पृष्ठाभ्यां सर्वात्मकं ताम्बूलं सशक्तिकं
श्री गुरवे समर्पयामि नमः।
ताम्बूल समर्पित करें।

मूल मंत्र

।।ॐ परमतत्त्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः।।

इसके बाद 'स्फटिक माला' या उंगलियों से गणना करते हुए एक सौ आठ बार गुरु मंत्र का उच्चारण करें।

नमस्कार

फिर हाथ जोड़ कर गुरु पंक्ति को नमस्कार करें–

ॐ गुरुभ्यो नमः। **ॐ परम गुरुभ्यो नमः।**
ॐ परात्पर गुरुभ्यो नमः। **ॐ पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः।**

इसके बाद **'ऐं'** इस बीज मंत्र का एक सौ आठ बार जप करें।

जप समर्पण

ॐ गुह्याति गुह्यगोप्ता त्वं गुहाणाऽस्मत् कृतं जपं।
सिद्धि र्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर।।

इसके बाद **'ऐं'** बीज से तीन बार प्राणायाम करके गुरुदेव को नमस्कार करें।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।

ॐ शान्तिः। शान्तिः।। शान्तिः।।। ✿

नमो विश्व रूपाय

सर्व सिद्धि प्रदाय

श्री गुरुदेव निखिलेश्वरानन्द

गुरु शिष्य का सम्बन्ध सबसे पवित्रतम दिव्य सम्बन्ध है, जहां शिष्य मन, वचन, कर्म से आराध्य गुरुदेव की आराधना कर अपने जीवन के विकार, दोषों का नाश कर सिद्धि तत्व प्राप्त करता है, प्रस्तुत आलेख पूज्य गुरुदेव के संन्यासी स्वरूप की ऐसी विशिष्ट साधना का प्रयोग है, जिसे उनके हजारों शिष्य सम्पन्न कर अपने जीवन में पूर्ण बन गये, पूज्य श्री के शिष्यों में गृहस्थ ही नहीं अपितु हजारों-हजारों साधु संन्यासी भी हैं, जो यह प्रयोग नित्य प्रति सम्पन्न कर जीवन की पीड़ाओं से मुक्त हो गये हैं, दीक्षा प्राप्त शिष्यों के लिए यह आवश्यक ही नहीं जीवन का अंग है।

परम पूज्य गुरुदेव का शिष्य होने के नाते मैं आज गुरुदेव के स्वरूपों का अध्ययन करने का दुःसाहस कर रहा हूं इस हेतु सर्वप्रथम तो मैं पूज्य श्री के चरणों का ध्यान करते हुए उनसे क्षमा प्राप्ति की प्रार्थना करते हुए अपने हृदय के विचार खोल कर सबके सामने रख रहा हूं।

दिव्य पुरुष जब इस धरा पर आते हैं, तो उनका आगमन शान्त वातावरण के साथ होता है और यह आगमन तभी होता है, जब संसार को उनकी आवश्यकता होती है, हजारों लाखों वर्षों से इतिहास में ऐसे महापुरुष साधारण रूप से जन्म लेकर साधारण वातावरण में पल कर भी अपनी दिव्य लीलाएं दिखाते हुए, एक कल्याणकारी समाज संरचना करते हुए, नवीन प्रथ का निर्माण करते हैं, पूज्य श्री ने अपने जीवन में अपनी सारी लीलाओं का अपने शिष्यों को बार-बार अनुभूति करा कर, अपने साथ लेकर मार्गदर्शन किया, उन्होंने अपने शिष्यों को प्रत्यक्ष प्रमाण सहित जीवन का स्वरूप और जीवन जीने

की कला को प्रस्तुत करने हेतु जीवन के सभी रंग में दिव्य रास रचा, शिक्षा, गृहस्थ, संन्यास जीवन, साधना, तपस्या सभी रंग तो निराले ही हैं, किस प्रकार जीवन में रहते हुए, गृहस्थ में रहते हुए, जीवन की ऊंचाइयां प्राप्त की जा सकती हैं, किस प्रकार व्यक्ति गृहस्थ होते हुए भी संन्यासी हो सकता है यह सब उन्होंने प्रत्यक्ष रूप से प्रकट किया।

मैं उनका संन्यासी शिष्य अपने सभी संन्यासी भाइयों के साथ पूज्य गुरुदेव के गृहस्थ शिष्यों के सम्मुख स्वामी निखिलेश्वरानन्द साधना प्रस्तुत कर रहा हूं जिसकी रचना महातेजस्वी योगीराज महारूपा जी ने की और हम सब शिष्य इस साधना को कर अपने जीवन में सिद्धि तत्व प्राप्त कर सके।

विनियोग

ॐ अस्य श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानन्द मन्त्रस्य भगवान श्री महारूपा ऋषि गायत्री छन्द निखिलेश्वरानन्द योगीश्वर्यै, क्लीं बीजं, श्रीं शक्ति ऐं कीलकं प्रणवो ॐ व्यापक मम समस्त क्लेश परिहारार्थं चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थे मन्त्र जपे विनियोगः।

ऋष्यादिन्यास

श्री महारूपा ऋषये नमः-शिरसि।
गायत्री छन्दसे नमः-मुखे।
निखिलेश्वरानन्द ऋषिभ्यो नमः-हृदि।
क्लीं बीजाय नमः-गुह्ये।
श्रीं शक्तये नमः-नाभौ।
ऐं कीलकाय नमः-पादयोः।
ॐ व्यापकाय नमः-सर्वांगे।
मम समस्त क्लेश परिहारार्थ चतुर्वर्ग फल प्राप्तये सर्व सिद्धि सौभाग्य वृद्धयर्थ मन्त्र जपे विनियोगाय नमः-पुष्पांजली

करन्यास

ॐ ऐं श्रीं क्लीं	अंगुष्ठाभ्यां नमः
प्राणात्मन	तर्जनीभ्यां स्वाहा
'निं'	मध्यमाभ्यां वषट्
सर्व सिद्धि प्रदाय	अनामिकाभ्यां हुं
निखिलेश्वरानंदाय	कनिष्ठिकाभ्यां वौषट्
नमः	कर-तल-कर पृष्ठाभ्यां फट्

अंगन्यास

ॐ ऐं श्रीं क्लीं	हृदयाय नमः
प्राणात्मन	शिरसे स्वाहा
'निं'	शिखायै वषट्
सर्व सिद्धि प्रदाय	कवचाय हुं
निखिलेश्वरानंदाय	नेत्र-त्रयाय वौषट
नमः	अस्त्राय फट्

मानस पूजन

१-ॐ 'लं' पृथिव्यात्मक गन्धं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

१ ॐ 'हं' आकाशात्मकं पुष्पं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

३-ॐ 'यं' वायुवात्मकं धूपं प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

४-ॐ 'रं' वन्ह्यात्मकं दीपं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि।

५-ॐ 'वं' अमृतात्मकं नैवेद्यं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि ।

६-ॐ 'शं' शक्त्यात्मकं ताम्बूलं श्री प्राणात्मन निखिलेश्वरानंद श्री पादुकाभ्यां नमः-अनुकल्पयामि ।

मन्त्र

।। ॐ ऐं श्रीं क्लीं प्राणात्मन 'निं' सर्व सिद्धि प्रदाय निखिलेश्वरानंदाय नमः ।।

(सवा लाख मन्त्र जप से सिद्धि)

निखिलेश्वरानंद पंच रत्न स्तवन

ॐ नमस्ते सते सर्व-लोकाश्रयाय, नमस्ते चिते विश्व-रूपात्मकाय ।
नमो द्वैत तत्वाय मुक्ति-प्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय ।।१।।
त्वमेकं शरण्यं त्वमेकं वरेण्यम्, त्वमेकं जगत-कारण विश्व-रूपम् ।
त्वमेकं जगत् कर्तृ-पातृ-प्रहर्तृ त्वमेकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ।।२।।
भयानां भयं भीषणं भीषणानाम् गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ।
महोच्चैः पदानां नियन्तृ त्वमेकम् परेषां परं रक्षक रक्षकानाम् ।।३।।
परेशं प्रभो सर्व-रूपाविनाशिन् अनिर्देश्य सर्वेन्द्रियागम्य सत्य ।
अचिन्त्याक्षर व्यापकाव्यक्त-तत्व, जगद् भासकाधीश पाय दपायात् ।।४।।
तदेकं स्मरामस्तदेकं जपामः तदेकं जगत् साक्षि-रूपं नमामः ।
तदेकं निधानं निरालम्बमीशम् भवाम्बोधि-पोत शरण्यं व्रजामः ।।५।।
पंच रत्नमिदं स्तोत्रं ब्रह्मण परमात्मनः ।
यः पठेत प्रयतो भूत्वा ब्रह्म सायुज्य माप्नुयात् ।।६।।

अर्थात् हे गुरुदेव ! आप मेरे जीवन के आराध्य, नित्य समस्त लोकों के आश्रय हो, आपको नमस्कार करता हूं, आप ज्ञान स्वरूप विश्व आत्मा स्वरूप अद्वैत तत्व प्रदायक मुक्ति प्रदायक सर्व व्यापी निर्गुण ब्रह्म हो, सगुण रूप में आप हम समस्त शिष्यों के सामने उपस्थित हो, आपको नमस्कार है ।

आप ही हम समस्त शिष्यों के आश्रय हो समस्त सिद्धियों के एकमात्र कारण हो, हमारे सृष्टिकर्त्ता, निर्माण-कर्त्ता, पालन कर्त्ता, संहार कर्त्ता हो, आप निश्छल और विविध कल्पनाओं से रहित पूर्णता प्राप्त षोडशकला युक्त पुरुष हो, आपको हम शिष्यों का नमस्कार !

आप भय का नाश करने वाले विपत्ति को हरने वाले हम सब शिष्यों की एक मात्र गति हो, पवित्रता के साक्षात् स्वरूप, शक्तियों के आधार स्वरूप हो, रक्षकों के पूर्ण रक्षक हो, हम सब शिष्यों का भक्ति भाव से प्रणाम !

हे तपस्वी ! हे प्रभु ! समस्त शिष्यों के हृदय में विराजमान समस्त शिष्यों का कल्याण करने वाले अगोचर होते हुए भी हम सब लोगों के सामने साक्षात् देह रूप में उपस्थित हो, हे सत्य स्वरूप ! हे अचिन्त्य ! हे अक्षर या व्यापक ! हे ब्रह्म स्वरूप मेरे आराध्य ! हे मेरे प्राणों में निवास करने वाले आप हमें अपनी भक्ति अपना ज्ञान अपना स्नेह प्रदान करें ।

हम न तो किसी इष्ट को जानते हैं, न मन्त्र, न तन्त्र, न साधना रहस्य, हम तो केवल गुरु मन्त्र का जप करने में समर्थ हैं, आपकी पल-पल की लीलाएं देखते हुए आपको सामान्य मानव की तरह हंसते, उदास होते, विचरण करते कहते-सुनते अनुभव कर भ्रमित हो जाते हैं, हम अपने इस जन्म में संसार के दुःखों में गृहस्थ की परेशानियों में डूबते-उतराते आपका भली प्रकार से चिन्तत नहीं कर पाते, हमें और कुछ नहीं आता हम तो केवल आतुर कंठ से '**गुरुदेव**' शब्द का उच्चारण कर सकते हैं, यह शब्द ही हमारा सब कुछ है हम तो केवल आपका आश्रय ग्रहण करते हैं।

जो इस पंच रत्न स्तवन का नित्य पाठ करता है वह निश्चय ही समस्त विकारों से मुक्त हो कर ब्रह्म स्वरूप गुरु चरणों में लीन होने का सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है।

उपरोक्त पाठ सम्पन्न कर "**दिव्यौघ गुरु यन्त्र**" का पूजन कर अपने हाथ में जल लेकर अपना नाम, पिता का नाम, गोत्र, गुरु का नाम लेते हुए संकल्प करें कि मेरी देह में सूक्ष्मता का भाव आए और पूज्य गुरुदेव मेरे देह में अपनी समस्त शक्तियों, समस्त ज्ञान, सिद्धियों सहित समाहित हों, तत्पश्चात् निम्न स्तोत्र कवच का पाठ करें—

गुरुदेव शिरः पातु हृदयं निखिलेश्वरः।
कंठं पातु महायोगी वदनं सर्व-दृग-विभुः।
करो मे पातु पूर्णात्मा पादो रक्षतु स्वामिनः।
सर्वांग सर्वदा पातु परं ब्रह्म सनातनम्।
यः पठेद् गुरु कवचं ऋषि-न्यास पुरः सरम्।
स ब्रह्म ज्ञानमासाद्य साक्षात् ब्रह्ममयो भवेत्।
भूर्जे विलिख्य गुटिका स्वर्णस्थां धारयेद् यदि।
कण्ठे दक्षिणे बाहौ सर्व सिद्धिश्वरो भवेत्।
इत्येतत् परमः गुरु कवचं यः प्रकाशितम्।
दद्यात् प्रियाय शिष्याय भक्ताय प्रिय धीमते।

अर्थात् परम पूज्य गुरुदेव हमारे सिर की रक्षा करें, परम पूज्य स्वामी निखिलेश्वरानंद जी हमारे हृदय की रक्षा करें, महायोगी गुरुदेव हमारे कण्ठ की रक्षा करें, और समस्त ब्रह्माण्ड को देखने वाले ब्रह्म स्वरूप गुरुदेव हमारे शरीर की रक्षा करें।

पूर्ण स्वरूप गुरुदेव मेरे दोनों हाथों की रक्षा करें, मेरे स्वामी गुरुवर मेरे दोनों पैरों की रक्षा करें, सनातन ब्रह्म स्वरूप परम पूज्य गुरुदेव स्वामी निखिलेश्वरानन्द जी मेरे समस्त शरीर की रक्षा करें।

इस गुरु कवच का ऋषि महायोगी छन्द अनुष्टुप् देवता स्वयं गुरुदेव तथा चतुर्वर्ग फल प्राप्ति के लिए यह प्रयोग है, जो शिष्य इस प्रयोग का पाठ करता है, वह समस्त सिद्धियों को प्राप्त कर गुरुदेव का प्रिय बनता हुआ पूर्ण रूप से ब्रह्ममय हो जाता है।

जो शिष्य इस कवच को भोज पत्र पर लिख कर **गुरु तत्व गुटिका** में रख कर अपने कण्ठ या दाहिनी भुजा पर धारण करता है, वह निश्चय ही समस्त प्रकार की सिद्धियों का स्वामी होता है।

मैंने अत्यन्त गोपनीय इस गुरु कवच को स्पष्ट किया है इसे गुरु भक्त बुद्धिमान और प्रिय शिष्य को ही प्रदान करना चाहिए।

इस कवच का पाठ कर साधक "**गुरु सिद्धि माला**" से गुरु मन्त्र का एक माला अथवा तीन माला जप सम्पन्न करें—

गुरु मन्त्र

।। ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।।

महारूपा जी द्वारा रचित गुरु पूजा का यह अध्याय प्रत्येक शिष्य को अपने हृदय में उतार कर इस प्रकार नित्य प्रति सम्पन्न करना चाहिये कि हर धड़कन के साथ 'जय गुरुदेव' ध्वनि ही निकले।

वे निरन्तर प्रयत्नशील हैं, सहयोग आपको देना है, क्योंकि गुरुदेव ने इस क्रिया को इतना सरल एवं सहज बना दिया है, कि शिष्य अपने अल्प प्रयासों से ही शिष्यता को धारण करने में समर्थ हो जाता है और पूर्णता की ओर अपने कदम बढ़ा देता है।

परन्तु समाज तो अपनी प्रवृत्ति के अनुसार किसी भी दिव्य क्रिया को सहजता से होने ही नहीं देता है, वह तो चिंगारी पर रेत डालने को व्यग्र रहता है, क्योंकि यदि शिष्यता प्राप्त हो जाएगी तो अहं समाप्त होने लगेगा और व्यक्ति का अहं अपनी समाप्ति स्वीकार नहीं कर पाता है। परन्तु पूज्य गुरुदेव ने भी यह निश्चय कर लिया है, कि वे किसी भी चिंगारी को बुझने नहीं देंगे और उसे समर्थ बना देंगे, जिससे कि वह पूर्णता को धारण कर सके। लेकिन इसके लिए तो निरन्तर गुरुदेव से सम्पर्क स्थापित करना पड़ेगा।

यदि गुरु निश्चय कर लेते हैं, तो उसे पूरा करने की सामर्थ्य भी रखते हैं। वह ऐसी परिस्थितियां भी निर्मित कर लेते हैं, कि उनकी लगाई हुई चिंगारी एक आग में परिवर्तित हो सके। गुरुदेव अपने शिष्यों को पूर्णता प्रदान कर देना चाहते हैं और इस क्रिया को करने में संलग्न भी हैं, पर प्राप्त करने के लिए हमें आगे तो आना ही पड़ेगा। यदि रेत के ढेर में दबने में ही हमें प्रसन्नता है, तो फिर इसमें न्यूनता तो हमारी ही है। आनन्द तो बह रहा है, यदि प्राप्त करना है, तो आगे बढ़ना ही पड़ेगा, पहुंचना ही होगा उस स्थान तक जहां पर यह क्रिया निरन्तर चल रही है।

इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए जिस साधना की विशिष्टता है, उसे यहां प्रस्तुत किया जा रहा है; इसे आप गुरु पूर्णिमा के दिन ही सम्पन्न करें।

गुरु पूजन विधि

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया को समाप्त कर शुद्ध वस्त्रादि से पूजा स्थल में जो पहले से ही स्वच्छ कर लिया गया हो, पूर्व या उत्तर दिशा की ओर आसन बिछा कर बैठें। अपने सामने एक चौकी पर सफेद वस्त्र बिछा कर उसमें पूज्य गुरुदेव का प्राण प्रतिष्ठित चित्र स्थापित करें।

सामग्री – 'निखिलेश्वरानन्द दिव्य चैतन्य सिद्धि कवच', 'गुरु प्रत्यक्ष दर्शन गुटिका', 'गुरु प्राण संजीवनी माला'

पूजन से पूर्व शुद्ध घी का दीपक जला लें, घी का दीपक पूजन काल में सदैव साधक के दाहिनी ओर रखें। निम्न मंत्र से दीपक का पूजन रोली और अक्षत (चावल) से करें –

ॐ दीप ज्योतिषे नमः

ॐ दीपस्थ देवतायै नमः

फिर प्रार्थना करें –

भो दीप! देव रूपस्त्व कर्म साक्षी ह्यविघ्नकृत्।
यावत् कर्म समाप्तिः स्यात् तावदत्र स्थिरो भव॥

इसके बाद दोनों हाथ जोड़कर अपने इष्टदेव का स्मरण करें –

सर्वमंगल मांगल्य वरेण्यं वरदं शुभम्।
नारायण नमस्कृत्य सर्वकर्माणि कारयेत्॥

पवित्रीकरण

बाएं हाथ में जल लेकर दाहिने हाथ की अंगुली से अपने ऊपर जल छिड़कें –

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वास्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं सः बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥

गुरु प्रणाम

दोनों हाथ जोड़ें –

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं परापर गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

जीवन्यास

अपने हृदय पर दाहिना हाथ रखकर अपनी प्राण प्रतिष्ठा करें –

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं ह्रीं हंसः

मम प्राणाः इह प्राणाः।

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं ह्रीं हंसः

मम जीव इह स्थितः।

आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं ह्रीं हंसः

मम सर्वाणि इन्द्राणि, वाङ् मनः चक्षुः त्वक्
श्रोत्र घ्राण जिह्वा इहैव आगत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु।

गणपति का ध्यान करें–

ॐ तत्पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि तन्नो दन्ति प्रचोदयात्

ॐ गं इदं स्नानं गणेशाय नमः

ॐ गं एष गन्धः सचन्दनं सपुष्पं गणेशाय नमः

ॐ गं एष धूपः साक्षतं गणेशाय नमः

ॐ गं एष दीपः नैवेद्यन सहितं गणेशाय नमः।

दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम कर लें।

गुरु चित्र को स्नान करावें –

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।

चित्र व यंत्र को पोंछ दें।

ॐ ऐं इदं स्नानं श्री गुरु चरणेभ्यो नमः। (स्नान)

ॐ ऐं एष गन्धः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (तिलक करें)

ॐ ऐं इदं पुष्पं श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (पुष्प चढ़ावें)

ॐ ऐं एष धूपः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (धूप दिखाएं)

ॐ ऐं एष दीपः श्री गुरुचरणेभ्यो नमः। (दीप दिखाएं)

ॐ ऐं इदं नैवेद्य समर्पयामि। (नैवेद्य अर्पित करें)

गुरु चित्र के सामने एक थाली रखें। अष्ट गन्ध या कुंकुम से त्रिकोण बना लें (ॐ) मध्य में ॐ लिखकर 'निखिलेश्वरानंद दिव्य चैतन्य सिद्धि यंत्र' को स्थापित करें। 'गुरुत्व प्रत्यक्ष गुटिका' दाहिनी ओर स्थापित करें।

स्नान

यंत्र को स्नान करावें।

स्नानं समर्पयामि श्री गुरु चरणेभ्यो नमः

इसके बाद निम्न मंत्र बोलते हुए कुंकुम से चावल रंगकर बायें हाथ में लेकर यंत्र पर चढ़ावें –

ॐ गुं गुरवे नमः

ॐ गुं परम गुरवे नमः

ॐ गुं परात्पर गुरवे नमः

ॐ गुं पारमेष्ठि गुरवे नमः

ॐ गुं अनन्तात्मने नमः

ॐ गुं परमात्मने नमः

ॐ गुं ज्ञानात्मने नमः

ॐ गुं अनन्ताय नमः

ॐ गुं पारिजाताय नमः

ॐ गुं ऐश्वर्याय नमः

ॐ गुं पद्माय नमः

ॐ गुं आनन्दकन्दाय नमः

ॐ गुं संविल्लाभाय नमः

ॐ गुं प्रकृतिप्रियाय नमः

ॐ गुं ज्ञानाय नमः

ॐ गुं आधार शक्तये नमः

ॐ ऐं एष सांगाय सपरिवाराय सर्वशक्ति मयाय गुरुदेवाय निखिलेश्वराय नमः।

पीठ पूजा

निम्न मंत्र बोल कर यंत्र पर गन्ध और पुष्प चढ़ावें।

ॐ ह्रीं एते गन्ध पुष्पे पीठ देवताभ्यो नमः।

ॐ ह्रीं एते गन्ध पुष्पे पीठ शक्तिभ्यो नमः।

ॐ ऐं इदं पुष्पं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः

ॐ ऐं एष धूपः ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः

ॐ ऐं एष दीपः ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः

ॐ ऐं इदं नैवेद्यं ब्रह्माण्डस्वरूपाय निखिलेश्वराय नमः

ॐ ऐं इदं आचमनीयं श्री निखिलेश्वराय नमः।

ॐ ऐं इदं ताम्बूलं श्री निखिलेश्वराय नमः॥

आवरण पूजा

निम्न मंत्रों से यंत्र पर सुगन्धित पुष्प चढ़ावें –

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे निखिलेश्वरानन्द देवताभ्यो नमः

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे परम गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे परापर गुरुभ्यो नमः

ॐ ऐं एष गन्धपुष्पे पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः

इसके बाद 'गुरु प्राण संजीवनी माला' से १२ माला मंत्र जप करें –

मंत्र

॥ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः॥

OM PARAM TATVAAY NAARAAYANNAAY
GURUBHYO NAMAH

जप समर्पण

ॐ गुह्यातिगुह्य गोप्ता त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं सिद्धिर्भवतु मे देव त्वत्प्रसादान्महेश्वर।

इसके बाद आरती करें तथा प्रसाद वितरण करें। साधना समाप्ति के बाद यंत्र, माला तथा गुटिका को जल में विसर्जित कर दें।

न्यौछावर – २६०/-

अब सौंप दिया सब भार तुम्हारे चरणों में

गुरु चरण कमलेभ्यो नमः

गुरु चरणों का ध्यान एवं नित्य प्रति गुरु पूजन ही तो शिष्य का जीवन है, यह पूजा समर्पण साधना है, जिसमें साधक अपने समस्त राग-द्वेष, पीड़ा अपने आंसुओं के माध्यम से कण्ठ से गुरु पुकार करते हुए समर्पित कर देता है, सौंप देता है, अपना समस्त जीवन।

गुरु महिमा का वर्णन केवल वेद पुराण उपनिषद इत्यादि शास्त्रों में ही नहीं है अपितु जन-जन में एक निश्चित आधार के रूप में विख्यात है, महान सद्गुरुओं ने अपने स्वयं की प्रशंसा में कुछ नहीं लिखा, उन्होंने परम ब्रह्म को आधार माना अपने विचारों को कभी थोपने का प्रयास नहीं किया, उनका चिन्तन केवल सामाजिक चेतना को जागृत कर पूरे समाज के स्तर को सुधारना था, गुरु चाहे वशिष्ठ हों, याज्ञवल्क्य हों, गोरखनाथ हों अथवा रामतीर्थ या विवेकानन्द केवल एक ही प्रयास रहा कि सामाजिक अन्धकार को दूर कर शिष्यों के जीवन में ज्ञान की लौ जलाई जाए, उनके लिए शिष्य की कोई श्रेणी नहीं थी, जो भी शिष्य भावना से युक्त होता था, अपने भीतर आत्म साक्षात्कार करना चाहता था, अपनी कुण्डलिनी जागरण करना चाहता था, अपने जीवन के वास्तविक स्वरूप को देखना चाहता था, उस प्रत्येक शिष्य को अपने हृदय से लगाया, अपने पुत्र से अधिक माना और उसके जीवन को आलोकित किया।

यदि सद्गुरुदेव सूर्य हैं तो शिष्य उनकी किरणें हैं, और जब ये किरणें, अपना प्रकाश फैलाती हैं, तो सब कुछ आलोकित हो जाता है, अन्धकार का नाश हो जाता है।

असत्य से सत्य की ओर

महान गुरुओं ने कभी भी अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं किया और न ही अपनी शक्ति के चमत्कारिक प्रदर्शन किये, क्योंकि उन्हें ज्ञान था, कि यदि पूरे समाज का उत्थान करना है, समाज के सामने नया आदर्श देना है, शिष्य के जीवन से अज्ञान रूपी परत हटानी है तो उसे एक साधारण रूप में अपने पास बिठा कर अपने हाथ से ज्ञान का अमृत प्याला पिलाना पड़ेगा, उसे अपने साथ रख कर कुछ सिखाना पड़ेगा, अन्यथा प्रभाव केवल ऊपर-ऊपर ही रहेगा, और शिष्य वास्तविक अनुभूति प्राप्त नहीं कर सकेगा, इसके लिए उन्होंने सबसे पहले स्वयं शरीर की देह की क्षमता को मांपा, तपस्या के बल पर अपने आपको उस स्तर तक पहुंचाया कि वे जो भी बातें कहें वह एक ठोस आधार लिये हो, स्वयं की देखी-परखी, अनुभव की हुई हों, स्वयं के भीतर संशय की कोई गुंजाइश नहीं रहे, क्योंकि यदि स्वयं के भीतर ही संशय है तो जो वाणी उच्चारित होगी उसमें आधार नहीं होगा।

गुरु और वरदान

क्या आपने आज तक कहीं पढ़ा है कि गुरु ने कोई वरदान कोई भौतिक इच्छा मांगी हो, उन्होंने केवल ब्रह्मत्व प्राप्ति हेतु साधनाएं सम्पन्न कीं, और ब्रह्मत्व प्राप्ति से उनके भीतर वह तेज उत्पन्न हो गया कि यदि किसी ने उनसे कोई वर मांगा तो सद्गुरुदेव के श्रीमुख से उच्चरित हुआ "तथास्तु" अर्थात् जैसी तुम्हारी इच्छा है, वैसा ही कार्य पूर्ण हो, अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह आता है, कि क्या वरदान मांगना शिष्य के लिए उचित है ? यही शिष्य की भक्ति और उसकी क्षमता का प्रश्न उठ खड़ा होता है, सद्गुरुदेव सब कुछ देखते हुए भी शिष्य के मुंह से कहलाना चाहते हैं और जब शिष्य अपने भीतर के प्रश्नों के उत्तर अपनी इच्छाओं के उत्तर अपने आप गुरु भक्ति से समाधान कर लेता है, वही शिष्य अपने जीवन में सद्गुरुदेव के निकट पहुंच जाता है, इसीलिए शास्त्रों में गुरुदेव के लिए निवेदन है—

॥ ॐ ब्रह्म वै दिवो ह: स: हिवो वै गुरु वै सदा ह: ॥

हे गुरुदेव ! आप ब्रह्म स्वरूप हैं, सूर्य स्वरूप हैं, विष्णु स्वरूप हैं, आप मुझे आत्मवत् बना लें, यही प्रार्थना है।

आत्मवत् बनते की शिष्य की भावना असत्य से सत्य की खोज के लिए बढ़ते हुए, सार तत्व को प्राप्त करना है, जिसे गुरु ही सरलता से सूर्य के सदृश तेज पुंज बन कर शिष्य को जाग्रत कर देते हैं।

तमसो मा ज्गोतिर्गमय

जैसे ही शिष्य के अन्तर में गुरु उपरोक्त क्रिया सम्पन्न करता है, उसके जीवन में अज्ञान अन्धकार के बादल स्वतः छटते जाते हैं, एक नयी सिहरन नयी उमंग, नयी गति, नयी तरंग, जीवन में नाचने लगती है, उसे अहसास होने लगता है कि यही वह सब कुछ नहीं है, जिसे पाने के लिए

उसने अनमोल मानव रत्न यह देह रूपी मन्दिर प्राप्त किया है, इसमें स्थापित आत्मा और ब्रह्म का संयुक्त स्वरूप ही उसका अभीष्ट है, गुरु का "गु" अक्षर और "रु" अक्षर निश्चय ही अज्ञान से सत्य एवं अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने की एक मधुर तांत्रोक्त क्रिया है, इसीलिए कहा गया है–

गुकारस्त्वदन्धकारश्च रुकारस्तेज उच्यते । ज्ञानाग्रासक ब्रह्म गुरुरेव न संशयः ।।

गुरु के पावन चरणों में मानव अपने संचित पुण्यों को ले कर जब दीक्षा का सौभाग्य प्राप्त करता है, तो गुरु का मिलन दिव्य वात्सल्य और ममतायुक्त पिता और माता का शिशु में आत्म मिलन जैसा मनोहारी दृश्य पैदा कर कर देता है, जब गुरु शिष्य को सीने से लगाकर उसे प्यार से दुलारते हुए 'बेटा' का उच्चारण करते हैं, गुरु अपने हाथ के स्पर्श से आंखों के तेज से शिष्य को नया जीवन, नया चिन्तन, नया दर्शन, प्रदान करते हैं तो यही तो **"तमसो मा ज्योतिर्गमय"** की पादाम्बुज कल्प कथ्य है ।

मृत्योर्माअमृतंगमयः

मृत्यु मानव मात्र के लिए भयप्रद है, बालक हो अथवा वृद्ध, स्त्री हो अथवा पुरुष, पशु-पक्षी हो अथवा अन्य जीवनधारी, सभी इससे बचना चाहते हैं, लेकिन विधि की विडम्बना के आगे कहीं किसी की पार नहीं पड़ती, सभी मृत्यु के आगे नतमस्तक हो युगों-युगों से काल कवलित होते चले आये हैं, आगे भी यह क्रम चलता जा रहा है यदि किसी ने मृत्यु को जीवन शृंगार बनाया है, हंसते हुए गले लगाया है, तो ऐसा वह व्यक्तित्व गुरु का ही है, जिसके आगे मृत्यु अपने आपको ठगा सा महसूस करती है, बौनी हो जाती है उनके व्यक्तित्व के सामने, क्योंकि गुरु ने तो सदा अमरता का पाठ पढ़ा है, और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने की संजीवनी कला में वह पूर्ण पारंगत है ।

गुरु अपने शिष्य को आत्मवत् बनाना चाहता है, उसके मृत्यु की ओर बढ़ते कदमों को मोड़ कर उसे अमरता का पाठ पढ़ाता है, वह चाहता है कि अपने सामने ही वह अपने शिष्य को इस योग्य बना दे, कि वह उसके बाद भी स्वयं पूर्ण तेजस्विता प्राप्त करते हुए, समाज को नयी दिशा दे सके, उसके लक्ष्य और कार्य को आगे गति दे सके, शिष्य गुरु के चरणों में बैठ कर अपने जीवन को संवारता जाता है, गुरु रूपी कामधेनु का ज्ञान रूपी मधुर दुग्धपान करते हुए कल्पवृक्ष सी शीतल छांव रूपी गुरु का वरदानमय आशीर्वाद प्राप्त करते हुए वह कभी थकता और अघाता नहीं, नित्य नूतन होता हुआ अपने जीवन का पूरा कायाकल्प कर लेता है और इसे ही गुरु पादाम्बुज कल्प का सही रूप कहा जाता है इसीलिए शिष्य अपने गुरु को हर पल, हर क्षण प्रसन्न रखने का प्रयास करता है, क्योंकि उसे मालूम है—

शिवे क्रुद्धे गुरुस्त्राता गुरु क्रुद्धे शिवो न हि । तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्री गुरूं शरणं व्रजेत् ।।

गुरु प्राणाधार

गुरु और शिष्य की धड़कनें जुदा-जुदा नहीं होतीं, शिष्य के रोम-रोम में गुरु की छवि समाहित रहती है, आंखों में गुरु का तेजस्वी स्वरूप नाचता है, हर पल, हर क्षण, उठते-बैठते, सोते-जागते शिष्य गुरु में ही खोया रहता है, उसका संसार गुरुमय हो जाता है, उसकी हर क्रिया गुरु को अर्पित होती है, अपना स्वयं का अस्तित्व

गलती हुई बर्फ सा गलता जाता है, और एक क्षण जीवन में वह आता है कि समस्त क्रियाओं के प्रति उसका कर्त्ता-भाव सदा-सदा के लिए तिरोहित हो जाता है, वह गुरु की परछाई सा बन गुरुतुल्य हो जाता है, और यही क्षण होता है कि गुरु अपने शिष्य को दोनों बांहों में समेट सीने से लगा कर सब कुछ समाहित कर देता है अपने शिष्य में, गुरु पाद सेवा और गुरु युगल चरण शिष्य की धरोहर बन कर साकार हो उठती है, ज्ञान के विराट पुंज में बोध के उन्मुक्त वातायनी क्षणों में, जहां व्यापकता ही व्यापकता है, सत् चित् आनन्द का मधुर मिलन शिष्य का व्यापक जीवन बन जाता है और इसीलिए शिष्य गुरु को प्राणाधार मानते हुए अनायास स्वीकार कर लेता है—

गुरोः पादोदकं युक्त्वा सो सोऽक्षयोवटः। तीर्थराजः प्रयागश्च गुरुमूर्त्ये नमो नमः ।।

कल्प प्रयोग विधि

किसी भी गुरुवार को प्रातः चार बजे ब्रह्म मुहूर्त में स्नान आदि नित्य क्रियाओं से निवृत्त होकर शुद्ध श्वेत धोती पहन कर सफेद आसन पर उत्तर की ओर मुंह कर बैठें, फिर मन की वाणी एवं हृदय को पवित्र करने के लिए 'ॐ' प्रणव बीज का तीन बार नाभि से उठाते हुए लम्बा उच्चारण करें, और फिर तीन प्राणायाम सम्पन्न करते हुए अपने सामने मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त **'चांदी की चरण पादुका'** किसी पात्र में स्वस्तिक बना कर उस पर स्थापित करें, साथ ही **गुरु यन्त्र और चित्र** भी सामने रखें और फिर कुंकुम, अक्षत, पुष्प, नैवेद्य एवं अगरबत्ती आदि से पूजन आरती सम्पन्न करें इसके बाद शुद्ध घी की ज्योति अपने सामने लगाए शुद्ध दूध गंगाजल चरणों में अर्पित करते हुए गुरु चिन्तन और गुरु चरणों का ध्यान करें, ।

तत्पश्चात् पद्मासन या सिद्धासन में बैठ कर अपने शरीर के रोम-रोम में गुरु को समाहित करते हुए उनकी उपस्थिति का अहसास करें, मूलाधार से लेकर सहस्रार तक सभी चक्रों में गुरु के ही बिम्ब का ध्यान करें, ज्ञान मुद्रा या तत्व मुद्रा में पांच मिनट शान्त चित्त बैठ कर अपने आपको गुरुमय बना लें और फिर नीचे लिखे मन्त्र का **'स्फटिक माला'** से नित्य ११ माला जप १० दिन तक करें, तो यह गुरु पादाम्बुज कल्प सिद्ध होता है, जिसका फल साधक को जीवन भर स्वतः मिलता रहता है ।

गुरु मन्त्र

।। ॐ परम तत्वाय नारायणाय गुरुभ्यो नमः ।।

वास्तव में गुरु साधना से शिष्य को वह शक्ति प्राप्त होती है कि जब भी चाहे शान्त भाव से बैठ कर अपने गुरु का ध्यान करता है तो गुरुदेव उसके भीतर समाहित हो कर आधार प्रदान करते हैं, उसके संकट में मार्ग बतलाते हैं, गुरु भक्ति की महिमा तो अपार है । ●

शक्तिमय गुरु साधना

गुरु साधना के तीन प्रकार हैं– मांत्रोक्त, तांत्रोक्त एवं शक्तिमय। प्रथम दो क्रम भली - भांति सम्पन्न कर लेने पर ही साधक या शिष्य इस तीसरे क्रम में प्रवेश पाने का अधिकारी होता है। पत्रिका के पिछले अंक में मांत्रोक्त एवं तांत्रोक्त गुरु साधना प्रकाशित की जा चुकी है और इसी क्रम में गुरु - शक्ति की साकार स्वरूपा ''श्री भुवनेश्वरी सपर्या'' के आधीन शक्तिमय गुरु साधना प्रकाशित की जा रही है। इन तीनों चरणों के पूर्ण होने के बाद ही शिष्य यथार्थ में ''साधक'' बनने की ओर अग्रसर हो पाता है जहां समस्त प्रकृति उसके समक्ष हाथ बांध कर खड़ी हो।

गुरु जीवन में न प्राप्त करने की वस्तु हैं न खोने की। न अर्जित करने की और न खर्च कर देने की। रोज - रोज की व्यापार बुद्धि हमारे ऊपर इतनी अधिक हावी हो चुकी है, हमारी आंखों में इतनी अधिक व्यवसायिकता उतर आई है कि हमने उन्हें भी एक व्यापारिक दृष्टि से देखने के प्रयास किए, लेकिन इससे जो सत्यता है उस पर कोई अन्तर नहीं पड़ता।

इन सामान्य चर्म चक्षुओं से तो हम अपने घर - परिवार और सगे सम्बन्धियों को ही नहीं पहचान सकते। हमारे प्रति उनके मन में क्या भावना है, कितना प्रेम है इसको ही नहीं आंका जा सकता, फिर एक विभूति को कैसे समझा जा सकता है? यद्यपि यह ईश्वर की हम पर असीम कृपा है, क्योंकि व्यक्ति इस जगत के छद्म और कपट व्यापार को यदि सही - सही जान ले तो उसका सारा हृदय ही घुट कर रह जाय कि **वह जिसे अपनी पत्नी कहता है, जिसे पुत्री कहता है, मां कहता है या भाई कह कर भाव - विभोर रहता है, वे सभी उससे कितनी अधिक दूरी पर खड़े हैं।** व्यक्ति इन सभी रहस्यों को कुछ तो न समझते हुए और कुछ जान-बूझ कर अनजान बनते हुए एक भूल - भुलैया में भटक कर चला जाता है। अपने सारे अस्तित्व को वो मुट्ठी राख में बदल जाता है और जीवन में जो ऊंचाई प्राप्त कर सकता था, जो अनोखा आनन्द खुद प्राप्त कर सकता था और दूसरों को भी आनन्दित कर सकता था, वह अस्तित्व वर्षों के पृष्ठ बदलने के साथ गुमनामी में चला जाता है।

इस सम्पूर्ण यात्रा में, उसके जन्म से लेकर मृत्यु तक और मृत्यु के उपरान्त अनन्त ब्रह्माण्ड में जाकर लाखों- करोड़ों आत्माओं के बीच में विलीन अस्तित्व को

सद्गुरु अपनी दृष्टि की सीमा में निरन्तर बांधे रखते हैं। उसके पुनर्जन्म की प्रतीक्षा करते रहते हैं और उचित समय आने पर कभी किसी घटना के माध्यम से, कभी किसी व्यक्ति के माध्यम से, कभी पत्रिका के माध्यम से, कभी किसी अन्य चैतन्य माध्यम से चेतना देकर जगाने का प्रयास करते हैं। अपने और उसके शाश्वत सम्बन्धों की याद दिलाना चाहते हैं, आघात देते हैं और स्नेह भी देते हैं लेकिन मनुष्य पुनः एक 'मैं' में खोया रहकर उसी स्थान पर चला जाता है, जहां तक पिछले जन्म में गया होता है। **जिस शरीर और सौन्दर्य का वह इतना भ्रम पाल कर रखे होता है वह तो मृत्यु के बाद उस मृत पशु से भी गया बीता होता है जिसकी चमड़ी से जूते बन जाते हैं। मनुष्य की तो चमड़ी तक मरने के बाद किसी काम नहीं आती।**

गुरु की तुलना वैद्य से की गयी है। सामान्य वैद्य दवा देने के बाद अपनी फीस लेकर अलग हो जाता है, मध्यम श्रेणी का वैद्य दवा देने के बाद भी यदा - कदा मिलने पर हालचाल पूछ लेता है, लेकिन उत्तम वैद्य रोगी के सीने पर चढ़कर उसको बिना कड़ी दवा पिलाए और स्वस्थ किए मानता ही नहीं। ठीक इसी प्रकार सामान्य गुरु, जिनकी आजकल बहुतायत दिखती है, वे कान में मंत्र फूंक कर देने के बाद अपनी दक्षिणा लेकर अलग हो जाते हैं। मध्यम श्रेणी के गुरु कभी - कभी शिष्य का हालचाल भी पूछ लेते हैं, लेकिन सद्गुरु अपने शिष्य के सीने पर चढ़कर उसे कड़वी दवा पिलाए बिना, उसे मुक्त किए बिना विश्राम लेते ही नहीं। जाहिर है ऐसा करने में शिष्य के अहं को भी चोट पहुंचेगी, उसे कष्ट और वेदना होगी लेकिन सद्गुरु जानते हैं कि यदि मैंने इस शिष्य ने अपने को छलावे में रखा और मैंने भी इसे आघात नहीं दिया तो इसका एक जन्म और व्यर्थ चला जाएगा।

और शिष्य को भी इसी आपा - धापी से भरे जीवन में एक क्षण रुकना ही होगा, सद्गुरु की उंगली पकड़ कर उस मार्ग पर चलना होगा जहां अपने आत्म को चैतन्यता मिल सके, तृप्ति मिल सके। शीतलता मिल सके और सुखद छांव भी मिल सके। ऊंचे पर्वतों की यात्रा करने पर प्रारम्भ में बहुत से रंग - बिरंगे फूलों की घाटियां मिलती है लेकिन ठेठ ऊंचाई पर जाकर अकेले देवदारु ही मिलते हैं। **घाटियों के फूलों के रंग लुभावने होते हैं, लेकिन उनमें छांव नहीं होती। छांव उसी देवदारु के नीचे मिलती है जो आठ हजार फिट से नीचे उगता ही नहीं। तभी उसे देवताओं का वृक्ष कहा गया है और ऊँचाई पर जाकर ही देवत्व के दर्शन व प्राप्ति सम्भव होती है।**

इसमें कर्तव्यों की उपेक्षा नहीं है और इस गुरु मार्ग में घर - परिवार से अलग हटकर एकान्त में धूनी भी नहीं रमाना है। वह तो एक दूसरे किस्म का छलावा हो जाएगा, लेकिन सहारा लेना है, जिससे अपनी अन्तश्चेतना को भी पूर्णता मिल सके। यह जीवन, अगला जीवन और उससे भी अगला जीवन निरन्तर एक अन्तश्चेतना की ही यात्रा है। ऐसी अन्तश्चेतना जो शुद्ध व निर्मल होकर ईश्वर से मिलने को आतुर है और इसी चेतना को कहीं **'आत्मा'** कहा गया है तो कहीं **'जीव'** और कहीं **'प्राण'**। लेकिन मूलरूप में यह एक अभिव्यक्ति ही है उसी विराट तेजपुंज की, जिसका बोध होता है **गुरु साधना के माध्यम से और व्यक्ति शनैः शनैः अपने अन्दर जाग्रत होते गुरुत्व का साक्षात् करता है। पूर्ण गुरुत्व से साक्षात्कार कर, उससे एकाकारिता प्राप्त कर सुख व सन्तोष का लाभ प्राप्त करने लगता है** और तब उसके सामने जीवन की घटनाएं चलचित्र की तरह घटने वाली मात्र हो जाती है, जिन्हें वह एक ओर खड़े - खड़े देखता रहता है। फिर व्यक्ति स्वयं **'कर्त्ता'** भी बन जाता है, अर्थात ऐसा क्षमता प्राप्त कर लेता है कि जीवन की स्थितियां उसकी इच्छानुसार ही बने और बिगड़ें और वह वास्तविक **'अकर्त्ता'** व उदासीन भी हो जाता है। क्योंकि कर्त्ता बनते ही, शक्तिमय होते ही उसमें यह समझ भी आ जाती है कि इन नित्य जगत - कार्यों और दैनिक प्रपन्चों से अलग हटकर वास्तविक शांति तो कहीं और है।

इसी से गुरु - मार्ग व गुरु - धर्म न तो संसार से अलग करता है न संसार में लिप्त करता है। बस व्यक्ति को आत्मबोध करा देता है। जिस मज्झिम्म पतिपदा अर्थात् मध्यम मार्ग का संकेत भगवान बुद्ध ने किया था, गुरु धर्म उसी मार्ग पर चलने का व्यवहारिक और साधनात्मक मार्ग प्रस्तुत करता है।

श्री गुरुदेव अपने स्वरूप में शिवमय भी है और शक्तिमय भी। इसी से पूर्ण हैं। वे दोनों के समन्वित स्वरूप ही हैं। गुरु - साधना की अनेक विधियां हैं। जहां गुरुदेव की शक्तिमयता और शिवमयता की समन्वित साधना होती है, वहीं वास्तव में पूर्णता निर्मित होती है। इस अंक में हम एक ऐसी ही साधना प्रस्तुत कर रहे हैं जो शिवमयता की और शक्तिमयता की सम्मिलित साधना है। गुरु - तंत्र में इसे **'मिथुन - चक्र साधना'** की संज्ञा से जाना गया है क्योंकि श्री गुरुदेव के विग्रह में शिव व शक्ति स्वरूप परस्पर इस प्रकार घुले - मिले है जिनका विभेद कर पाना अत्यन्त कठिन है और जिनकी यह संयुक्त साधना ही फलप्रद भी होती है।

यह वर्ष पूज्यपाद गुरुदेव की हीरक जयन्ती का वर्ष है और आशीर्वाद के स्वरूप में पूज्यपाद गुरुदेव ने इस वर्ष अपने प्रत्येक शिष्य को साधनात्मक रूप से पूर्णता दिलाने का वचन दिया है। व्यक्ति की अपने संस्कारों के अनुसार जिस साधना में रुचि हो जिसे वह करने के लिए स्वतन्त्र है लेकिन गुरु - साधना ही प्रत्येक साधना का मूल होती है, और इसी कारणवश इस जन्मोत्सव माह में ऐसी दुर्लभ साधना प्रकाशित की जा रही है जिसको सम्पन्न कर साधक पूरे वर्ष

ना के लिए आधार निर्मित कर सकता है। यदि २१ अप्रैल से पूर्व ही इस साधना को सम्पन्न कर लिया जाए तो व्यक्ति को २१ अप्रैल के महत्वपूर्ण दिवस पर पूज्य गुरुदेव द्वारा दी जाने वाली चैतन्य दीक्षाओं का सम्पूर्ण लाभ प्राप्त हो सकेगा, अन्यथा **इस वर्ष के गुरु जन्मदिन महोत्सव से लेकर अगले वर्ष के गुरु जन्मदिन महोत्सव के मध्य तो यह साधना सम्पन्न करना प्रत्येक शिष्य के लिए अनिवार्य है।**

किसी भी सोमवार अथवा शुक्रवार की रात्रि में दस बजे के पश्चात् वातावरण शांत हो तब निश्चित भाव से इस साधना में संलग्न हों। पूजन की सभी आवश्यक सामग्री पहले से ही साथ लेकर बैठे क्योंकि बीच में उठना साधना में विघ्न माना जाता है जिससे फल प्राप्ति में न्यूनता आती है। वस्त्र, आसन आदि शुद्ध श्वेत हो। अपने सामने एक चांदी या तांबे की बड़ी प्लेट रखें अथवा इनके अभाव में सफेद वस्त्र पर ही केसर से निम्न मिथुन - चक्र का निर्माण करें।

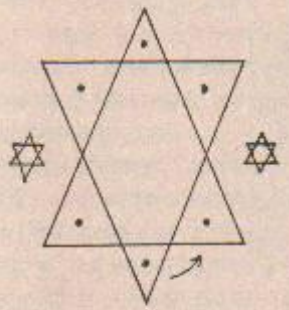

उपरोक्त मिथुन चक्र के अगल - बगल जहां दो अन्य लघु मिथुन चक्र चिन्हित किए गए हैं, वहां पूज्य गुरुदेव की **चरण पादुका** स्थापित करनी है। साधक के दाएं हाथ की ओर पूज्यपाद गुरुदेव की दांयी पादुका तथा वाम हस्त की ओर वाम पादुका स्थापित होनी चाहिए। अब इस मिथुन चक्र के मध्य में सफेद फूलों, श्वेत चन्दन व अक्षत से पूजन कर निम्नलिखित ध्यान का उच्चारण करें —

सहस्रारे महापद्मे किञ्जल्क - गण - शोभिते,
पद्म-राग-समाभासां रक्त - वस्त्र - सुशोभिताम्।
रक्त - कंकण - पाणिं च रक्त - नूपुर -शोभिताम्,
शरदिन्दु-प्रतीकाश-रक्तोद्भासित-कुण्डलाम्।
तरुणारुण-कल्पाभां करुणा - पूर्ण - लोचनाम्,
वराभय - करां शान्तां स्मरामि नव - गौरवीम्।
स्व-नाथ-वाम भागस्थां प्रफुल्ल - पद्म - पत्रालीम्,
प्रसन्न - वदनां लीन मध्यांध्याये शिवां गुरुम्।।

उपरोक्त ध्यान अत्यन्त महत्वपूर्ण है जिसमें गुरुदेव का शक्ति स्वरूप में (स्त्री रूप में) ध्यान किया गया है अर्थात् उनसे निरन्तर अभिन्न रहने वाली शक्ति का ही ध्यान किया गया है। इस ध्यान के उच्चारण के बाद श्वेत चन्दन व केसर की पंखुड़ियों से संक्षिप्त गुरु पादुका पूजन करें तथा निम्न गुरु पादुका मंत्र का ११ बार उच्चारण करें —

ॐ ऐं ह्रीं श्रीं ऐं क्लीं सौः हंसः
शिवः सोऽहं हंसः स्वरूप निरूपण
हेतवे श्री गुरुवे नमः।।

अब उपरोक्त मिथुन चक्र में सबसे नीचे के त्रिभुज में एक शक्तिचक्र चढ़ाते हुए तीर की दशा में अर्थात् बायीं ओर से दाहिनी ओर बढ़ते हुए क्रमशः प्रत्येक त्रिभुज में (त्रिभुज का स्थान मिथुन चक्र में बिन्दु से प्रदर्शित है) एक **शक्ति चक्र** चढ़ाते हुए निम्न प्रकार से क्रमशः उच्चारण करें —

ह्रीं गायत्री सहितं ब्रह्म - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं सावित्री सहितं विष्णु - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं सरस्वती सहितं रुद्र - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं लक्ष्मी सहितं धनपति - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं रति सहितं काम - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः
ह्रीं पुष्टि सहितं गणपति - श्री पादुकां
पूजयामि तर्पयामि नमः

इस षट्कोण पूजन के पश्चात् मिथुन चक्र के दोनों ओर स्थापित गुरु चरण पादुकाओं का संक्षिप्त पूजन कर दायीं ओर की पादुका पर एक श्वेत पुष्प निम्न मंत्र के साथ चढ़ायें —

ह्रीं वसुमति सहितं पद्मनिधि श्री
पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

इसी प्रकार बांयी ओर की पादुका पर भी निम्न मंत्र के द्वारा एक श्वेत पुष्प चढ़ायें —

ह्रीं वसुधारा सहितं शंखनिधि श्री
पादुकां पूजयामि तर्पयामि नमः

पूज्य गुरुदेव के शिव - शक्तिमय स्वरूप का संयुक्त पूजन पूर्ण हो जाने के पश्चात् **शुद्ध स्फटिक माला** से निम्न मूल मंत्र की एक माला मंत्र जप करें —

मंत्र -

ऐं ह्रीं स्वयम्भू लिंगमाश्रितायै
कामकलान्विते स्वाहा।।

मंत्र जप के उपरान्त सभी शक्ति चक्र सम्भाल कर एक डिब्बी में रख लें, जिससे वह शक्तियां घर में चिरस्थायी बनी रह सकें। विशेष अवसरों पर, गुरु पुष्य नक्षत्र के दिवस पर इस साधना को पुनः सम्पन्न कर लेना चाहिए। गुरु पादुकाओं को पूजा स्थान में स्थापित कर उनके समक्ष गुरु पादुका मंत्र का नित्य प्रातः ११ बार उच्चारण कर लेना सौभाग्यदायक माना गया है और व्यक्ति धीमे - धीमे अपने दैनिक जीवन में, मानसिक चिन्तन में, साधनाओं में आने वाले अनुकूल परिवर्तनों को स्वयं समझने लगता है जिससे अपूर्व मानसिक शांति की प्राप्ति होती है तथा गुरु साधना के सभी लाभ हस्तगत होने लगते हैं।

गुरु बिन ज्ञान कहां से पाऊं

शिष्य द्वारा गुरु पूजन, गुरु साधना, गुरु भक्ति की तांत्रिक साधना

जितना महत्वपूर्ण गुरु शब्द है, गुरु तत्व है, उतना ही महत्वपूर्ण शिष्य बनना भी है, शिष्य बनना, और बन कर उसे निभाना ठीक उसी प्रकार है, जैसे ऊफनती धारा में अपने आपको गुरु के भरोसे छोड़ देना, गुरु अर्चना किस प्रकार की जाय और गुरु भक्ति से कुण्डलिनी कैसे जागृत हो, एक विशेष योग "पातजंली योग" सूत्र से।

श्री सद्गुरु के सम्बन्ध में हजारों ग्रन्थ, हजारों व्याख्याएं दी गई हैं, कि गुरु तत्व क्या है, किस समय दीक्षा लेनी चाहिए, दीक्षा का स्वरुप क्या होना चाहिए, गुरु भक्ति का सार क्या है, लेकिन बहुत कम ग्रन्थों में किस प्रकार गुरु पूजन, गुरु भक्ति की जाय, का विवेचन आया है, गुरु भक्ति शिष्य के लिए प्रथम आधार है, जहां उसे ठोस सहारा, आत्म विश्वास प्राप्त होता है, इस सहारे को प्राप्त करने के पश्चात् उसे किसी अन्य की ओर देखने की आवश्यकता ही नहीं है, इस प्रकार गुरु भक्ति को, गुरु श्रद्धा को किसी भी तराजू में न तो तोला जा सकता है, और न ही मापा जा सकता है, क्योंकि इसका आधार पूर्ण समर्पण है।

गुरु तुम ही तुम

शिष्य अपनी प्रारम्भिक अवस्था में आशा-निराशा, शंका-कुशंका, चिन्ता-अचिन्ता, में डूबा गुरु के पास पहुंच जाता है, उस समय एक विशेष प्रक्रिया सम्पन्न होती है, यदि आत्मा से तत्काल यह भाव उठे, कि यही मेरे गुरुदेव हैं, तो समझ लो कि सब कुछ मिल गया, यह चुनाव शिष्य को केवल एक बार करना है, और उसके पश्चात् तो नैया की पतवार सद्गुरुदेव के पास सौंप देनी है, फिर नहीं सोचना है कि क्या होगा, और क्या नहीं होगा, मन की सारी शंकाएं बाहर निकाल कर केवल एक समर्पण भाव को ही मन के भीतर स्थापित कर लेना आवश्यक है।

यह स्थिति शिष्य की द्वितीय स्थिति है, क्योंकि शिष्य को तो वह मार्ग खोजना है जिससे वह अपने आपको पूर्ण रूप से पहिचान सके, अपने भीतर जो तत्व छिपा है, उसे उजागर कर सके, अपने भीतर प्रसन्नता का संचार प्रारम्भ कर सके, यदि शरीर में कोई फोड़ा या नासूर हो जाय, तो आप हाथ लगाने से ही डरते हैं, और डाक्टर को तो उसे चीरा लगाने की अनुमति दे देते हैं, और वह नासूर, वह फोड़ा ठीक भी हो जाता है, इसी प्रकार जीवन में यदि चिन्ता रूपी, कष्ट रूपी, दुःख रूपी, भय रूपी, नासूर हो गया है, तो चुपचाप अपने आपको श्री सद्गुरुदेव के प्रति समर्पित कर दो, अब आपकी जिम्मेवारी समाप्त हो जाती है, अब इस चिन्ता रूपी नासूर को चीरा लगाना है, अथवा कौन सी औषधि देनी है, इस पर विचार करना सद्गुरुदेव का काम है, सद्गुरुदेव को तो यह भी देखना है, कि यह विकार भीतर तक से समाप्त हो जाय, जिससे फिर कोई नया नासूर न बन पड़े।

काहि विधि करूं साधना

गुरु पूजन के सम्बन्ध में इतने अधिक प्रयोग अलग-अलग पुस्तकों में दिये गये हैं, कि साधक भ्रमित हो जाता है, कि वास्तविक रूप से किस प्रकार वह नियमित गुरु पूजन करे ? जिससे उसकी गुरु भक्ति साकार हो सके।

इस सम्बन्ध में पूज्य गुरुदेव ने जो विधि बताई और जिस विधि से वे स्वयं नित्य प्रति बाबा गुरु श्री सच्चिदानन्द जी महाराज की पूजा करते हैं, वह विधि पहली बार पत्रिका के माध्यम से पूज्य गुरुदेव के शिष्यों के हेतु स्पष्ट की जा रही है, इसके प्रत्येक शब्द को समझें और शुद्ध रीति से आचरण करें।

गुरु तत्व साधना कब ?

गुरु साधना करने का समय विशेष निश्चित नहीं है, यह तो नित्य-प्रति की पूजा साधना है, जिस प्रकार व्यक्ति नित्य प्रति भोजन करता है, उसी प्रकार इसे भी अपने जीवन की दिनचर्या का अंग बना लें, तभी उसे सार्थक गुरु भक्ति कहा जा सकता है।

गुरुवार का दिन गुरु तत्व साधना का प्रारम्भ करने का सबसे उत्तम दिन है, इसमें न तो विशेष आडम्बर चाहिए, न ही कोई लम्बा चौड़ा विधान, एक बात अवश्य है, कि अपने पूजा स्थान में एक स्थान ऐसा अवश्य बना लें, जिसमें गुरु पूजन से सम्बन्धित आवश्यक सामग्री हो, गुरु चित्र हो, और नियमित रूप से उसी स्थान पर बैठ कर ध्यान एवं पूजा करें, ऐसा नहीं हो कि बेड रूम में बैठे हैं, तो बेड रूम में गुरु पूजन कर लिया और ड्राईंग रूम में बैठे हैं, तो वहां गुरु पूजन कर लिया ! एक निश्चित स्थान अवश्य बना लें।

गुरु ही शिव है शिव ही गुरु है

गुरुवार के दिन प्रातः ब्रह्म मुहूर्त में साधक उठ कर स्नान कर शुद्ध वस्त्र धारण करें, अच्छी बातों का ध्यान कर, मन में प्रसन्नता के साथ पूजन प्रारम्भ करें, आलस्य, निद्रा, चित्त में बिल्कुल नहीं होनी चाहिए, ऐसा भाव होना चाहिए कि मानो एक दिव्य ज्योति को अपने भीतर समाहित कर रहे हैं, एक नवीन जीवन निर्माण की प्रक्रिया प्रारम्भ कर रहे हैं, जो साधक अपने आपको भुला कर साधना में संलग्न होते हैं, उन्हें ही परम गुरु तत्व

पूर्ण रूप से प्राप्त होता है, जीवात्मा, परमशिव और कुण्डलिनी का संयोग ही परमशिव रूप गुरुदेव है, इन तीनों में कोई भेद नहीं है।

आपने सामने नेत्रों से अमृत बरसाते हुए, प्रसन्न भाव वाले सद्गुरुदेव के चित्र को स्थापित करें, पूजा स्थान में शुद्ध घी का दीपक जलाएं, गुरु चित्र पर चन्दन तिलक लगायें, पुष्प माला चढ़ाएं, इसके पश्चात् अपने सामने ऐसे स्थान पर **गुरु तत्व यन्त्र** स्थापित करें जिसे बार-बार हटाना नहीं पड़े, और इस गुरु यन्त्र का पूजन करें।

सद्गुरुदेव ध्यान

स्वमूर्द्धनि सहस्रारपंकजासीनमव्ययम्। शुद्धस्फटिकसंकाशं शरच्चन्द्रनिभाननम्॥
प्रफुल्लेन्दीवराकार नेत्रद्वयविराजितम्। शुक्लाम्बरधरं शुक्लगन्धमाल्यानुलेपनम्॥
विभूषितं श्वेतमाल्यैर्वराभयकरद्वयम्। वामांगगतया शक्त्या सहितं स्वप्रकाशया॥
सुरक्तोत्पलधारिण्या ज्ञानैर्मुदितमानसम्। शिवेनैवं समुद्दीप्त ध्यायेत् परगुरुं श्रिया॥

"हे परम पूज्य गुरुदेव! अपने मस्तक के मध्य सहस्रदल कमल में जागृत कुण्डलिनी में स्थित अविनाशी, स्वच्छ स्फटिक मणि के समान कांति वाले, शरदकालीन चन्द्रमा के समान मुख वाले, विकसित कमल के समान सुन्दर नेत्र वाले, श्वेत गन्ध और श्वेत पुष्प की माला धारण करने वाले, श्वेत चन्दन धारण करने वाले, अपने दोनों हाथों में वर और अभय मुद्रा धारण करने वाले, अपने स्वतेज, स्वशक्ति से प्रकाशित, प्रसन्न चित्त वाले, सदाशिव स्वरूप मेरे आराध्य पूज्य गुरुदेव! मैं शिष्य आपका ध्यान करता हूं।"

जब शिष्य गुरुदेव का ध्यान करता है, तो उसे अपने नेत्र बन्द कर प्राणायाम की -मुद्रा अपनानी चाहिए, पालथी मार कर सीधा बैठे और अपने कुण्डलिनी तत्व को जागृत करने का ध्यान करें, इस ध्यान मुद्रा में, गुरु ध्यान में एक लहर उठती है, और इस लहर का प्रवाह मूलाधार चक्र, स्वाधिष्ठान चक्र, मणिपुर चक्र, अनाहत चक्र, विशुद्ध चक्र, आज्ञा चक्र से होता हुआ सहस्रार तक पहुंचता है; इस लहर का प्रवाह किस रूप में भी होता है, होने दें, सहस्रार ही पूज्य गुरुदेव का स्थान है।

अब अपने सामने स्थापित **'सहस्रार-मन्त्रों से अभिसिंचित, परम शिव तत्व से शोभित गुरु तत्व यन्त्र'** की पूजा प्रारम्भ करनी चाहिए, इस पूजा में गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, अक्षत के अतिरिक्त **छः सिद्ध तत्व चक्र** आवश्यक हैं।

पूजा क्रम

॥ लं पृथ्वीतत्वात्मकं गन्धं गुरुवे समर्पयामि नमः॥

दोनों हाथों की कनिष्ठिका और अंगुष्ठ की संयोगात्मक मुद्रा से गन्ध अर्पण करनी चाहिये।

॥ हं आकाशतत्वात्मकं पुष्पं गुरुवे समर्पयामि नमः॥

दोनों हाथों के अंगुष्ठ और तर्जनी की संयोगात्मक मुद्रा से गन्ध अर्पण करना चाहिये।

॥ यं वायुतत्वात्मकं धूपं गुरुवे समर्पयामि नमः ॥

दोनों हाथों के तर्जनी और अंगुष्ठ की संयोगात्मक मुद्रा से धूप अर्पण करना चाहिये।

॥ रं वह्नितत्वात्मकं दीपं गुरुवे समर्पयामि नमः ॥

दोनों हाथों के मध्यमा और अंगुष्ठ की संयोगात्मक मुद्रा से दीप अर्पण करना चाहिये।

॥ वं अमृततत्वात्मकं नैवेद्यं गुरुवे समर्पयामि नमः।

दोनों हाथों के अनामिका और अंगुष्ठ की संयोगात्मक मुद्रा से नैवेद्य अर्पण करना चाहिये।

अब अपने कुण्डलिनी के एक-एक चक्र का ध्यान करते हुए सांस ऊपर खींचें और एक-एक बार षः सिद्धितत्व चक्र, जो सामग्री में हैं, उन्हें गुरु यन्त्र के सामने रखते रहें।

अब प्राणायाम प्रक्रिया से गुरु पूजन प्रारम्भ होता है, अपनी दक्षिणानामिका से बांई तरफ का नासापुट दबा कर दक्षिण नासापुट से सोलह बार 'ॐ' मन्त्र का जप करते हुए गुरुदेव का ध्यान करें और श्वास ऊपर खींचे, ध्यान करें कि इस स्थिति में पूज्य गुरुदेव शिव स्वरूप में नाभि में स्थित हैं, फिर दायें अंगूठे से दायें नासापुट को दबा कर चौंसठ बार 'ॐ' मन्त्र का जप करते हुए हृदय में स्थित गुरुदेव का ध्यान करते हुए प्राणायाम करें।

फिर बांये नासापुट पर दक्षिण अनामिका को रखें और ३२ बार 'ॐ' मन्त्र का जप करते हुए मस्तक में स्थित गुरुदेव का ध्यान करते हुए सांस छोड़ें।

इस विशेष गुरु पूजन साधना में "सर्वसिद्धि स्वरूपिणि-गुरु रहस्य माला" आवश्यक है, अपने सामने गुरु रहस्य माला रखें और अक्षत, कुंकुम, चन्दन से इस माला का पूजन करें।

मन्त्र

क्लीं माले माले महामाले सर्वसिद्धिस्वरूपिणि।
चतुर्वर्गस्त्वयि नयस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॐ कामेश्वर्यै नमः ॥

अब इस माला से गुरु मन्त्र १०८ बार अथवा १००८ बार जप करें, साधक इस बात का ध्यान रखें कि दीक्षा के समय गुरुदेव के श्रीमुख से जो गुरु मन्त्र दिया गया है, उसी मन्त्र का जप करें, तथा अन्य साधक गुरु मन्त्र — "ॐ नारायणाय गुरुभ्यो नमः" जप करें, इसके पश्चात् माला को प्रणाम कर निम्न मन्त्र का उच्चारण कर अपने मस्तक पर रखें—

॥ ॐ त्वं माले सर्वदेवानां पूजिता शुभदा मता शुभं कुरुष्व मे भद्रे यशो वीर्यं च देहि मे ॥

(शेष भाग पृष्ठ संख्या २४ पर देखें)

कर उन्हें पूरे वर्ष नियमित रूप से पत्रिका भेजते रहेंगे, और इस प्रकार आप सर्वथा मुफ्त में ही यह महत्वपूर्ण दीक्षा उपहार स्वरूप पूज्य गुरुदेव से प्राप्त कर सकेंगे।

* निश्चित दिवस १७ सितम्बर ९१ को प्रातः ऊपर दी गई विधि के अनुसार पूजन कर कर्म सिद्धि दीक्षा यन्त्र धारण कर लें।

★ इस दीक्षा को प्राप्त करने वाला सौभाग्यशाली शिष्य अपने जीवन में उसी क्षण से एक परिवर्तन होता अनुभव करेगा, उसके कर्म और उसके भाग्य का संयोग शुद्ध रूप में, श्रेष्ठ रूप में होकर पूर्ण फल प्रदान करेगा।

आपके लिए दिव्य अवसर

जिसे हर हालत में सम्पन्न करना ही है

(पृष्ठ संख्या २० का शेष भाग)

इसके पश्चात् हाथ में जल ले, और यह संकल्प करते हुए, कि मैंने जो मन्त्र का जप किया है वह श्री गुरुदेव को समर्पित है, जल भूमि पर छोड़ दें।

गुरु पूजन का प्रधान स्वरूप समर्पण में है, ध्यान में है, इस पूजा का समापन भी गुरुदेव के ध्यान से होता है, गुरुदेव को नमस्कार करते हुए निम्न तीन मन्त्रों का, ग्यारह बार शान्त भाव से बोल कर उच्चारण करें—

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानांजनशलाकया चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरुवे नमः।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः।

"जो दृश्यमान है और अदृश्य है, वह सब गुरु स्वरूप ही है, व गुरु ही साक्षात ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा परब्रह्म है।"—ऐसा ध्यान करते हुए गुरुदेव को प्रणाम करें, और अपनी दिनचर्या प्रारम्भ करें।

जो साधक इस पूजन को नियमित रूप से सम्पन्न कर सकते हैं, वे ही शुद्ध सम्पूर्ण शिष्य है, प्रति गुरुवार को व प्रत्येक महत्वपूर्ण अवसर पर यह पूजन अवश्य सम्पन्न करें।

"सर्व सिद्धि स्वरूपिणि गुरु रहस्य माला" अपने पूजा स्थान में ही रखें, प्रतिदिन घर से बाहर निकलते समय गुरु ध्यान कर इस माला को अपने नेत्रों और मस्तक से अवश्य स्पर्श करायें।

जिस शिष्य ने अपना सब कुछ, अपना भाव सद्गुरुदेव को सौंप दिया, उसे तो किसी प्रकार की चिन्ता करने की आवश्यकता ही नहीं है। ●

गुरू पूर्णिमा के अवसर पर

गुरू रहस्य सिद्धि

एक बार मण्डन मिश्र ने भगवत पाद शंकराचार्य को पूछा कि जीवन में हजारों प्रकार की साधनाएं देखी गयी है, सैकड़ों देवी देवता इष्ट हो सकते है, और विभिन्न साधना विधियां आदि प्रचलित है, परन्तु इनमें से मूल साधना कौनसी है वह साधना कौनसी है, जिसके द्वारा सारी साधनाएं स्वतः सिद्ध हो जाय, वह कौनसी साधना है, जिससे जीवन में भोग और मोक्ष दोनों प्राप्त हो जाय और वह साधना रहस्य क्या है, जिसके सम्पन्न करने पर जीवन में किसी प्रकार का कोई अभाव न रहे।

शंकराचार्य ने दो क्षण मण्डन मिश्र को और देखा और बोले-यदि सत्य ही जानना चाहते- हो तो इस प्रकार की एक मात्र साधना गुरू सिद्धि साधना ही है। मनुष्य तो क्या, ऋषियो मुनियों और साधु सन्यासियों ने भी एक स्वर से स्वीकार किया है, कि गुरू साधना के द्वारा ही जीवन में पूर्णता पाई जा सकती है, यहां तक कि महर्षि वशिष्ठ और विश्वामित्र जैसे ऋषियों ने भी गुरू साधना को ही अपना आधार बनाया, युग पुरूष भगवान श्रीराम और सोलह कला पूर्ण श्री कृष्णचन्द्र ने भी गुरू साधना के द्वारा ही अभूतपूर्व सिद्धियां प्राप्त की।

ब्रह्मोपनिषद में तो स्पष्ट रूप से बताया गया है कि भगवान शिव ने स्वयं गुरू साधना के महत्व को स्वीकार किया, और परब्रह्म को ही गुरू मानकर उसकी साधना सम्पन्न की। स्वयं विष्णु ने भी इसी पद्धति को अपनाया इससे यह स्पष्ट है कि जीवन का आधार "गुरू" है। हम भले ही अपनी बुद्धि के तर्क में उलझ जांय, हम भले ही आत्म रूप को नहीं पहिचाने, परन्तु जब तक हम गुरू साधना को पूर्णता के साथ सम्पन्न नहीं कर लेते तब तक जीवन में श्रेष्ठता, सफलता, और पूर्णता संभव नहीं हो पाती।

आगे आचार्यों में गुरू गोरखनाथ अत्यन्त श्रेष्ठ योगी हुए, उन्होंने भी गुरू को ही जीवन का आधार बनाया और गुरू साधना के द्वारा जीवन में अद्वितीय सिद्धियां प्राप्त की। कबीर का तो पूरा साहित्य ही गुरू साधना से भरा हुआ है, गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरित मानस का प्रारम्भ करते हुए गुरू की साधना कर उन्हें भक्ति भाव से प्रणाम कर इस अद्वितीय ग्रन्थ की रचना प्रारंभ की, जिससे कि यह रचना अद्वितीय और कालजयी बन सके।

आज के युग में भी यदि पूर्णता तक पहुंचना है, यदि कुण्डलिनी चक्र जागृत करने है, यदि अपने आध्यात्मिक पक्ष को पूर्णता देनी है, यदि जीवन में पूर्ण भौतिक सुख उपलब्ध करने है, और यदि विविध प्रकार की साधनाओं में सिद्धियां प्राप्त करनी है, तो इसका एक मात्र साधन गुरू साधना ही है, और इस साधना के द्वारा ही जीवन में सफलता पूर्णता पाई जा सकती है।

यो तो मेरे जीवन में कई साधनाओं का समावेश हुआ है, परन्तु मैंने अपने जीवन में गुरू साधना को ही महत्व दिया है, आज जो मैं साधनाओं के क्षेत्र में सफल माना जाता हूं जो विभिन्न प्रकार की सिद्धियां मैंने प्राप्त की है, इन सब का आधार गुरू साधना ही है, और

मैं समझता हूं कि यदि साधक थोड़ा सा भी विवेकवान है, तो वह अपने जीवन में गुरु साधना को अवश्य ही महत्व देगा।

गोपनीय प्रयोग

मेरे पिताजी ने मेरे जन्म लेने के बाद सन्यास ले लिया था, और सन्यास के क्षेत्र में उन्होंने पूर्णता और सफलता प्राप्त की। एक बार जब वे साठ वर्ष से भी ज्यादा आयु के हो गये थे तब मेरी भेंट उनसे केदारनाथ के पास हुई थी, और मैंने उनसे निवेदन किया था, कि आप मेरे पिता है, मुझे जीवन की कोई ऐसी साधना दीजिए जिससे कि मैं गृहस्थ जीवन में रहते हुए, उस साधना को सम्पन्न कर सकूं और सभी प्रकार से भौतिक आध्यात्मिक सफलता अर्जित कर सकूं।

आप तो साधनाओं और सिद्धियों के भण्डार है, और पूरे हिमालय में आपका नाम है। मैं तो अपने जीवन में केवल एक ही साधना करना चाहता हूं, जो कि सरल हो, मेरे अनुकूल हो और जिसे एक बार करने पर ही सफलता मिल जाय, तब उन्होंने अत्यन्त वात्सल्य भाव से मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए, अत्यन्त गोपनीय और दुर्लभ "गुरु रहस्य सिद्धि साधना" प्रयोग समझाया था, फिर घर आ कर मैंने उसे सिद्ध किया और वास्तव में ही उस दिन से जिस प्रकार से आर्थिक उन्नति हुई है, वह चमत्कार ही है। उस दिन से जिस प्रकार से मुझे विविध अनुभव और सिद्धियां प्राप्त हुई है, वे मेरे लिए अलौकिक है, कभी कभी तो मैं स्वतः प्रवचन करने लग जाता हूं, और किसी भी विषय पर घण्टे दो घण्टे धारावाहिक रूप से बोलने लग जाता हूं। मेरे ज्ञान को, मेरे भाषण को और मेरे सम्मोहक व्यक्तित्व को देख कर मेरे परिचित और दूर दूर के लोग चमत्कृत हो उठते है, पर मैं यह समझता हूं कि इसका आधार 'गुरु रहस्य सिद्धि साधना" ही है, जिस साधना को मेरे पिताजी ने कृपापूर्वक मुझे दी थी।

साधना रहस्य

इस साधना को किसी भी गुरुवार, पुष्य नक्षत्र (इस वर्ष के पुष्य नक्षत्रों की सूची अप्रेल के अंक में दी गई है) अथवा गुरु पूर्णिमा (१८-७-८९) को सम्पन्न की जा सकती है, जब भी मन में गुरु के प्रति श्रद्धा का भाव हो, जब भी मन में उच्चकोटि की साधना सम्पन्न करने की इच्छा हो, तब इस साधना को सम्पन्न कर लेना चाहिए, इस साधना को पुरुष या स्त्री कोई भी सम्पन्न कर सकता है।

साधक प्रातः काल उठ कर स्नान कर स्वच्छ धुली हुई पीली धोती धारण करे, और कन्धे पर भी पीली धोती ही पहने। फिर अपने सामने पूजन सामग्री रख ले, जिसमें जल पात्र, कुंकुम, केसर, शुद्ध घृत का दीपक, अगरबत्ती, नारियल, दूध का बना हुआ प्रसाद, और श्रेष्ठ सुन्दर आकर्षक गुरु चित्र हो, इसके साथ ही साथ स्फटिक माला भी अपने साथ रखनी चाहिए, इसका उपयोग इस साधना में किया जाता है।

इसके बाद सामने थाली में निम्न प्रकार से परम गोपनीय और दुर्लभ गुरु यंत्र का अंकन कुंकुम या केसर से करे।

गुरु यंत्र

गु

	य	प	रा	त
नमः	या	ॐ	र	णा	रू
	ना	त्वा	य	म

भ्यो

फिर इस यंत्र पर अत्यन्त तेजस्वी और भगवान शिव मंत्र युक्त "गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र स्थापित" कर दें। यह यंत्र संसार का सर्वाधिक तेजस्वी और दुर्लभ यंत्र माना गया है। इस यंत्र को पूज्य गुरुदेव से प्राप्त कर लेना चाहिए।

इस यंत्र को थाली में स्थापित कर सामने दीपक लगाना चाहिए, और फिर इस यंत्र की संक्षिप्त पूजा कर,

नैवेद्य चढ़ा कर भक्ति भाव से प्रणाम करे, कि मुझे गुरु रहस्य सिद्धि प्राप्त हो, मैं जीवन में भोग और मोक्ष दोनों की कामना रखता हूं, मेरी इच्छा है कि आप अपने पूर्ण ब्रह्म स्वरूप में मेरे सामने उपस्थित हों, और मेरे हृदय में स्थापित हों जिससे कि आप में निहित सारा ज्ञान और सारी सिद्धियां मुझे स्वतः प्राप्त हो सके और मैं सिद्धि पुरुष बन कर जीवन में लोगों का सभी दृष्टियों से पूर्ण कल्याण कर सकूं।

इसके बाद स्फटिक माला से निम्न परम गोपनीय ब्रह्मोपनिषद में वर्णित इस गुरु मंत्र की २१ माला मंत्र जप करे। मन्त्र जप पूरा होने के बाद उस स्फटिक माला को अपने गले में धारण कर ले, ऐसा करते ही साधक को एक अलौकिक सा प्रकाश अनुभव होगा, और ऐसा लगेगा कि जैसे सम्पूर्ण ज्ञान स्वरूप गुरुदेव स्वयं उसके हृदय में स्थापित हो गये है।

ब्रह्मोपनिषद वर्णित गुरु मन्त्र

ॐ ह्रीं श्रीं ऐं श्रीं हुं ह्रीं श्रीं परम क्लीं क्लीं ह्रीं तत्वाय श्रीं स्त्रीं श्रूं श्रैं नारायणाय हुं हुं ह्रीं गुरुभ्यो श्रीं नमः॥

यह मन्त्र परम गोपनीय है, अतः बिना गुरु की आज्ञा के सामान्य व्यक्ति को यह मंत्र नहीं दिया जाना चाहिए। साधना समाप्ति के बाद किसी ब्राह्मण को या कुंवारी कन्या को भोजन करा दे और उसे यथोचित भेंट दक्षिणा आदि दे कर साधना सम्पन्न करे। मंत्र जप के बाद पूर्ण श्रद्धा से गुरु आरती सम्पन्न करे।

ब्रह्मोपनिषद युक्त गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र

इसके लिए आपको धनराशि भेजने की जरूरत नहीं है, केवल एक पत्रिका सदस्य बनाने पर यह परम दुर्लभ यन्त्र आपको सर्वथा मुफ्त में प्राप्त हो सकेगा, इसके लिए आप नीचे दिया हुआ प्रपत्र किसी कागज पर उतार कर भर कर हमें भेज दे, जिससे कि समय पर आपको यह अद्वितीय चैतन्य गुरु रहस्य सिद्धि यंत्र सुविधापूर्वक प्राप्त हो सके।

गुरु रहस्य सिद्धि यन्त्र—प्रपत्र

मैं पत्रिका सदस्य हूं, अतः इस दुर्लभ और महत्वपूर्ण यंत्र को प्राप्त करने का अधिकारी हूं। आप १०५) रू. की वी. पी. से उपरोक्त दुर्लभ गोपनीय यंत्र मुझे वी.पी. से भिजवा दे, मैं पोस्टमेन को धनराशि दे कर यह यंत्र छुड़ा लूंगा, वी. पी. छूटने पर मेरे निम्न मित्र को पत्रिका का एक वर्ष का सदस्य बना दे, और उसे नियमित रूप से पत्रिका भेजते रहे—

मेरी पत्रिका सदस्यता संख्या ………… ……

मेरा नाम ……………………………………

मेरा पूरा पता ……………………………………

……………………………………

मेरे उपरोक्त पते पर आप इस यंत्र को भिजवा दें मैं वी.पी. छुड़ा लूंगा, और वी.पी. छूटने पर आप मेरे निम्न मित्र को इस वर्ष का पत्रिका सदस्य बना दे।

मेरे मित्र का नाम ……………………………………

मेरे मित्र का पूरा पता ……………………………………

……………………………………

आप यदि किसी कारणवश गुरुपूर्णिमा के अवसर पर पूज्य गुरुदेव के समीप नहीं पहुंच पा रहे हैं, तो फिर इस साधना से तो चूकिए मत . . .

गुरु हृदयस्थ धारणा साधना

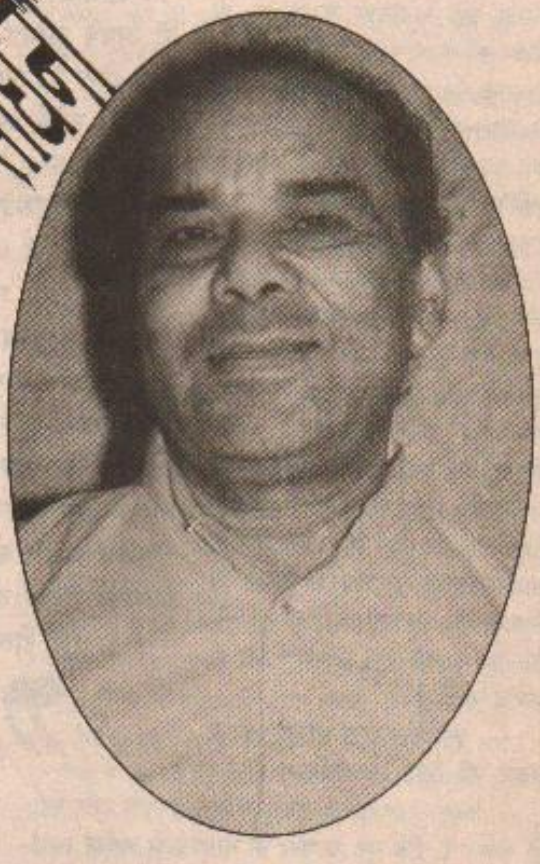

जो बृहस्पति तंत्र से पहली बार साकार रूप ले रहा है लेख की दृष्टि से इन पन्नों पर आपके लिए

प्रत्येक शिष्य एवं साधक की यही हार्दिक इच्छा होती है, कि वह अपने जीवन में कम से कम एक बार पूर्णता के साथ गुरु साधना अवश्य करे। यद्यपि साधक के पूर्वजन्मकृत संस्कार उसे किसी देवी या देवता के प्रति भी आकृष्ट करते ही रहते हैं। इसी को साधना जगत में 'इष्ट' की संज्ञा दी गई है और इसी पूर्वजन्मकृत संस्कार के फलस्वरूप ही कोई साधक शिवभक्त होता है, तो कोई कृष्ण भक्त, किसी को देवी साधना में आन्तरिक तृप्ति मिलती है, तो किसी को गणपति साधना ही सारभूत साधना प्रतीत होती है।

अनेक मतमतान्तरों से भरे हिन्दू धर्म में सबको ही समुचित सम्मान दिया गया है और जब साधक वास्तव में ही अपने इष्ट से तादात्म्य स्थापित करने की स्थिति में आ जाता है, तभी वह समझ जाता है, कि वस्तुतः भेद तो कहीं है ही नहीं। इस स्थिति तक पहुंचने के पहले सबको एक ही मानना अथवा कहना मिथ्या प्रलाप से अधिक कुछ है नहीं।

केवल ऐसा साधक ही इष्ट को अपने गुरु में साक्षात अनुभव कर सकता है।

इसी कारणवश गुरु साधना केवल एक प्राथमिक साधक के ही जीवन की आवश्यकता नहीं, वरन उच्च स्तर तक पहुंच गए साधक की भी प्रथम आवश्यकता है। प्राथमिक साधक गुरु का अवलम्बन इस कारण से लेता है, क्योंकि उसे अपने इष्ट तक पहुंचने का उपाय प्राप्त करना होता है और उच्च स्तर पर पहुंच गया साधक इसे (गुरु साधना को) इस कारणवश सम्पन्न करना चाहता है, क्योंकि गुरु साधना का तात्पर्य केवल गुरु की भक्ति ही न होकर जीवन के उन आयामों को प्राप्त करना होता है, जो कि केवल साधना के द्वारा ही प्राप्त किये जा सकते हैं। गुरु की आत्मा एवं प्राण साधना में ही निवास करती है और साधक किसी भी रूप में किसी भी साधना का अवलम्बन क्यों न ले, वास्तव में उसे गुरु साहचर्य की ही प्राप्ति होती है।

इसके उपरान्त भी गुरु साधना करने की फिर आवश्यकता ही क्या है?

इसका कदाचित सबसे अधिक उपयुक्त उत्तर यही हो सकता है, **कि गुरु साधना के माध्यम से व्यक्ति स्वयं ही अपने अन्दर गुरुत्व धारण करने की वह क्रिया करता है, जिसके द्वारा वह कालान्तर में किसी भी सिद्धि अथवा लक्ष्य तक पहुंच सकता है।**

गुरु साधना का अर्थ गुरुदेव को प्रसन्न करना भी नहीं होता, क्योंकि वे तो अपने 'सदाशिव' स्वरूप में सदैव प्रसन्न रहते ही हैं। शिष्य के कल्याणार्थ वे उसके विषों का सहर्ष पान करते ही रहते हैं, किन्तु जब वे अनुभव करते हैं, कि उनके शिष्य ने स्वयं को 'साधित' करने की अपेक्षा उनकी भक्ति ही प्रारभ कर दी है, तो उन्हें क्लेश अवश्य होता है, क्योंकि गुरु से यह सूक्ष्म भेद नहीं छुप सकता, कि उनका कौन सा शिष्य, किस भावना के वशीभूत होकर, उनसे क्या निवेदन कर रहा है!

"जो साधक गुरु साधना को ही अपने जीवन का आधार बना लेते हैं, उनके सौभाग्य की तो कोई उपमा ही नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसे साधक पर गुरुदेव की सीधी दृष्टि होती है और जब वे स्वयं अनुभव कर लेते हैं, कि मेरे इस विशेष साधक का लक्ष्य केवल आत्मोन्नति के माध्यम से जन सामान्य के लिए हितकारी बनना है, तो वे ऐसी अनेक विभूतियां स्वयं प्रदान कर देते हैं, जिनका शिष्य को ज्ञान तक नहीं होता है।"

इसी कारणवश आदर्श साधक तो वही है, जो प्रत्येक स्थिति में साधना का अवलम्बन लिए ही रहे। नित-नूतन पद्धतियों का ज्ञान प्राप्त करता ही रहे। केवल साष्टांग रूप से गुरुदेव के समक्ष बिछ जाना ही समर्पण नहीं होता, वरन उनके मानस से तादात्म्य स्थापित करने का प्रयत्न करते हुए उसी अनुरूप कार्य करने की चेष्टा करना भी 'समर्पण' होता है और गुरुदेव इसी समर्पण को अधिक प्रसन्नता से स्वीकार करते हैं।

हमारी पात्रता ऐसी नहीं है, कि हम गुरुदेव के विचारों को उनके ही अनुरूप समझ सकें; क्योंकि विविध वासनाएं एवं संस्कार हमें विचलित करते ही रहते हैं; इस दशा में साधना ही वह मार्ग शेष रह जाता है, जो मार्ग के ऐसे संस्कार रूपी कंकड़ों को हटा सके और साधक अधिक तीव्रता से अपने लक्ष्य तक जा सके — 'गुरु सेवा' करते हुए।

'गुरु सेवा' साधना का सर्वोच्च स्वरूप अवश्य है, किन्तु यह ध्यान में रखना आवश्यक है, कि केवल वही व्यक्ति गुरु सेवा कर सकता है, जो 'शिष्यता' से युक्त हो, क्योंकि वही गुरु की इच्छा को समझने की (भले ही कुछ अंशों में) पात्रता रखता है। केवल कार्यरत हो जाना ही गुरु सेवा नहीं होती, वरन ऐसी 'सेवा' तो कालान्तर में कई विरोधाभासों को ही जन्म दे देती है। अतः जिन साधकों के मन-मस्तिष्क में यह भ्रम हो, कि वे मात्र गुरुदेव के समीप होने से अथवा कार्यरत रहने से ही साधनात्मक जीवन की उच्चता में प्रवेश कर गए हैं, उन्हें अपने आपमें संशोधन कर ही लेना चाहिए। 'गुरु' से अधिक महत्ता 'गुरुतत्त्व' की मानी गई है तथा गुरुतत्त्व को समुचित आदर न देना मूढ़ता का लक्षण माना गया है—

व्रतं दानं जपस्तीर्थं व्रतं धर्मपरं च यत्।
गुरु तत्त्वमविज्ञाय मूढास्तेऽन्यपरा जनाः।।

– (गुरु गीता)

अर्थात् – 'मूढ़ लोग ही गुरुतत्व को न जानकर यज्ञ, दान, तपस्या, तीर्थ, व्रत एवं अन्य धर्मों का आश्रय लेते हैं' (उनका पलायन करते हैं)।

वस्तुतः गुरुदेव तो किसी भक्ति को प्रश्रय देते ही नहीं हैं, किन्तु यह हमारे देश की विशेषता रही, कि जब-जब उसने किसी आचरण को ग्रहण करने में कठिनाई अनुभव की, तब-तब बड़ी सूक्ष्मता से उस आदर्श या आचरण की वन्दना ही प्रारम्भ कर दी। साधक को इस दुर्गुण से सावधान रहना चाहिए और केवल आत्मोन्नति की दृष्टि से ही नहीं, वरन गुरुदेव की प्रियता प्राप्त करने की दृष्टि से भी साधना का अवलम्बन निरन्तर ग्रहण किये रहना चाहिए।

गुरु साधना के माध्यम से साधक के 'भंडार' इस प्रकार भरते चले जाते हैं, कि उसे अनुभव भी नहीं होता और जब वह किसी वस्तु की कामना करता है, तो पीछे मुड़कर देखने पर आश्चर्यचकित रह जाता है, कि उसके पास तो भंडार के भंडार भरे पड़े हैं। यद्यपि गुरु साधना का प्रथम पुष्प तो विरक्ति, पीड़ा, तनाव होता ही है . . .

पूज्यपाद गुरुदेव के सहस्रों शिष्यों में से ऐसे अनेक शिष्य हैं, जो अपनी क्षमता भर प्रयास करते ही रहते हैं, कि वे किस प्रकार से पूज्यपाद गुरुदेव की संतुष्टि का हेतु बन सकें, उन्हें प्रसन्न कर सकें, उनके तनाव के क्षणों में कुछ कमी ला सकें।

यह लेख एवं साधना ऐसे ही श्रेष्ठतम शिष्यों को समर्पित है, जो यह समझ सके हैं, कि वे गुरु की सेवा तभी कर सकेंगे, जब वे स्वयं किसी 'गुरुत्व' से आपूरित होंगे।

गुरु साधना केवल कुछ मंत्र जप कर लेने की क्रिया ही नहीं होती, वरन अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को बदलने की क्रिया होती है। अपने दुश्चिन्तनों, कुसंस्कारों को पहचानते हुए, निरन्तर उनसे संघर्ष करते हुए अपने आपको एक नवीन व्यक्तित्व में परिवर्तित करने की क्रिया ही यथार्थतः 'गुरु साधना' है।

मंत्र विशेष इसी कार्य में सहयोग देते हैं। साधना विशेष इसी आंतरिक भावना को त्वरा देने के साथ ही साथ उन उपायों को भी सुलभ करती है, जिससे साधक अल्प समय में ही अपने लक्ष्य तक पहुंच सके।

जो साधक गुरु साधना को ही अपने जीवन का आधार बना लेते हैं, उनके सौभाग्य की तो कोई उपमा ही नहीं दी जा सकती, क्योंकि ऐसे साधक पर गुरुदेव की सीधी दृष्टि होती है और जब वे स्वयं अनुभव कर लेते हैं, कि मेरे इस विशेष साधक का लक्ष्य केवल आत्मोन्नति के माध्यम से जन सामान्य के लिए हितकारी बनना है, तो वे ऐसी अनेक विभूतियां स्वयं प्रदान कर देते हैं, जिनका शिष्य को ज्ञान तक नहीं होता है।

साधना जगत के विषय में हमारा ज्ञान है ही कितना?

हम तो कुछ सिद्धियों एवं धन आदि को ही साधना का फल मानकर बैठे हैं, जबकि साधना के तो इतने अधिक आयाम हैं, जिनकी सामान्यतः कल्पना भी नहीं की जा सकती है। एक सम्पूर्ण योगी ही सम्पूर्ण रूप से ऐश्वर्याधिपति हो सकता है और वही भगवान शिव की भांति सर्वथा निर्लिप्त रह सकता है। जिस प्रकार भगवान शिव कुबेर के भी स्वामी होते हुए केवल बाघाम्बर एवं राख लपेटे रहते हैं, ठीक वही क्रिया किसी श्रेष्ठ साधक की भी होती है। जिसका भंडार भरा होता है वह प्रदर्शन नहीं करता और जिसके पास एक ही आभूषण होता है, वही उसे घुमा-फिरा कर दिखाने का उपक्रम करता रहता है।

गुरु साधना की भी यही सार्थकता है।

गुरु साधना के माध्यम से साधक के 'भंडार' इस प्रकार भरते चले जाते हैं, कि उसे अनुभव भी नहीं होता और जब वह किसी वस्तु की कामना करता है, तो पीछे मुड़कर देखने पर आश्चर्यचकित रह जाता है, कि उसके पास तो भंडार के भंडार भरे पड़े हैं। यद्यपि गुरु साधना का प्रथम पुष्प तो विरक्ति, पीड़ा, तनाव होता ही है . . .

— और इस तथ्य को छुपाया भी नहीं जाना चाहिए, क्योंकि जो साधक गुरु साधना में प्रवेश करने की इच्छा रखे, उसे यह बात स्पष्ट होनी ही चाहिए।

गुरु साधना में प्रवेश करने का अर्थ है — 'प्रेम के घर में प्रवेश कर जाना' और कबीरदास के ही शब्दों में इसके लिए तो बहुत कुछ त्यागने की मनोवृत्ति एवं साहस होना आवश्यक ही होता है—

कबीरा यह घर प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुई धरे, सो पैठे घर माहिं।।

अपने लक्ष्य को अपने मन में स्पष्ट रखना 'लिप्सा' नहीं होती, क्योंकि प्रत्येक साधक किसी न किसी 'प्राप्ति' के लिए ही तो गुरु-अवलम्बन ग्रहण करता है, किन्तु जहां वह कुछ मंत्र जप करके यह आशा करने लगता है, कि शीघ्र ही सभी सिद्धियां और वैभव उसकी झोली में स्वतः आकर गिर जायेंगी, वहां वह निस्पृह नहीं अपितु स्पृहायुक्त है और ऐसे साधक को कम से कम गुरु साधना में कोई स्थान नहीं मिल सकता।

गुरु साधना तो एक प्रकार से आत्मीयता प्रगाढ़ करने की क्रिया है। शिष्य मानसिक रूप से जितना अधिक दृढ़ चिंतन युक्त होता जाता है, गुरुदेव के आदर्शों एवं लक्ष्यों की पूर्ति हेतु स्वयं को सक्षम बनाने में सफल होता जाता है, उतनी ही तीव्रता से गुरुदेव स्वयं उसके जीवन के अन्य पक्षों को सफल बनाने की क्रिया को सम्पन्न करते जाते हैं।

दुर्भाग्य से हमने साधना का अर्थ केवल 'सिद्ध' करना और उस 'सिद्धि' का मनमाना उपयोग करना ही समझ लिया है, किन्तु गुरु तो गुरु होते हैं। वे 'सिद्ध' हो ही नहीं सकते, यद्यपि 'रीझ' अवश्य सकते हैं। उनको 'रिझा' लेना ही इस साधना की सर्वोच्च उपलब्धि है।

गुरु साधना तो मुख्य रूप से एक आन्तरिक तालमेल को सम्पन्न करने की ही क्रिया है, नित्य आत्मविवेचन कर स्वयं को सन्नद्ध एवं सबल करने की युक्ति है और जिसे हम साधना कहते हैं, वह वास्तव में इन सभी बातों को पुष्ट करने का एक प्रकार ही होती है। केवल आन्तरिक चिन्तन से ही गुरु साधना में सफलता नहीं पाई जा सकती, न ही केवल मंत्र जप के माध्यम से गुरु साधना में सफलता पाई जा सकती है।

इसी मूल रहस्य को ध्यान में रख कर पत्रिका में समय-समय पर गुरु साधना की अनेक विधियां प्रकाशित की जाती रही हैं। 'मांत्रोक्त गुरु साधना', 'तांत्रोक्त गुरु साधना', 'शक्तियुक्त गुरु साधना' आदि इसी क्रम में आने वाली कुछ दुर्लभ पद्धतियां हैं।

'मांत्रोक्त पद्धति' जहां साधना मार्ग में प्रवेश करने वाले साधकों के लिए उपयुक्त विधि है, वहीं 'तांत्रोक्त पद्धति' उन साधकों के लिए अनुकूल है, जो साधना मार्ग में कुछ आगे बढ़ गए हैं। दस महाविद्या साधनाओं में प्रवेश करने के इच्छुक साधकों हेतु सर्वाधिक उपयुक्त पद्धति — 'शक्तियुक्त गुरु साधना' होती है।

इसके उपरांत भी गुरु साधना की इतिश्री नहीं हो जाती, अपितु अनेक आयाम शेष रह जाते हैं, जो न केवल प्राथमिक स्तर के साधक के लिए वरन उच्च स्तर के साधकों के लिए भी महत्वपूर्ण होते हैं। जिस प्रकार एक वायुयान, वह भले ही कितनी ही ऊंचाई तक उड़ने में सक्षम क्यों न हो, उसे पुनः-पुनः धरती पर आकर ईंधन प्राप्त करना ही होता है, ठीक उसी प्रकार साधनाओं के माध्यम से 'ईंधन' प्राप्त करते ही रहना पड़ता है, जिससे चित्त उन्मुक्त होकर उस आकाश में विचरण कर सके जिसे आनन्द का आकाश कहा जाता है।

प्रस्तुत साधना, इसी श्रेणी की साधना है तथा इसे विशिष्ट साधकों के मध्य **'गुरु हृदयस्थ वशीकरण साधना'** से जाना जाता है। इस साधना पद्धति में गुरु की उपासना केवल बीज रूप में की जाती है, अर्थात् उन्हें भौतिक स्वरूप में न मानकर एक पुञ्ज के रूप में देखा जाता है और उनसे सम्बन्धित स्वरूप वही होता है, जो कि उस बीज मंत्र विशेष का होता है।

बीज मंत्र केवल अक्षर नहीं होते वरन सम्पूर्ण स्वरूप ही होते हैं तथा साधक साधना के मध्य, अपनी पात्रता के अनुसार किसी क्रम पर इनका वास्तविक साक्षात भी कर लेता है। वस्तुतः बीज मंत्र का यही 'साक्षात' ही उससे सम्बन्धित देवी-देवता का वास्तविक स्वरूप होता है। गुरुदेव भी 'देव स्वरूप' ही तो हैं, अतः यह स्वाभाविक ही है, कि उनका भी मूल स्वरूप किसी बीज मंत्र के माध्यम से स्पष्ट हो।

प्रस्तुत साधना गुरु साधना के क्रम में एक अत्यन्त तीव्र एवं विस्फोटक प्रभाव की साधना है, जिसे केवल गुरु पूर्णिमा अथवा किसी गुरु पुष्य को ही सम्पन्न किया जा सकता है।

इस विलक्षण साधना को पूर्णता से सम्पन्न करने के लिए

कुछ नियमों का दृढ़ता से पालन करना आवश्यक ही होता है।

इस साधना को सम्पन्न करने के इच्छुक साधक को चाहिए, कि वह साधना के निश्चित दिवस से लगभग तीन दिन पहले से ही यथासंभव मौन व्रत का आश्रय ले ले, केवल अत्यन्त आवश्यकता होने पर ही वार्तालाप करे, ब्रह्मचर्य का कठोरता से पालन करे, भूमि शयन करे तथा यथासंभव एक ही समय अन्न ग्रहण करता हुआ निरन्तर तीन दिनों तक प्रतिदिन कम से कम चार माला गुरु मंत्र तो जप कर ही ले।

योग्य साधक पन्द्रह दिन की अवधि निर्धारित कर सवा लाख मंत्र जप का एक पुरश्चरण करके अपने आपको इस साधना हेतु सक्षम बनाते हैं।

साधना विधान

- नियत दिवस **गुरु पूर्णिमा** (30/7/96) पर साधक ब्रह्म मुहूर्त में उठें अथवा रात्रि के दूसरे प्रहर में इस साधना को सम्पन्न करें।
- इस साधना हेतु उसके पास ताम्रपत्र पर अंकित **'गुरु बीज यंत्र'** होना अति आवश्यक है, जो इस साधना का सर्वस्व है। इसके अतिरिक्त उसके पास चार **'लघु नारियल'** एवं एक **'कमल गट्टे की माला'** होनी भी शास्त्रोचित मानी गई है।
- साधक या तो श्वेत वस्त्र, आसन आदि का प्रयोग करें या गहरे लाल रंग के। गुरु पीताम्बर अवश्य ओढ़ें।
- दिशा उत्तर ही उचित मानी गई है।
- सर्वप्रथम यंत्र का पंचोपचार (गंध, पुष्प, धूप, दीप एवं नैवेद्य) पूजन करें तथा यंत्र के चारों कोनों पर एक-एक लघु नारियल स्थापित कर उन पर कुंकुम का टीका लगाएं।
- यंत्र पर दृष्टि एकाग्र रखते हुए भी निम्न ध्यान का उच्चारण करें–

ध्यान

ॐ बन्धूककांचननिभं रुचिराक्षमालां,
पाशांकुशौश्च वरदां निजबाहुदण्डैः।
बिभ्राणमिन्दुसकलाभरणं त्रिनेत्र;
मर्धाम्बिकेश मनिशं वपुराश्रयामि।।

- ध्यान मंत्र के उच्चारण के बाद उसी प्रकार यंत्र पर त्राटक करते हुए कमलगट्टे की माला से निम्न **'गुरु बीज मंत्र'** की कम से कम पांच माला जप अवश्य करें। केवल एक ही अक्षर का बीज मंत्र होने के कारण साधक इसे सरलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते हैं–

गुरु बीज मंत्र

।। श्रीं ।।

- मंत्र जप के उपरांत मूल गुरु मंत्र की भी एक माला सम्पन्न करें तथा पहले से प्राप्त किये गए पूज्यपाद गुरुदेव के चित्र के समक्ष आरती प्रज्वलित कर पूर्ण भाव से, अपनी त्रुटियों की क्षमा मांगते हुए आरती सम्पन्न करें।
- साधना की समाप्ति पर सभी सामग्री को विसर्जित कर दें।
- यदि आप गुरु पूर्णिमा पर साधना शिविर में भाग ले रहे हों, तब भी इस साधना को अवश्य सम्पन्न करें, क्योंकि इस साधना को साक्षात गुरु चरणों में बैठकर करने का सौभाग्य तो कुछ और ही है।
- अत्यन्त लघु प्रकृति की यह साधना होने के कारण इसे सम्बन्धित दिवस की प्रातः उठकर अल्पकाल में इसे सम्पन्न किया जा सकता है।
- **वास्तव में इस प्रकार की साधना को सम्पन्न करने से साधक उस लाभ को और भी अधिक तीव्रता एवं सम्पूर्णता से ग्रहण कर पाता है, जो साधना शिविरों में पूज्यपाद गुरुदेव के शक्तिपात द्वारा प्राप्त होते हैं।**

साधना के किसी भी स्तर पर खड़े साधक के लिए यह गुरु साधना एक नवीनता ही लेकर आयेगी, जिसका कुछ ही दिनों में साधक स्वयं अनुभव कर सकेगा।

इस साधना में स्वतः ही लक्ष्मी तत्त्व का समावेश है, जिससे यह जीवन के भैतिक पक्षों को भी समुन्नति करने में सहायक साधना है।

साधना सामग्री– त्यौहार – 255/-

गुरु और शिष्य के सम्बन्ध तो पूर्ण निःस्वार्थ भाव-भूमि पर जनमते और पनपते हैं।

एक आदमी जो कि छल, झूठ के वातावरण में पला वह इन सम्बन्धों को केवल अपनी स्वार्थी दृष्टि से ही देखता है और समर्पित शिष्य यह जानता है, कि गुरुत्व शक्ति जो भौतिक शरीर रूप में व सूक्ष्म, इन दोनों स्थितियों में पूर्णरूपेण कार्य करती है, प्रत्येक प्रकार से अपने शिष्य का शुभ चिंतन करती है, शिष्य के जीवन को सजाती-संवारती है और उसको इतिहास पुरुष बनाने के लिए, उसके जीवन को हिमालय से भी ऊंचा उठाने के लिए गुरु स्वयं को द्रोण की तरह कीचड़ आक्षेप व लांछनों में फंसा लेते हैं। फिर भी उन्हें संतोष होता है, कि वह अपने शिष्य को कुछ बना सके, अमर कर सके। शिष्य की दक्षिणा उतनी महत्वपूर्ण हो अथवा न हो, लेकिन गुरु का व्यक्तित्व बहुत महान होता है, जिसे समझना इतना आसान नहीं होता, इसके लिए तो ज्ञान चक्षुओं की ही आवश्यकता होती है जो केवल समर्पण से ही मिल सकती है।

कितने महान होते हैं गुरु, कि उनके त्याग की भनक तक भी शिष्य को होने नहीं पाती और न ही समाज समझ पाता है। गुरु अपनी आलोचना से विचलित नहीं होते।

. . . लेकिन क्या कोई गुरु पद की गरिमा को समझ सका है, गुरु का अपने शिष्य के प्रति प्रेम को समझ सका है?

गुरु आत्म स्थापन साधना

24.12.98 अथवा किसी भी मास की 21 तारीख या गुरु श्रद्धाञ्जलि समर्पण दिवस

जिसमें शिष्य सद्गुरु के दिव्य भाव को आत्मसात कर लेता है

शिष्य जब समर्पण भाव में आ जाता है और वह गुरु के साथ एकाकार होने के लिए मन मस्तिष्क और हृदय से दृढ़ हो जाता है, तो गुरु शिष्य के साथ आत्म लीन होकर उसे अपना सम्पूर्ण प्यार उड़ेल देते हैं।

परम पूज्य सद्गुरुदेव डॉ० नारायण दत्त श्रीमाली जी, जो हम सबके सद्गुरुदेव हैं एवं हमारे प्राणप्रिय हैं, उन्होंने अपनी क्रिया द्वारा यह भौतिक देह भले ही छोड़ दी हो, वे सिद्धाश्रम में पूज्य श्री निखिलेश्वरानन्द स्वरूप में विराजमान हैं और आत्मिक रूप से हम सबके मध्य ही तो स्थित हैं।

जब तक शिष्य शिष्यत्व भाव से रहते हुए सद्गुरु को आत्मसात करता है, तभी तक उसे दिव्य आशीर्वाद केवल स्वयं के लिए प्राप्त होता रहता है।

मात्र शिष्यों के कल्याण के लिए ही वे आए और उनकी नजर में प्रत्येक शिष्य समान ही रहा, चाहे वह एक वर्ष से जुड़ा हो या दस वर्ष से या दस दिन से या अभी भी जुड़ने का मानस बना रहा हो, तभी तो करुणा से वशीभूत होकर वे यह साधना दे गए, जिसको सम्पन्न कर आप हर समय गुरु की सान्निध्यता का अनुभव कर सकते हैं।

एकलव्य गुरु द्रोण के आश्रम से काफी दूर जंगलों में रहता था, उसने वहां गुरु की मूर्ति स्थापित कर अभ्यास जारी रखा। गुरु द्रोण सदैव उस मूर्ति में प्राण स्वरूप में विराजमान रहते थे और एकलव्य को प्रेरणा दिया करते थे, यह रहस्य केवल एकलव्य और गुरु द्रोण ही जानते थे। सशरीर रूप में कभी सामने न आकर भी एकलव्य को मात्र धनुर्विद्या में ही नहीं अपितु अपना सर्वस्व ज्ञान देकर पूर्ण कर दिया।

प्रस्तुत **'गुरु आत्म स्थापन साधना'** पूज्य द्रोणाचार्य द्वारा एकलव्य को दी गई साधना का परिवर्द्धित रूप है, जिससे साधक गुरु कृपा प्राप्ति के लिए तीव्रता से अग्रसर हो सकें और उन्हें गुरुदेव के सानिध्य का एहसास होना प्रारम्भ हो जाए। एकलव्य ने भी साधना के द्वारा ही गुरु द्रोण की सूक्ष्म उपस्थिति को साकार किया था, आवश्यकता है तो मात्र इस साधना को पूर्ण श्रद्धा एवं विश्वास से सम्पन्न करने की।

अभी तक यह साधना गोपनीय ही रही है, परन्तु अब वर्तमान समय को देखते हुए, शिष्यों की तड़फ और बेचैनी का अनुभव करते हुए, उनकी वेदना को समझते हुए ही इस साधना को उजागर किया जा रहा है।

इस साधना को **24.12.98 अथवा शुक्ल पक्ष के किसी भी गुरुवार, अथवा किसी भी मास की 21 तारीख, अथवा किसी भी मास के 'गुरु श्रद्धाञ्जलि समर्पण दिवस' (शुक्ल पक्ष की नवमी)** से प्रारम्भ किया जा सकता है। स्नान आदि से निवृत्त होकर उत्तराभिमुख हो पूजा स्थल में एक श्वेत वस्त्र बिछाकर सद्गुरुदेव का एक चैतन्य चित्र स्थापित करें। चित्र ऐसा हो, जिसे आप स्नान करा सकें, विधिवत पूजन कर सकें, तिलक लगा सकें, ऐसा भव्य चित्र हर समय आपके पूजा स्थान में स्थापित रहे। इस चित्र

→ भी स्थापित करें। उसके बाद सद्गुरुदेव के ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि,
के साथ ही सिद्धाश्रम चेतना युक्त '**गुरु आत्म यंत्र**' दोनों भुजाओं पर चन्दन से तिलक करें। यह तिलक बिन्दी स्वरूप हो, तत्पश्चात् गुरु चित्र पर सुगन्धित माल्यार्पण करें। तदनन्तर
निम्न मंत्र का १०५ बार उच्चारण करते हुए गुरु चित्र और यंत्र पर अक्षत चढ़ाते हुए गुरुदेव का आवाहन करें।

आवाहयामि आत्म स्वरूपं, आवाहयामि प्राण स्वरूपं। आवाहयामि मम देह चिन्त्यं, गुरुत्वं शरण्यं गुरुत्वं शरण्यं ॥

अब आप अपने सामने एक कटोरी में चन्दन लेकर उसे अपने शरीर के अंगों (ललाट, कान, कण्ठ, हृदय स्थान, नाभि, दोनों भुजाओं) पर लगाएं और निम्न मंत्र का उच्चारण करें। इन मंत्रों के उच्चारण के साथ ही गुरुदेव को अपने हृदय स्थान पर विराजमान होने का भाव रखें –

ॐ कूर्माय नमः, ॐ आधार शक्तये नमः, ॐ पृथिव्यै नमः, ॐ धर्माय नमः, ॐ ज्ञानाय नमः, ॐ सवित्रात्मय नमः, ॐ ऐश्वर्याय नमः, ॐ विकारमयकेशरेभ्यो नमः, पंचाशर्णबीजाढ्यकर्णिकायै नमः, ॐ वैराग्याय नमः, ॐ अनेश्वर्याय नमः, ॐ अनन्ताय नमः, ॐ सर्वतत्वात्मकाय नमः, ॐ आनन्दकन्द कन्दाय नमः, ॐ प्रकृतमयपत्रेभ्यो नमः।

चूंकि आप दीक्षित शिष्य हैं, और नित्य गुरु मंत्र का जप करते हैं, अतः मंत्र जप से पूर्व जिस माला से गुरु मंत्र जप करते हैं, उस माला से गुरु मंत्र की ४ माला जप करें, इसके बाद गुरु आत्म स्थापन मंत्र की '**गुरु सिद्धि माला**' से २१ माला गुरु **आत्म स्थापन** मंत्र का जप करें।

॥ ॐ ह्रीं क्लीं गुरुत्व आत्मैक्यं ह्रीं फट् ॥

Om Hreem Kleem Gurutva Aatmaikyam Hreem Phat

यह २१ दिन की साधना है और इसे प्रातः काल अथवा रात्रि में ही सम्पन्न करना चाहिए। मंत्र जप के बाद साधक को दस मिनट शवासन में लेट जाना चाहिए। ऐसा करने से मनोरम प्राकृतिक दृश्य दिखाई दे सकते हैं। इस साधना से अनेक प्रकार के अनुभव होते हैं।

२१ दिन के बाद माला को जल में प्रवाहित कर दें तथा यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर दें। बाद में भी इस मंत्र का नित्य पन्द्रह-बीस मिनट तक जप करने के पश्चात् शवासन करें। धीरे-धीरे साधक को गुरुदेव की उपस्थिति का अनुभव होने लगेगा, आपके मन में उमड़ रहे प्रश्नों का उत्तर भी मिलने लगेगा, जीवन में साहस और निडरता आ जाएगी।

*यह साधना पूज्य गुरुदेव ने आशीर्वाद स्वरूप प्रदान की है। जिसकी साधना सामग्री आप निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं। आप केवल दो पत्रिका सदस्य बनाएं (जो आपके परिवार के सदस्य न हों) और संलग्न पोस्टकार्ड भर कर भेज दें। हम **438/-** (दो पत्रिका सदस्यता शुल्क **195+195/-** डाक व्यय **48/-=438/-**) की वी.पी.पी. से मंत्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त '**गुरु आत्म यंत्र**' और '**गुरु सिद्धि माला**' भेज देंगे और आपके दोनों परिचितों को वर्ष पर्यन्त प्रति माह पत्रिका भेजते रहेंगे।*

गुरु व शिष्य के सम्बन्धों की ऐसी अद्भुत विवेचना पहले अन्य किसी ग्रन्थ में की ही नहीं गई है। इन पुस्तकों में अध्यात्म के अनछुए पक्षों को इस प्रकार उतारा गया है, कि पढ़ते ही प्राणों के तार झंकृत होने लगते हैं।

ये पुस्तकें जो आपके लिए अत्यधिक उपयोगी हैं . . .

ध्यान धारणा और समाधि

'ध्यान', 'धारणा' और 'समाधि' – इन तीनों विधियों द्वारा जीवन में अपूर्व शान्ति एवं आनन्द भर देने की कला को समझाता हुआ अद्वितीय ग्रंथ।

न्यौछावर:96/-

निखिलेश्वर सहस्रनाम

जीवन को ऊर्ध्वगामी बनाकर, आनन्द के मानसरोवर की गहराई में उतर कर पूर्ण पुरुषत्व होने और सम्पूर्णता प्राप्त करने हेतु है यह ग्रंथ, जिसका पाठ करना तथा जिसके अनुसार साधना करना ही जीवन का सौभाग्य माना गया है।

न्यौछावर:90/-

KUNDALINI TANTRA

This book is the real essence of human life. It defines the *Naad-Brahma* in a completely novel way for the first time, and presents an authentic review of the facts regarding the *Kundalini Power.*

Price :**240/-**

MEDITATION

...to realise the totality of life, it is a unique book. Diving deep into its depths one can attain eternal peace, mental upliftment and spiritual enlightenment.

Price :**240/-**

3.6.99 या गुरुवार

स्वामी सच्चिदानन्द प्रणीत

आद्या शक्ति साधना सिद्धि

जो कुण्डलिनी जागरण का आधार है

शिष्य के जीवन में यदि कोई होता है, तो मात्र गुरु ही होते हैं। गुरु साधना की एक स्थिति होती है, जब शिष्य की दृष्टि में देवी-देवताओं का कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता, उसका मस्तक यदि कहीं झुकता है, तो माता-पिता, इष्ट और गुरु चरणों के अलावा अन्य कहीं भी नहीं झुकता है . . . और इससे भी ऊपर जब शिष्य के लिए इष्ट और गुरु में भी विभेद समाप्त हो जाता है, तब वह गुरु की शक्ति स्वरूप साधना करने का अधिकारी हो जाता है, क्योंकि उसके मानस में तो यह स्पष्ट होता है, कि समस्त देवी-देवताओं की यदि कहीं उपस्थिति है, तो साक्षात् गुरुदेव में है। फिर उन्हें छोड़कर अन्य कहीं भटकने से क्या लाभ?

समस्त ब्रह्माण्ड जिस शाश्वत निखिल तत्व से गतिशील है, उसी गुरुत्व शक्ति की यह साधना है, जिसके प्रभाव से कुण्डलिनी शक्ति का जागरण होने की क्रिया में त्वरा आ जाती है . . . और फिर गुरु की अणिमा, महिमा, लघिमा आदि अष्टादश सिद्धियां साधक को स्वतः ही प्राप्त हो जाती हैं।

यहां जब शक्ति शब्द का उल्लेख किया गया है, तो उसका अर्थ कोई दुर्गा या जगदम्बा से नहीं है, अपितु ***शक्ति से तात्पर्य तो उस शाश्वत निखिल तत्व से है, उस गुरुत्व शक्ति से है, जिससे समस्त ब्रह्माण्ड गतिशील है, जिसके फलस्वरूप दिन और रात होती है, ऋतुएं बदलती हैं, जन्म और मृत्यु होती है . . . और वह शक्ति जिसके पुंजीभूत होने से अनेक देवी-देवताओं का प्रादुर्भाव हुआ है।***

वह गुरुत्व शक्ति अदृश्य रूप में प्रत्येक जीव, प्रत्येक प्राणी में सुप्तावस्था में रहती है, जिसे कुण्डलिनी कहते हैं।

शरीर संरचना के अनुसार मानव मस्तिष्क तीन भागों में विभक्त है – मुख्य मस्तिष्क, लघु मस्तिष्क एवं अधः लघु मस्तिष्क। इन तीनों में ही '**अधः लघु मस्तिष्क**', जिसे वैज्ञानिक भाषा में Medulla Oblongota कहते हैं, अति रहस्यमय है। उसका आकार अण्डे के समान होता है, जिसके भीतर कोई द्रव्य भरा होता है। इसमें सूक्ष्मतम ज्ञान तन्तुओं का एक समूह होता है, जो अपने स्थान पर गोलाकार छल्ले की तरह एक हजार बार घूमा हुआ होता है – इसी को योग भाषा में '**सहस्रार**' की संज्ञा दी जाती है। प्रायः मनुष्यों में ज्ञानश्चेतना मूलाधार के स्तर तक ही होती है। योग साधनाओं द्वारा इस शक्ति को मूलाधार से उठा कर सहस्रार में ब्रह्म अर्थात् गुरु तत्व से मिलन करा देना ही जीवन की पूर्णता है और योग सिद्धियों का सार है।

कुण्डलिनी शक्ति ही जीव की मूल शक्ति है, जिसके जाग्रत होने पर ही उसकी अनन्त की ओर की यात्रा का प्रारम्भ होता है। **मूलाधार से सहस्रार की इस यात्रा में जो शक्ति मूल रूप से सहाय्य होती है, वह गुरु की शक्ति ही होती है। इस साधना द्वारा कुण्डलिनी जागरण की क्रिया में त्वरिता आ जाती है।** यह विज्ञान साधकों से छिपा नहीं है, कि कुण्डलिनी जागरण ही मनुष्य जीवन का हेतु है, शव से शिव बनने की प्रक्रिया है, बिना कुण्डलिनी शक्ति को जाग्रत किए पूर्णता प्राप्ति सम्भव ही नहीं।

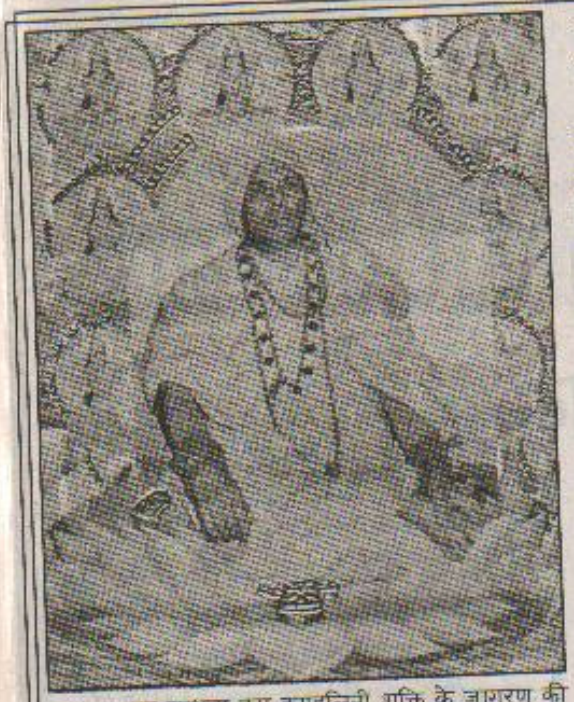

यह साधना उस कुण्डलिनी शक्ति के जागरण की आधारभूत साधना है।

जब साधक गुरु की शक्ति रूप में आराधना करता है, तो सद्गुरु उसी रूप में साधक के शरीर में बीज रूप में स्थापित हो जाते हैं, और फिर शनैः-शनैः, जैसे-जैसे साधक साधनाओं को सम्पन्न करता जाता है, शक्ति का यह बीज उसके अन्दर विकसित होता जाता है। और यही शक्ति बीज फिर एक एक कर सातों चक्रों को भेदता जाता है। इसी दौरान साधक को अनेकों सिद्धियों की प्राप्ति होती रहती है। इन सिद्धियों को शास्त्रों में अष्टादश सिद्धियों के नाम से जाना जाता है –

1. अणिमा 2. महिमा 3. लघिमा 4. प्राप्ति 5. प्रकाट्य 6. ईशित्व 7. वशित्व 8. कामावसायिता 9. शुद्ध स्वरूप की प्राप्ति 10. दूर श्रवण 11. दूरदर्शन 12. मनोजव 13. स्वेच्छा-वपु 14. परकाया प्रवेश 15. इच्छित मृत्यु 16. देवक्रीड़ा दर्शन 17. संकल्प सिद्धि 18. प्रभुत्व।

अणिमा, महिमा सिद्धियों का सम्बन्ध शरीर से होता है, अतः इन सिद्धियों का स्वामी अपनी इच्छा के अनुरूप सूक्ष्म या विराट रूप धारण करता है। **लघिमा** सिद्धि प्राप्त होने पर व्यक्ति कोई भी रूप धारण कर सकता है, आकाश की तरह फैल सकता है, एक स्थान पर रहते हुए दूसरे स्थान पर जा सकता है, अदृश्य होने की सिद्धि भी मिल जाती है। साधक अपने एक रूप को अनेक रूपों में प्रकट कर सकता है।

प्राप्ति नामक सिद्धि से साधक को किसी भी स्थान से मनोवांछित वस्तु मंगा लेने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। **प्रकाट्य** द्वारा साधक को अंतरिक्ष में विचरण करने वाले देवी, देवता, यक्ष, किन्नर, गंधर्व आदि के दर्शन होने लगते हैं। **ईशिता** की शक्ति से साधक किसी भी प्रकार का शरीर धारण कर सकता है। **वशिता** द्वारा साधक को तुरीयावस्था प्राप्त होती है, और उसे समस्त विषयों में आसक्ति समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार आगे की सिद्धियां प्राप्त करता हुआ ***साधक गुरु के शक्ति स्वरूप की साधना करते-करते अंत में गुरु की समस्त शक्तियों का स्वामी बन जाता है।*** फिर अलग-अलग सिद्धियों के लिए उसे अलग-अलग साधनाएं करने की आवश्यकता नहीं होती है।

शक्ति मूल रूप में नारी स्वरूपा कही गई है। **गुरुदेव के इस स्वरूप की साधना करने से साधक को स्वतः ही उनकी करुणा और वात्सल्यता प्राप्त हो जाती है।** फिर उसके सामने शिष्य जीवन की कठिन और कड़ी परीक्षा कसौटियां नहीं रहतीं, वह तो एक शिशु की तरह इस साधना के द्वारा गुरु को मातृ रूप में देखता हुआ गुरु चरणों में निमग्न हो जाता है। और गुरुदेव भी करुणा के वशीभूत अपने शिष्य को गोद में उठाकर अत्यन्त मधुरता से सब कुछ प्रदान करते रहते हैं, और शिशुवत शिष्य को पता भी नहीं चल पाता कि वह बड़ा हो गया है, और उसके अन्दर विशेष शक्तियों एवं सिद्धियों का स्थापन हो गया है।

गुरुदेव के मातृत्व स्वरूप की इस साधना द्वारा साधक में मातृत्व गुणों का विकास होना कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है। **शिष्य के अन्दर फिर व्यक्तिगत चिन्तन नहीं रह जाता, वह अपने कल्याण से ऊपर विश्व चिन्तन से आपूरित हो जाता है, परोपकार की भावना उसमें व्याप्त हो जाती है** और देवत्व के यही तो लक्षण होते हैं, निश्चय ही **इस साधना के द्वारा वह देवत्व का स्तर प्राप्त कर लेता है,** सिद्धियां तो स्वतः ही उसमें निहित हो जाती हैं, उसके लिए उसे अलग से प्रयास नहीं करना पड़ता, क्योंकि ***समस्त सिद्धियों की प्रदाता मातृ स्वरूप में, पूर्ण करुणामयी रूप में गुरुदेव उसके अन्दर ही तो विराज रहे होते हैं, एक अविनाशी शक्ति बीज बनकर।***

इस साधना द्वारा साधक के अन्दर जिस गुरुत्व शक्ति के बीज का स्थापन होता है, वही साधक को जीवन पर्यन्त गतिशील भी करता है। जिस प्रकार अग्नि तीव्र होने पर ऊपर उठती है, उसी प्रकार साधक के भीतर शक्ति तत्व का विकास

होने पर वह अपने जीवन में ऊपर उठता ही जाता है। परन्तु गुरुदेव की यह शक्ति भी उसी साधक को प्राप्त होती है, जो अपने दुर्भाग्य पर, अपनी दीनता पर, अपने आपको हीन नहीं समझता है, वरन् स्वाभिमान का सागर उसके अन्दर लहरा रहा होता है और यह तभी सम्भव है जब गुरु में शिष्य की पूर्ण आस्था एवं अटल विश्वास हो।

इस साधना को करना प्रत्येक शिष्य का सौभाग्य है, इस साधना को **3.6.99 अथवा किसी भी माह के गुरुवार** को सम्पन्न किया जा सकता है। इसमें **'गुरु मंत्र सिद्ध कुण्डलिनी जागरण यंत्र'**, **'गोमती चक्र'** व **'शक्ति माला'** आवश्यक है।

साधना विधि

साधक को चाहिए कि वह प्रातःकाल उठकर स्नान आदि से निवृत्त होकर पीली धोती व गुरु चादर धारण कर उत्तर दिशा की ओर मुख कर बैठे। सामने गुरु चित्र का स्थापन कर संक्षिप्त पूजन करे, फिर **कुण्डलिनी जागरण यंत्र** को अक्षत के आसन पर स्थापित करें। यंत्र के बगल में गोमती चक्र को रखें। फिर गुरुदेव के कुण्डलिनी स्वरूप का ध्यान करें –

सिन्दूरशोणविग्रहां त्रिनयनां माणिक्य मौलिस्फुरत्,
तारानायक शेखरां स्मितमुखीमापीन वक्षोरुहाम्।
पाणिभ्यां मणिपात्रं पूर्णरुधिरं रक्तोत्पलं बिभ्रतीं,
सौम्यां रत्नघटस्थ रक्तचरणां ध्यायेत् परामम्बिकाम्॥

श्री जगदम्बायै नमः ध्यानं समर्पयामि।

जिनके शरीर का वर्ण सिन्दूर के समान लाल है, जिनके तीन नेत्र हैं, जिनके शिरोभाग में माणिक्य जटित मुकुट सुशोभित हो रहा है, जो मंद-मंद मुस्करा रहे हैं, जो अपने दोनों हाथों मणिमय पात्र तथा रक्त कमल धारण किए हैं, जिनका स्वरूप सौम्य है, जिनके चरण रत्नयुक्त घड़े पर स्थित हैं, गुरुदेव के ऐसे कुण्डलिनी स्वरूप का मैं ध्यान करता हूं।

इसके बाद निम्न मंत्र बोलते हुए यंत्र पर क्रमशः पाद्य हेतु जल, अर्घ्य हेतु दो आचमनी जल, स्नान, कुंकुम, चन्दन, धूप, दीप, नैवेद्य, पुष्पांजलि आदि अर्पित करें।

ॐ ह्रीं एतत् पाद्यं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतत् अर्घ्यं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदमाचमनीयं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं स्नानं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं गन्धं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं सचन्दनं समर्पयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं धूपं आघ्रापयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं दीपं दर्शयामि नमः।
ॐ ह्रीं इदं नैवेद्यं निवेदयामि नमः।
ॐ ह्रीं एतं पुष्पांजलिं समर्पयामि नमः।

इसके बाद निम्न मंत्र की **शक्ति माला** से ५ माला नित्य २१ दिन तक करें –

॥ गुं गुरुदेवाय ज्योतिर्मयाय भव्याय ॐ नमः ॥

Gum Gurudevaay Jyotirmayaay Bhavyaay Om Namah

इसके बाद **'ॐ गुह्याति गुह्य गोप्त्री त्वं गृहाणास्मत् कृतं जपं, सिद्धि भवतु मे देवि त्वत् प्रसादान् मंडेश्वरि'** मंत्र बोलते हुए एक आचमनी जल छोड़ते हुए जप का समर्पण करें।

साधना समाप्ति के बाद समस्त सामग्री को जल में विसर्जित करें। यदि सम्भव हो तो साधना के बाद नित्य एक माह तक इस मंत्र का नित्य पांच मिनट जप करें।

साधना सामग्री पैकेट – 410/-

इस अंक में चार गुरु साधनाएं क्यों?

*यह 'निखिल जयंती अंक' है और इसमें ब्रह्माण्ड के ४ सर्वोच्च गुरुओं द्वारा प्रणीत साधनाएं प्रस्तुत की जा रही हैं – १. **गुरु हृदय स्थापन साधना**, २. **तंत्र रूपेण गुरु शिव सायुज्य साधना**, ३. **विष्णु रूपेण गुरु अनन्त सिद्धि साधना**, ४. **गुरु शक्ति रूपेण आद्या शक्ति सिद्धि साधना**। पिछले कई महिनों से कार्यालय में साधकों के ढेर सारे पत्र प्राप्त हुए, जिसमें गुरु से सम्बन्धित साधनाओं को प्रकाशित करने की प्रार्थना की गई थी। गुरु साधनाओं के प्रति साधकों की ललक उनकी शिष्यता की उच्च भाव भूमि पर अवस्थित होने का ही परिचायक है। विशेष साधनाओं को उपयुक्त समय पर किए जाने पर ही पूर्ण लाभ प्राप्त होता है, इसी कारणवश इन साधनाओं को प्रकाशित करने में विलम्ब किया गया था। परन्तु अगले आपके पास अप्रैल से लगा कर जुलाई तक ४ माह ऐसे हैं, जो कि इन चारों साधनाओं को सम्पन्न करने के लिए श्रेष्ठ हैं।*

जो शिष्य हैं, जो वास्तव में साधना के दुरूह पथ पर कुछ प्राप्त करना चाहते हैं, जो मात्र मनोरंजन, टाइम-पास या परीक्षण हेतु ही साधना नहीं करते, अपितु वास्तव में दृढ़ संकल्पित हैं कुछ हस्तगत करने के लिए – ऐसे सभी साधकों को चाहिए कि इस वर्ष की गुरु पूर्णिमा के पहले-पहले ही इन चारों साधनाओं को अवश्य ही सम्पन्न करें। गुरु पूर्णिमा के पहले से ही यह साधकों का इन साधनाओं द्वारा मार्जन होगा, क्योंकि संकेत ही इस प्रकार के प्राप्त हुए हैं, कि इस वर्ष की गुरु पूर्णिमा का विशेष महत्व है।

13.6.99 या कोई सोमवार

निखिलेश्वरानन्द प्रणीत

विपत्ति उद्धारक गुरु तंत्र रूपेण शिव सायुज्य साधना

यह संसार भी विष का सागर ही है, जो छल, झूठ, कपट, हिंसा, व्यभिचार, समस्या रूपी विष की बूंदों से भरा हुआ है . . . प्रत्येक मनुष्य चाहे-अनचाहे इनका पान करता ही रहता है और इसमें उलझ कर उत्साह, उमंग और जीवन का अर्थ भूल कर मृत्यु की ओर अग्रसर हो जाता है। और तब अमृत्यु की ओर कोई ले जा सकता है, तो वे गुरु ही होते हैं, जो कि शिव का साकार रूप होते हैं।

मन ही मनुष्यों के लिए बन्धन और मोक्ष का कारण है। व्यक्ति का मन अर्थात् चित्त जैसी इच्छा करता है, उसे वैसा ही प्राप्त होता है। मन के साथ ही काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, भय, पीड़ा, कष्ट की स्थितियां संलग्न हैं, अतः प्रत्येक मनुष्य इन स्थितियों का अनुभव करता है। ***मन पर नियंत्रण हुए बिना पूर्णता सम्भव नहीं होती। मन जब कामासक्त होता है तो उसे कामान्ध बना देता है। जब मन क्रोधयुक्त होता है, तो व्यक्ति क्रोध में कुछ नहीं देख पाता और अनिष्ट कर बैठता है। जब मन में लालच समा जाता है, तो अच्छे-बुरे का ज्ञान का समाप्त हो जाता है।*** जब मन आलस्य से ग्रस्त होता है, तो व्यक्ति को आलसी बना देता है। जब मन नियंत्रित हो सकेगा, तभी वह साधनाओं में या यौगिक क्रियाओं में पूर्णता प्राप्त कर सकेगा, तभी वह साधक की वास्तविक भावभूमि पर अपने पैर रख सकेगा, तभी वह शिवत्व प्राप्त कर सकेगा, तभी वह गुरु में निमग्न हो सकेगा।

गुरु को परब्रह्म कहा गया है, उसी विराट गुरु तत्व की ही तीन शक्तियां हैं – ब्रह्मा, विष्णु और महेश। ब्रह्मा को जिस प्रकार सृष्टि का निर्माता कहा गया है, उसी प्रकार शिव को संहारक कहा गया है। **गुरु की शिव रूप में साधना करने से वे संहार ही तो करते हैं, शिष्य के संसार (उसकी आंतरिक पीड़ाएं) का, शिष्य के अंतः में चल रहे द्वन्द्वों का, उसके मन के विकारों का, वासनाओं का, तृष्णाओं का, दुःख, विषाद और चिन्ताओं का। अपने त्रिनेत्र से वे शिष्य के पाप, संशय, काम, क्रोध, अहंकार, आलस्य, भय आदि व्याधियों को भस्म कर स्वयंवत ही तो बना लेते हैं।**

> **योगीजन और देवगण तो अमृत प्राप्त कर उसी में निमग्न हो जाते हैं, जबकि भगवान शिव बोध-अमृत और आनन्द में लीन होकर विष अर्थात जीवन की विषमताओं में लीन हो जाते हैं। इसी कारण वे देवाधिदेव हैं। वही स्वरूप सद्गुरु का भी होता है। इसी कारणवश उन्हें भगवान शिव का प्रकट रूप कहा जाता है। स्वयं अमृतमय होते हुए भी विष में निमग्न रहना – यह लक्षण केवल किसी विराट सत्ता में ही हो सकता है।**

सद्गुरु के इस संहारक स्वरूप द्वारा शिष्य के जीर्ण मन व चिन्तायुक्त चित्त का जहां नाश होता है तो वहीं एक नवीन शिष्य का प्रादुर्भाव होता है, जिसमें गुरु पूर्ण शिवस्वरूप में उसके रोम-रोम में विद्यमान होते हैं, जहां फिर चिन्ता नहीं होती, जहां तनाव नहीं होता, जहां वैभव तो होता है, जहां सम्पन्नता तो होती है, परन्तु किसी प्रकार की कोई लिप्सा नहीं होती, व्यक्ति के पास सब कुछ होते हुए भी वह निर्लिप्त रहता है। और यही तो इस साधना का सार है, और पूर्णता का यही तो सोपान है।

जब हम भगवान शिव के मन्दिर में जाते हैं, तो दोनों हाथ जोड़कर, दसों उंगलियों को परस्पर जोड़कर के अपने सिर को झुकाकर प्रणाम करते हैं। यह इस बात का चिन्तन है, कि मैं अपनी पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेन्द्रियों – इन

संसार में जो कुछ है, उसे तोड़ना-मरोड़ना नहीं है, तुम्हें उसके अनुरूप बनना है, तुम्हें अपने अहंकार को समाप्त करना है, और सारी चित्त वृत्तियों को, सारी कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों को एकत्र कर उस संसार के प्रवाह में निमग्न कर देना है। गुरु के शिवस्वरूप को समझना है, तो धारा के अनुरूप बहकर समुद्र में लीन होना होगा, अपने को समाप्त करना होगा।

हमारे चित्त की तीन वृत्तियां हैं – पहली यह कि जब हमें कोई दुःखद समाचार मिलता है, तो हम दुखी हो जाते हैं, जब हमें कोई सुखद समाचार मिलता है, तो हम खुश हो जाते हैं। यदि कहीं थोड़ी सी परेशानी आती है, तो हम परेशान हो जाते हैं। यदि कुछ प्राप्त हो जाता है, तो हम बहुत आनन्द अनुभव करने लग जाते हैं, यह अनुभव करना अलग चीज है और अनुभव युक्त होना अलग चीज है। भगवान शिव आनन्दयुक्त हैं। पहले तल पर व्यक्ति सुख में सुखी होता है, दुख में दुखी होता है, जैसा जीवन चल रहा है, उसे वैसे ही जीता है। जीवन के अनुरूप बनने की कोशिश करता है। शिवत्व प्राप्त करने के लिए हमें पूर्ण रूप से नमन युक्त और समर्पण युक्त होना पड़ेगा, तभी शिव के उस आनन्द में लीन हुआ जा सकता है।

दसों इन्द्रियों को आबद्ध करके और अपने सिर में जो बुद्धि है, जो अहंकार है, उसको गिराता हुआ मैं आपको प्रणाम करता हूं। यह प्रणाम करने की वृत्ति विनीत होने की वृत्ति है, यह समर्पण का प्रतीक है।

यदि हमें उस परमात्मा में लीन होना है, सद्गुरु के चरणों में निमग्न होना है, तो हमें समर्पण होने की क्रिया सीखनी पड़ेगी। समर्पण होने के लिए अपनी पांच कर्मेन्द्रियों और पांच ज्ञानेन्द्रियों को एक साथ आबद्ध करना पड़ेगा, ज्ञान को कर्म पर हावी करना पड़ेगा। इसलिए जब हाथ जोड़ते हैं, तो पांच ज्ञानेन्द्रियां पांच कर्मेन्द्रियों पर हावी होती हैं, दोनों परस्पर जुड़ जाती हैं। और फिर जुड़ कर हम दोनों हाथ को सिर पर टिका देते हैं, तो इसका अर्थ है कि हम अपनी बुद्धि को ज्ञानेन्द्रियों के हवाले कर देते हैं।

अब मेरे पास कोई तर्क नहीं है, मेरे पास किसी प्रकार का मोह नहीं है, मैं अपने आप में झुकने की क्रिया कर रहा हूं, मैं अपने आप में प्रणिपात होने की क्रिया कर रहा हूं। जब ऐसी क्रिया होती है, तब ज्ञान का उदय होना है।

यह वस्तुतः पंच विकारों एवं अष्ट बाधाओं का संहार कर शिव की भांति कुबेरवत होते हुए भी गृहस्थ योगियों की तरह निर्लिप्त और आनन्दमग्न स्थिति प्राप्त करने की साधना है।

भगवान शिव तीनों लोकों के स्वामी हैं, कुबेराधिपति हैं, फिर भी श्मशान में बैठे हुए हैं, निर्लिप्त हैं, वे धन सम्पदा को भोगने में लगे हुए नहीं है, धन सम्पदा तो उनके सामने बिखरी हुई है, पर वे समझते हैं कि जीवन में अनुरक्त होने में अनुकूलता प्राप्त नहीं हो सकती। भगवान शिव भगवती शक्ति के पति हैं, फिर भी कोई अहंकार नहीं है, बिल्कुल निश्चिन्त, निर्भीक बैठे हैं। संसार की घटनाओं से प्रभावित नहीं है। उनके चेहरे पर जो मस्ती है, जो आनन्द है वह प्राप्त हो। ***जीवन तो वही है, जहां मृत्यु नहीं आ सकती, लोभ, क्रोध और मोह जिसे स्पर्श नहीं कर सकता। निरन्तर मुस्कुराहट की वर्षा होती रहती है।*** जीवन के उस तथ्य को केवल शिव के माध्यम से ही समझा जा सकता है। और कोई देवता इतना निर्द्वन्द्व और निश्चिन्त नहीं है। इतनी धन सम्पदा कुबेरवत होने के बाद भोग में लिप्त हुआ जा सकता है, यह सब होते हुए भी निर्लिप्त, तटस्थ होना केवल शिव द्वारा ही सम्भव है।

परम शाश्वतं नीलकण्ठं गुरुत्वं

भगवान शिव ने जिस प्रकार सृष्टि की रक्षा करने के लिए हलाहल को अपने कण्ठ में धारण कर देवताओं को अमृत का पान कराया . . . ठीक वही क्रिया तो गुरु को करनी पड़ती है, शिष्य के अन्तर्निहित अज्ञान, अहंकार, पाप, दोष आदि दोष रूपी हलाहल को अपने अन्दर धारण कर उसे ज्ञान रूपी अमृत का पान कराते हैं . . . शिव और गुरु की क्रियाओं में साम्य होते हुए भी भिन्नता है। शिव ने केवल एक बार ही विष को कण्ठ में धारण किया था किन्तु गुरु को तो प्रतिदिन, प्रतिपल समस्त शिष्यों के विष को अपने अन्तर में धारण करना पड़ता है।

घन हो, वैभव हो, परन्तु चिन्ताग्रस्त नहीं हो, रोगग्रस्त नहीं हों, भय नहीं हो कि क्या होगा अगर चोरी हो गई। भगवान शिव को मृत्युंजय कहा गया है।

ज्ञान का **दूसरा तल** गुरु है। शिवत्व को प्राप्त करने का मतलब मृत्यु पर विजय प्राप्त करना, हम निश्चिन्त हो सकें, रोगमुक्त हो सकें। परन्तु यह तब सम्भव है जब विनीत भाव होकर गुरु चरणों में पहुंचा जाए, जो मार्गदर्शन कर सकता है, जो शिवत्व प्रदान कर सकता है। **'शिवोऽहं गुरुर्वै गुरुर्वै शिवोऽहं'** शिव को गुरु के रूप में ही देखा जा सकता है, गुरु के माध्यम से ही शिवत्व प्राप्त किया जा सकता है। गुरु में ही शिव के दर्शन किया जा सकता है, परन्तु उसके लिए नम्रता होना आवश्यक है।

यदि अहंकार है, तो गुरु तुम्हें स्वीकार नहीं कर सकता। यदि पूर्ण नम्र भाव से शिष्य उपस्थित हो, तभी गुरु शिष्य को शिवत्व दे सकता है। **'गुरुर्देवो महेश्वरः'** गुरु स्वयं महेश्वर है, हमारे सामने शिव तो नहीं हैं, पर शिव का मूर्तिमंत स्वरूप गुरु के रूप में हमारे सामने है, इसी लिए गुरु को शिव कहा गया है।

मैं नमस्कार करता हूं उस कुबेर के अधिपति शिव स्वरूप गुरु को, उस अमृतमय शिवरूप गुरु को, उस मृत्युंजयी शिव स्वरूप निखिलेश्वर को, परन्तु अभी मैं उनके इस स्वरूप को पहिचान नहीं सका हूं। यदि हम शिव तक पहुंचे ही नहीं तो हम मृत्यु पर विजय प्राप्त कर ही नहीं सकते, संसार में शिव के अलावा कोई दूसरा देवता है नहीं जो मृत्यु पर विजय प्रदान कर सकता है।

संसार में अष्ट प्रकार की बाधाएं हैं –

1. मृत्यु, 2. रोग 3. ऋण,
4. कुटुम्ब क्षय, 5. बुद्धिहीनता, 6. शत्रु आक्रमण,
7. गृहस्थ न्यूनता, 8. ज्ञान की न्यूनता।

आठों प्रकार की बाधाओं को गुरु की शिव स्वरूप साधना द्वारा ही सम्भव है। शास्त्र इस बात को स्वीकार करता है, भगवान शिव कोई अलग सत्ता नहीं है, गुरु को ही भगवान शिव माना गया है।

जिस समय शिष्य में यह भावना आ जाती है, कि जब मैं बैठूं तो गुरु का बिम्ब मेरे सामने स्पष्ट हो, जब मैं चिन्तन करूं तो केवल गुरु शब्द ही मेरे चिन्तन में हो, गुरु में पूर्णतः लीन हो सकूं। गुरु कहते हैं – ***"मैं शिव हूं और जब मेरे पास चिन्ता नहीं है, तो तुम्हें भी चिन्ता नहीं होनी चाहिए, तुम्हारी जो चिन्ताएं हैं, वह तो मुझे अर्पित कर देनी है, तुम्हें तो मस्ती से निश्चिन्त हो जाना है, तुम्हें तो अपना हाथ गुरु के हाथों में सौंप देना है।"***

गुरु दो टूक शब्दों मे समझा रहा है, कि शिष्य कोई अलग सत्ता नहीं है, अलग रह कर तुम तो समाप्त हो जाओगे, चिन्तायुक्त हो जाओगे, तुम्हें तो पूर्ण समर्पण होना है, गुरु इस शरीर का क्या उपयोग करे यह गुरु जाने। तब शिष्य गुरु से दूर नहीं रह सकता। फिर गुरु का कर्त्तव्य है, कि वह शिष्य को कैसे अग्रसर करे। शिष्य को समर्पण सिखाया नहीं जाता, कोयल को सिखाया नहीं जाता कि कैसे कूकना है, नदी को सिखाया नहीं जाता, कि कैसे समुद्र में विसर्जित हुआ जाता है। फिर गुरु का सारा ज्ञान अपने आप में शिष्य में आ जाता है।

तीसरा तल है पूर्ण रूप से शिवमय, आनन्दमय होने की क्रिया, पूर्ण रूप से निश्चिन्त और निर्भीक होने की क्रिया। रोम-रोम में गुरु को अंकित कर देने की क्रिया। फिर शिष्य का अलग कुछ नहीं है, फिर वह पूर्ण रूप से गुरुमय, पूर्ण रूप से शिवमय हो जाता है। तब उसमें नया ज्ञान, नया चिन्तन प्राप्त हो पाता है, तब अकेले बैठे हुए भी हवा में मंत्रों को सुन सकेंगे, अकेले बैठे हुए भी आनन्दमग्न हो सकेंगे, रोम-रोम से कोई आवाज उठ रही है, उसे सुन सकेंगे।

इसके लिए शरीर के रोम-रोम को चेतनायुक्त बनाना पड़ेगा और यह हो सकता है इस साधना से। ***तब चित्त में किसी प्रकार की व्याकुलता नहीं आती,*** तब बुढ़ापा नहीं आ सकता। पंच विकारों एवं अष्ट बाधाओं का संहार करता हुआ शिष्य प्रथम तल से तीसरे तल की यात्रा सम्पन्न कर सके, इसी हेतु यह **'गुरु शिव सायुज्य साधना'** प्रस्तुत है।

साधना विधि

इस साधना को **13.6.99 अथवा किसी सोमवार** को सम्पन्न किया जा सकता है। शुद्ध भाव से मन के सभी विकारों एवं विचारों को दूर रखते हुए एकाग्रचित्त होकर उत्तर दिशा की ओर मुख कर शुद्ध वस्त्र धारण कर बैठें। सामने गुरु चित्र को स्थापित कर धूप, दीप, पुष्प, कुंकुम, अक्षत से संक्षिप्त पूजन करें। फिर **'निखिल चैतन्य मंत्रों से सिद्ध पारद गुरु यंत्र'** को किसी पात्र में पुष्पासन देते हुए स्थापित करें। यंत्र के पास **'अघोर गुटिका'** को स्थापित करें। हाथ में जल लेकर साधना में प्रवृत्त होने का संकल्प लें।

अंगन्यास

ॐ हृदयाय नमः	(हृदय)
ॐ भूः शिरसे स्वाहा	(सिर)
ॐ भुवः शिखायै वषट्	(चोटी)
ॐ स्वः कवचाय हुं	(दोनों बाहें)
ॐ भूर्भुवः स्वः नेत्रत्रयाय वौषट्	(दोनों नेत्र, आद्रा चक्र)
ॐ भूर्भुवः स्वः अस्त्राय फट्	(३ बार ताली बजाएं)

इसके बाद गुरुदेव का शिव रूप में ध्यान करें –

ॐ नमः शिवाय गुरवे सच्चिदानन्द मूर्तये।
निष्प्रपञ्चाय शान्ताय निरालम्बाय तेजसे॥
देवाधिदेव सर्वज्ञ सच्चिदानन्द लक्षण।
उमा रमण भूतेश प्रसीद करुणानिधे॥

ॐ गुरुदेवाय तत्पुरुषाय नमः।

निम्न संदर्भ बोलते हुए यंत्र, गुटिका को स्नान कराएं।

ॐ आपो हिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन महेरणाय चक्षसे। यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयते हनः उशतीरिव मातरः तस्मा अरङ्ग मामव वस्य क्षयाय जिन्वय आपो जनयथा च नः।

श्री गुरुदेवाय स्नानं समर्पयामि नमः।

वस्त्रं समर्पयामि नमः। तिलकं समर्पयामि नमः।

अक्षतान् समर्पयामि नमः। धूपं दीपं दर्शयामि नमः।

नैवेद्यं

भालचन्द्र नमस्तुभ्यं विघ्नहृत मंगलप्रद,
नानाविधं गृहाणेदं नैवेद्यं कृपया प्रभो।

श्री गुरुदेवाय नैवेद्यं निवेदयामि नमः।

फिर आचमन कराएं एवं दक्षिणा द्रव्य अर्पित करें –

इदं आचमनीयं, दक्षिणा द्रव्यं समर्पयामि श्री गुरु चरणकमलेभ्यो नमः।

अपने जीवन की समस्त बाधाओं एवं मन के विकारों, दोषों, पापों की समाप्ति व आनन्द की स्थिति प्राप्त करने हेतु कुंकुम एवं अक्षत को निम्न मंत्र बोलते हुए यंत्र पर चढ़ाएं –

सद्गुरुदेव ने जिस गृहस्थ योगी की भांति जीवन जीने का मार्ग दिखाया है, उसी के सूत्रों को आत्मसात करने की साधना है यह 'गुरु शिव सायुज्य साधना'

ॐ अघोराय नमः। ॐ पशुपतये नमः। ॐ शर्वाय नमः। ॐ विरूपाक्षाय नमः। ॐ विश्वरूपिणे नमः। ॐ त्र्यम्बकाय नमः। ॐ कपर्दिने नमः। ॐ भैरवाय नमः। ॐ शूलपाणये नमः। ॐ ईशानाय नमः। ॐ सच्चिदानन्दाय नमः। ॐ निखिलेश्वराय नमः।

फिर **'सफेद हकीक माला'** से निम्न मंत्र की १ माला १४ दिन तक करें –

॥ ॐ शं शंकराय लोकरञ्जनाय निखिलेश्वराय नमः ॥

Om Sham Shankaraay Lokranjanaay Nikhileshwaraay Namah

मंत्र जप के पश्चात् नीचे दिए स्तोत्र का पाठ करें। दो सप्ताह तक इस क्रम को नित्य करें, फिर यंत्र को पूजा स्थान में स्थापित कर अन्य सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

साधना सामग्री पैकेट – 360/-

मनो बुद्ध्यहंकार चित्तानि नाहं,
न च श्रोत्रजिह्वे न च घ्राणनेत्रे।
न च व्योम भूमिर्न तेजो न वायुः,
निखिल सत्य रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं ॥१॥

न च प्राणसंज्ञो न वै पंचवायु,
र्न वा सप्तधातुर्न वा पंचकोशः।
न वाक् पाणिपादं न चोपस्थपायू,
निखिल सत्य रूपः ... ॥२॥

न मे द्वेष रागौ न मे लोभ मोहौ,
मदो नैव मे नैव मात्सर्य भावः।
न धर्मो न चार्थो न कामो न मोक्षः,
निखिल सत्य रूपः ... ॥३॥

न पुण्यं न पापं न सौख्यं न दुःखं,
न मंत्रो न तीर्थं न वेदा न यज्ञः।
अहं भोजनं नैव भोज्यं न भोक्ता,
निखिल सत्य रूपः ... ॥४॥

न मृत्युर्न शंका न मे जाति भेदः,
पिता नैव मे नैव माता च जन्म।
न बन्धुर्न मित्रं गुरुर्नैव शिष्यः,
निखिल सत्य रूपः ... ॥५॥

अहं निर्विकल्पो निराकार रूपो,
विभुत्वाच्च सर्वत्र सर्वेन्द्रियाणाम्।
न चासंगतं नैव मुक्तिर्न मेयं,
निखिल सत्य रूपः ... ॥६॥

21.4.99 या किसी 21 तारीख को

गुरु हृदय स्थापन साधना

गुरु जन्म दिवस पर सम्पन्न की जाने वाली इस साधना के महत्व के बारे में पत्रिका के मार्च-९९ अंक में विवेचन किया गया था, उसी साधना की पूजन विधि प्रस्तुत है।

प्रातः स्नानादि नित्य क्रिया से निवृत्त होकर पूजा स्थान में शुद्ध धोती पहन कर आसन पर बैठें। सामने चौकी पर श्वेत या पीत वस्त्र बिछा कर सुन्दर गुरु चित्र स्थापित करें। अपने समीप ही साधना सामग्री – '**गुरु स्थापन यंत्र**', '**चेतना माला**', '**रुद्राक्ष**' एवं '**गुरु गुटिका**' तथा पूजन की अन्य सामग्री रखें। गुरु चित्र के सामने किसी थाली में कुंकुम से स्वस्तिक बनाकर उस पर '**गुरु स्थापन यंत्र**' को स्थापित करें। यंत्र के दाहिनी ओर गुटिका तथा बाईं ओर रुद्राक्ष को रख कर धूप, दीप प्रज्वलित करें। पहले पवित्रीकरण और आचमन करके दोनों हाथ जोड़ कर गुरु प्रार्थना करें।

प्रार्थना

ॐ सर्व मंगल मांगल्यं चैतन्यं वरदं शुभम् ।
नारायणम् नमस्कृत्य गुरु पूजां समाचरेत् ॥

अपने सामने किसी पात्र में थोड़ा जल लेकर उसमें कुंकुम, अक्षत, और पुष्प की पंखुड़ियां मिला लें, उसके बाद उसमें सभी तीर्थों का आवाहन करें –

ॐ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति ।
नर्मदे सिन्धु कावेरि जलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु ॥

भूतापसारण

बाएं हाथ में अक्षत लेकर दाएं हाथ से ढक दें तथा निम्न मंत्र बोलते हुए सभी दिशाओं में अक्षत छिड़कें –

अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भुवि संस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥

इसके बाद '**सर्व विघ्नान् उत्सारय – हूं फट् स्वाहा**' का उच्चारण करते हुए दाएं पैर की एड़ी से ३ बार भूमि पर आघात करें। इसके बाद समस्त गुरुओं को हाथ जोड़कर प्रणाम करें –

ॐ ऐं गुरुभ्यो नमः ।
ॐ ऐं परम गुरुभ्यो नमः ।
ॐ ऐं परात्पर गुरुभ्यो नमः ।
ॐ ऐं पारमेष्ठि गुरुभ्यो नमः ।

गुरु पंक्ति को प्रणाम करने के बाद अपने हृदय में गुरु तत्व को स्थापित करें –

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः प्राणा इह प्राणाः ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः जीव इह स्थितः ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः सर्वेन्द्रियाणि ।

ॐ आं ह्रीं क्रों यं रं लं वं शं षं सं हौं हंसः श्री निखिलेश्वरानन्द देवतायाः वाङ्मनश्च चक्षु श्रोत्र जिह्वा घ्राण प्राणा इहागत्य सुखं चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा ।

अब अपने को गुरुत्व चेतना से सम्पन्न अनुभव करें।

मातृका न्यास (विनियोग)

दाहिने हाथ में जल लेकर विनियोग करें –

ॐ अस्य मातृका मंत्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, गायत्री छन्दः, मातृका सरस्वती देवता, ह्रीं बीजानि, स्वरा शक्तयः अव्यक्तं कीलकं सर्वाभीष्ट सिद्धये मातृका न्यासे विनियोगः ।

इसके बाद निम्न मंत्र का उच्चारण करते हुए विभिन्न अंगों को दाएं हाथ से स्पर्श करें –

ॐ ब्रह्मणे ऋषये नमः	– सिर
ॐ गायत्रीच्छन्दसे नमः	– हृदय
ॐ मातृका सरस्वत्यै देवतायै नमः	– मुख
ॐ हलभ्यो बीजेभ्यो नमः	– मूलाधार
ॐ स्वरेभ्यः शक्तिभ्यो नमः	– दोनों पैर
ॐ अव्यक्त कीलकाय नमः	– सभी अंग

गुरुदेव का दोनों हाथ जोड़कर आवाहन करें –

आवाहयामि रक्षार्थं पूजार्थं च मम क्रतो: ।
इहागत्य गृहाण त्वं पूजां वासं च रक्षये ॥

श्री गुरुदेवाय नम: आवाहनं समर्पयामि ।

आसन

पुष्प का आसन दें –

ॐ सर्वभूतान्तरस्थाय सर्वभूतान्तरात्मने ।
कल्पयाम्युपवेशार्थमासनं ते नमो नम: ।

इदं पुष्पासनं समर्पयामि नम: ।

पाद्यं

दो आचमनी जल चढ़ावें –

यत् भक्तिलेश सम्पर्कात् परमानन्द सम्प्लव: ।
तस्मै ते परमेशान पाद्यं शुद्धाय कल्पये ॥

इदं पाद्यं समर्पयामि नम: ।

अर्घ्य

दुर्वाक्षत समायुक्तं विल्व पत्रं तथा परम् ।
शोभनं शंख पात्रस्थं गृहाणार्घ्यं महेश्वर: ॥

अर्घ्यं समर्पयामि नम: ।

आचमन

मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्व पापहरं शुभम् ।
गृहाणाचमनीयं त्वं मया भक्त्या निवेदितम् ॥

आचमनीयं समर्पयामि नम: ।

स्नान

इदं सुशीतलं वारि स्वच्छं शुद्धं मनोहरम् ।
स्नानार्थं ते मया भक्त्या कल्पितं प्रतिगृह्यताम् ॥

स्नानं समर्पयामि नम: ।

यंत्र के साथ रुद्राक्ष एवं गुरु गुटिका का भी पूजन करें ।

वस्त्र

मायाचित्र पटाच्छन्नं निजगुह्योरु तेजसे ।
मम श्रद्धा भक्ति वासं युग्मं गृह्यताम् ॥

वस्त्रोपवस्त्रं समर्पयामि नम: ।

तिलक

महावाक्योत्थ विज्ञानं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥

चन्दनं समर्पयामि नम: ।

सकुंकुमं अक्षतान् समर्पयामि नम: ।

चन्दन एवं अक्षत चढ़ायें ।

पुष्पमाला

तुरीयं वन सम्पन्नं नानागुण मनोहरम् ।
आनन्द सौरभं पुष्पं गृह्यतामिदमुत्तमम् ॥

पुष्पमालां समर्पयामि नम: ।

धूप, दीप

धूपम् आघ्रापयामि नम: । दीपं दर्शयामि नम: ।

नैवेद्यं

शर्कराघृत संयुक्तं मधुरं स्वादुचोत्तमं ।
उपहार समायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥

ऋतु फलानि समर्पयामि नम: ।

शुद्ध जल से पांच बार आचमन करायें ।

इसके बाद मुख शुद्धि के लिए पान समर्पित करें –

ताम्बूलं समर्पयामि नम: ।

इसके बाद **चैतन्य माला** से निम्न मंत्र की एक माला जप सम्पन्न करें –

॥ ॐ ह्रीं ऐं परात्पराय परमहंसाय निखिलेश्वराय धीमहि ऐं ह्रीं ॐ नम: ॥

Om Hreem Ayeim Parantparaay Paramhansaay Nikhileshwaraay Dheemahi Ayeim Hreem Om Namah

फिर गुरु आरती सम्पन्न करके पुष्पांजलि समर्पित करें। यह ३ माह की साधना है, इसमें नित्य उपरोक्त मंत्र की एक माला जप करना अनिवार्य है, नित्य पूजन सम्पन्न करने की आवश्यकता नहीं है। उपरोक्त पूजन को हर माह की २१ तारीख को दुहरा लें तथा प्रसाद घर में सभी को वितरित करें। ३ माह बाद सभी सामग्री को जल में विसर्जित कर दें।

इस साधना द्वारा शनै: शनै: साधक के अन्दर गुरुदेव की समस्त शक्तियां स्वत: ही उतरने लगती हैं, आवश्यकता है तो धैर्य और संयम की।

यदि साधक किसी कारणवश इस साधना को २१ अप्रैल को प्रारम्भ नहीं कर पाएं, तो किसी भी माह की २१ तारीख को प्रारम्भ कर सकते हैं। ऐसा करने में कोई न्यूनता नहीं क्योंकि साधकों के लिए प्रत्येक २१ तारीख सद्गुरुदेव का जन्म दिवस ही है। यदि साधना सामग्री नहीं मंगा सके हैं, तो किन्हीं दो व्यक्तियों को पत्रिका की सदस्यता धारण करवा कर इस सामग्री को नि:शुल्क प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए आप अपने किन्हीं दो परिचितों के डाक पते जोधपुर कार्यालय भेज कर उन्हें पत्रिका का सदस्य बना दें। आपको २३८/- की वी.पी. द्वारा साधना सामग्री भेज दी जाएगी तथा आपकी ओर से आपके परिचितों को वर्ष पर्यन्त पत्रिका भेजी जाती रहेगी।

(सन्दर्भ: मंत्र-तंत्र-यंत्र विज्ञान, मार्च-९९, पृष्ठ:६२)

27.6.99 या चतुर्दशी

गुरु वशिष्ठ प्रणीत

गुरु अनन्त सिद्धि साधना

जिससे समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती ही हैं।

प्रजापिता ब्रह्मा को जहां सृष्टि का निर्माता कहा गया है, भगवान शिव को जहां संहारक कहा गया है, वहीं भगवान विष्णु को जगत का पालनकर्ता कहा गया है। इन तीनों आदि देवों में भगवान विष्णु ही ऐसे देव हैं, जिनके इंगित से संसार की गतिविधियों का संचालन होता है। 'गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णुः' – शिष्य के लिए तो गुरु ही विष्णु भी होते हैं। शिष्य का अर्थ है समर्पण, परन्तु शिष्य के नमन होने के पश्चात् यह गुरु का कर्तव्य होता है, कि वह शिष्य के सुख, दुःख में भागीदार बने, अपनी तपस्यांश के माध्यम से वह शिष्य का कल्याण करे, अपने ज्ञान द्वारा उसके जीवन में आने वाली बाधाओं से उसकी रक्षा करे, उसका एक कुशल अभिभावक की तरह पालन-पोषण कहा गया है, और उनके इसी रूप के कारण गुरु को विष्णु कहा गया है।

गुरु भले ही शिष्य से सैकड़ों किलोमीटर दूर बैठे हों, परन्तु उनके मानस में प्रतिक्षण शिष्य का चिन्तन बना रहता है। चौबीस घण्टे में शिष्य भले ही एक बार भी गुरु को स्मरण न करे, परन्तु ***सद्गुरु तो वही होते हैं, जिनका शिष्य कल्याण से पृथक कोई चिन्तन नहीं होता।*** और यह शिष्य का सौभाग्य होता है, कि उसे जीवन में ऐसे गुरु प्राप्त हों। यह गुरु का पालनहार अर्थात विष्णु स्वरूप है।

भगवान विष्णु आदिदेव हैं और अनन्त देव भी हैं, जिन्हें समय की सीमा में नहीं बांधा जा सकता, उस अनन्त रूपी सद्गुरु के विष्णु स्वरूप के तेज का एक अंश भी प्राप्त हो जाए, तो फिर जीवन में कोई न्यूनता रह जाय – यह असम्भव

जीवन जीना है तो पूर्ण सुख, सम्मान, यश, प्रतिष्ठा, वैभव के साथ जीना ही पूर्णता है। सद्गुरु एक कुशल अभिभावक की तरह अपने विष्णु स्वरूप में अपने प्रत्येक उस साधक का लालन-पालन करते हैं, जो यह साधना सम्पन्न करता है।

है। श्री विष्णु आकाश तत्व के अधिष्ठाता हैं, आकाश का तात्पर्य है – विशालता, महानता, ऊंचाई और ये सब मन की स्थितियां ही तो हैं–

कौन अपने जीवन में आगे नहीं बढ़ना चाहता?

कौन अनन्त सिद्धियां प्राप्त नहीं करना चाहता?

उसके लिए व्यक्ति में विष्णुत्व का होना प्रबल आवश्यक है, क्योंकि बिना विष्णुत्व के नेतृत्व की क्षमता आ पाना सम्भव नहीं है। जिसमें विष्णुत्व का उद्भव नहीं है, वह तो केवल आंख मूंद कर एक निश्चित मार्ग पर ही चल सकता है, उसमें लीक से हट कर एक नवीन पद्धति से कार्य करने की क्षमता, हौसला नहीं होता, ऐसा व्यक्ति तो पूरा जीवन भर घिसटता ही रहेगा।

गुरु के विष्णु स्वरूप की साधना क्यों?

जिस प्रकार विष्णु को अनन्त कहा गया है, उसी प्रकार गुरु तत्व का भी कोई अन्त नहीं है। यह साधना उसी अनन्त की साधना है, जो साधक के शरीर में ही नहीं, मन में आए दोषों का भी निराकरण कर उसमें तेज, कर्मशीलता का

॥ नारायणाय तुभ्यं नमामि ॥
॥ जगदीश्वराय तुभ्यं नमामि ॥

उद्भव कर, साधक को विशालता की ओर, ऊंचाई की ओर ले जाती है, सूक्ष्म से विराट् की ओर, धरती से आकाश की ओर उठने की साधना 'गुरु अनन्त सिद्धि साधना' ही तो है। इस साधना से साधक को निम्न उपलब्धियां प्राप्त होती हैं –

– इस साधना द्वारा **साधक में नेतृत्व के गुण आ जाते हैं, उसमें हीन भावना समाप्त हो जाती है, साधक जहां भी जाता है, उसे यश, मान, पद, प्रतिष्ठा, सम्मान प्राप्त होता है। उसकी वाणी में ओजस्विता आ जाती है**, जिससे लोग उसका कहना मानने लगते हैं। जिस कार्य में वह हाथ डालता है, उसमें हर कोई सहयोग देने की भावना रखते हैं, और यही तो सफल नेतृत्व के लक्षण हैं।

– **जहां विष्णु हों, वहां लक्ष्मी स्वतः ही चली आती है।** विष्णुत्व से सम्पन्न साधक के जीवन में अर्थ का अभाव तो रहता ही नहीं है। उसे पूर्ण वैभव युक्त जीवन प्राप्त होता है, जहां किसी प्रकार की कोई कमी नहीं होती – **धन, धान्य, वाहन, भवन, कीर्ति, आयु, पुत्र, पौत्र हर दृष्टि से उसका जीवन पूर्ण होता है।**

– साधक के **व्यक्तित्व में एक अद्वितीय मोहिनी आकर्षण व्याप्त हो जाता है।** पुराणों में कथा आती है कि जब समुद्र मंथन के अंत में अमृत कलश निकला, तो देव और असुरों में हलचल मच गई और हुआ यह कि कलश दानवों के हाथों में पहुंच गया। तब विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर दानवों से वह कलश वापस प्राप्त किया था। इस साधना के उपरान्त यदि साधक है, तो उसके अन्दर पुरुषोचित सौन्दर्य की वृद्धि होती है और यदि स्त्री है तो उसके अन्दर अपूर्व लावण्य व्याप्त हो जाता है।

– इस साधना को करने के बाद साधक में सात्विक विचारों का उदय होता है। वैष्णव वस्तुतः सत्व प्रधान पद्धति ही है, **इस साधना के प्रभाव से घर में सात्विक वातावरण का निर्माण होता है,** पुत्र-पुत्रियों में सदाचार एवं शुद्ध विचारों का उदय होता है। वे सुसंस्कारों से युक्त होकर श्रेष्ठ कार्यों में संलग्न होते हैं, जिससे अभिभावकों की यशवृद्धि होती है। पत्नी में पातिव्रत्य और कुटुम्ब धर्म के प्रति चेतना प्रबल होती है, उसमें सन्तान के कल्याण के प्रति जागरूकता बढ़ती है। **ऐसे घर में देवताओं का वास होने लगता है।**

– साधनाओं का अर्थ यह नहीं है, कि समस्याएं न आएं, बाधाएं न आएं, अड़चनें न आएं। बाधाएं तो आएंगी, विपत्तियां भी आएंगी, जो विधि का लेखा है वह तो होगा ही परन्तु साधना का अर्थ यह है, कि हम उन समस्याओं से जीत सकें, उनका प्रभाव हम पर न पड़े। साधक जीवन में पग-पग पर बाधाएं आती हैं परन्तु श्री गुरुदेव विष्णु रूप में शिष्य की हर समस्याओं पर विजय प्राप्त करने का मार्ग साधक के लिए पहले से ही प्रशस्त कर देते हैं। **एक श्रेष्ठ पिता की तरह वे अपने शिष्य का लालन-पालन करते हैं।**

– नित्य सांसारिक व्यवहार करने से हमें तीन प्रकार के दोष व्याप्त होते हैं – **१. वाणी दोष** : हमें नित्य बोलचाल में और व्यवहार में असत्य उच्चारण करना पड़ता है, इस झूठ की वजह से वाणी दोष व्याप्त होता है। **२. मन दोष** : हम चाहे अनचाहे किसी के प्रति घृणा, क्रोध या दुर्भावना रखते हैं, उससे मन दोष होता है, **३. मुख दोष** : आज के युग में तो घर के बाहर कई स्थानों पर भोजन करना होता है, जहां शुद्धता पवित्रता का ध्यान नहीं होता, ऐसी स्थिति में मुख दोष व्याप्त होता है। **इन तीनों दोषों का शास्त्रों में एक मात्र गुरु विष्णु**

अथवा अनन्त स्वरूप साधना **ही उपाय है** और यह भी कहा गया है, कि वर्ष में एक बार इस दिन इस साधना को सम्पन्न करने से सभी दोष समाप्त हो जाते हैं। इसके फलस्वरूप व्यक्ति में शुद्धता, चैतन्यता और तेजस्विता आ जाती है और वह जीवन में सफलता की ओर अग्रसर होने लगता है।

साधना विधि

साधक को चाहिए कि **27.6.99 अथवा किसी भी चतुर्दशी** के दिन (यह साधना सूर्योदय के पूर्व अथवा सूर्यास्त के बाद नहीं हो सकती है) स्नान आदि कर श्वेत आसन बिछा कर पूर्व की ओर मुंह कर बैठ जाए और सामने '**गुरुत्व अनंत सिद्धि यंत्र**' को स्थापित कर दे।

'**ॐ श्रीं अनंताय नमः**' मंत्र बोलते हुए यंत्र का संक्षिप्त पूजन करें। संक्षिप्त पूजा में यंत्र को पहले जल से स्नान करा लें, और फिर दूध से, दही, घृत से, शहद से, शक्कर से व पुनः शुद्ध जल से स्नान कराएं। यंत्र को पोंछ कर दूसरे पात्र में चन्दन से 'ऐं' बीज मंत्र लिखकर उस पर यंत्र को स्थापित करें। यंत्र पर चन्दन का तिलक करें। यंत्र पर चन्दन का तिलक लगाएं और एक सफेद पुष्प अर्पित करें। इसके बाद साधक शुद्ध घी का दीपक व अगरबत्ती लगाए।

इसके बाद साधक को चाहिए, कि वह पहले से ही मंगा कर रखे गए '**ब्रह्मवर्चस्यपूत यज्ञोपवीत**' को यंत्र के सामने रख दे। यह यज्ञोपवीत आपको कार्यालय से साधना सामग्री के साथ प्राप्त होगा। इस यज्ञोपवीत को यंत्र के सामने स्थापित कर दें और यज्ञोपवीत में आवाहन करें कि यज्ञोपवीत के प्रत्येक धागे में सद्गुरुदेव अनन्त स्वरूप में स्थापित हों।

इसके बाद यज्ञोपवीत को खोलकर दोनों हाथों में लेकर उसे आकाश की ओर ऊपर उठाएं और '**ॐ सूर्याय नमः**' मंत्र द्वारा उस यज्ञोपवीत में सूर्य की तेजस्विता का आवाहन करें, और मन में यह चिन्तन करें कि *इस यज्ञोपवीत के प्रत्येक धागे में गुरुदेव सूर्य की पूर्ण तेजस्विता के साथ स्थापित हो रहे हैं। सद्गुरुदेव मुझे पूर्ण तेजस्विता प्रदान करने में समर्थ हैं, मेरी हर प्रकार से लालन पालन करने में सक्षम हैं। अपने कोटि-कोटि सूर्य मण्डलों की रश्मियों द्वारा मेरे इस जीवन के व पूर्व जीवन के पापों के साथ जो भी तीन प्रकार के दोष व्याप्त हुए हैं, उनको खण्ड-खण्ड कर रहे हैं और मुझे पूर्ण चैतन्य एवं ओजस्वी बना रहे हैं।*

ऐसी भावना मन में रखते हुए यज्ञोपवीत को नीचे उतार लें और फिर उसे समेट कर यंत्र के सामने स्थापित कर दें। उस यज्ञोपवीत को गुरुदेव का प्रतीक मानकर उसकी संक्षिप्त पूजा करें, उन्हें नैवेद्य अर्पित करें और हाथ जोड़कर आजीवन कृपा बनाए रखने की प्रार्थना करें। **यदि कोई विशेष इच्छा हो, तो उसका भी उच्चारण करें।**

इसके उपरान्त हाथ जोड़कर विष्णु रूप में भगवान निखिल का सात्विक ध्यान करें –

ध्येयः सदा मंगल मूर्तिरूपः,
नारायणः सरसिजासन सन्नि विष्टः।
केयूरवान् कनककुण्डलवान किरीटी,
हारी हिरण्मय वपुधृत शंखचक्रः॥

फिर 'शालिग्राम' को यंत्र के ऊपर रखें तथा उसपर निम्न मंत्रों को बोलते हुए चन्दन एवं अक्षत चढ़ाएं –

ॐ आधार शक्त्यै नमः।	*ॐ कूर्माय नमः।*
ॐ पृथिव्यै नमः।	*ॐ मणिद्वीपाय नमः।*
ॐ पारिजाताय नमः।	*ॐ कल्पवृक्षाय नमः।*
ॐ रत्नसिंहासनाय नमः।	*ॐ मुनिभ्यो नमः।*
ॐ देवेभ्यो नमः।	*ॐ धर्माय नमः।*
ॐ ज्ञानाय नमः।	*ॐ ऐश्वर्याय नमः।*
ॐ वैराग्याय नमः।	*ॐ अनन्ताय नमः।*
ॐ पद्माय नमः।	*ॐ आनन्दकन्दाय नमः।*
ॐ सत्वाय नमः।	*ॐ परमेश्वराय नमः।*
ॐ सिद्धाश्रमाय नमः।	*ॐ परम तत्वाय नमः।*
ॐ नारायणाय नमः।	*ॐ गुरुदेवाय नमः।*
ॐ परात्पराय नमः।	*ॐ सच्चिदानन्दाय नमः।*
ॐ निखिलेश्वराय नमः।	*ॐ महापद्माय नमः।*
ॐ सिद्धेश्वराय नमः।	

इसके बाद साधक निम्न मंत्र की **वैजयन्ती माला** से ५ माला सम्पन्न करें –

॥ ॐ नमो नारायणाय अनन्ताय विष्णवे प्रभविष्णवे श्रीं ह्रीं ॐ नमः ॥

Om Namo Naaraayannaay Annntnay Vishnnave Prabhvishnnave Shreem Hreem Om Namah

मंत्र जप के पश्चात् गुरु आरती सम्पन्न करें और यज्ञोपवीत को गले में धारण कर लें। जिस जल से यंत्र का स्नान सम्पन्न किया गया था, उसे पंचामृत रूप में ग्रहण करें। यह साधना अत्यन्त प्रभावयुक्त है, इससे साधक की भौतिक जीवन की मनोकामनाएं अवश्य पूर्ण होती हैं। साधना समाप्ति पर यंत्र व माला जल में विसर्जित करें तथा विष्णु के प्रतीक रूप में शालिग्राम को पूजा स्थान में स्थापित करें।

आप अपने किन्हीं दो मित्रों को (जो पत्रिका सदस्य नहीं हैं) पत्रिका का सदस्य बनाएं तथा पृष्ठ ५२ के कार्ड क्र. ६ पर अपने उन दोनों मित्रों के पूर्ण डाक पते लिख कर भेजें। कार्ड मिलने पर आपको ३२८/- की वी.पी. द्वारा आपको साधना सामग्री भेज दी जाएगी तथा दोनों मित्रों को एक वर्ष तक नियमित रूप से पत्रिका भेजी जाएगी।

प्रिय मित्रो, इस सद्गुरु साधना संग्रह में कोई भी साधना छोटी और बड़ी नहीं है, प्रत्येक साधना अपने आप में ब्रह्माण्ड के सर्वश्रेस्ठ एवं अदुतीय साधना है ।

बस जरुरत है आपके....

विश्वास

श्रद्धा

समर्पण

की.....

त्वदीयं वस्तु निखिलं तुभ्यमेव समर्पये